पेरिस का एक चौराहा

यूरोप के स्कैच

(गद्यचित्र)

लेखक :

रामकुमार

१९५७

आत्माराम एण्ड संस

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

काश्मीरी गेट

दिल्ली-६

भूमिका

बात बहुत पुरानी है। शिमला मे जाडो के समय जब हमारे स्कूल तीन महीनो के लिए बन्द हो जाते थे और बहुत से सहपाठी बर्फ से बचने के लिए दिल्ली चले जाते थे, तब सारा-सारा दिन ताले लगी बन्द कोठियो के उजाड बागो मे खानसामो, ग्वालो और कैथू के दुकानदारो के लडको के साथ आवारो की तरह घूमा करता था। पास ही के एक मकान मे एक पण्डित रहते थे। जब कभी सडक पर वह मन्दिर जाते दिखाई दे जाते तो झट से अपनी छोटी-सी हथेली उनकी ओर बढाकर कहता था, "पडित जी, मै विलायत कब जाऊँगा? विलायत जाने की रेखा हाथ मे है या नही?" मेरी समझ मे नही आता कि मेरे हाथ मे विदेश-यात्रा की रेखा किस प्रकार आ गई। मुझे छत पर बने अपने छोटे से कमरे की दीवारो से बहुत मोह है और यात्रा का नाम सुनते ही बुखार-सा आ जाता है, लेकिन फिर भी यात्रा का सिलसिला बन ही जाता है।

चित्रकला का अध्ययन करने के लिए १९५०-५१ मे मै पेरिस मे रहा। लेकिन जब कभी आर्ट स्कूल की छुट्टियाँ होती या पेरिस मे मेरी तबियत ऊब जाती और मेरे पास पैसे होते तो कही दूर निकल जाता था। नये-नये शहर, नयी-नयी भाषाये नये-नये लोग...... और मै अकेला निरुद्देश्य यात्री की भाँति सुबह से शाम तक सडको, गलियो, कैफो और कला-सग्रहालयो के चक्कर लगाया करता। इटली, डेनमार्क, जर्मनी, पोलैण्ड, लन्दन, चेकोस्लोवाकिया आदि देशो मे इसी प्रकार घूमा। नये मित्र बने और फिर सदा के लिए गुम हो गये। कुछ महान् बुद्धिजीवियो से भेंट हुई और उनकी बातो मे मैने अपनी अनुभूतियो को गहरा किया, कही कोई महान् कलाकृति देखी तो उसकी रेखाओ और रगो मे मैने अपने व्यक्तित्व को निखारने की कोशिश की। यही सब इन रिर्पोताजो मे देने का प्रयत्न किया है।

दूसरी बार १९५५ में फिर यूरोप जाने का अवसर मिला। प्राग में मेरे चित्रो की प्रदर्शनी थी। इस बार चार महीनो की यात्रा में अफगानिस्तान, सोवियत सघ, फिनलैण्ड आस्ट्रिया, हगेरी, पेरिस में रहा। अन्तिम दो लेख इस यात्रा में लिखे गये।

लेख मेरी यात्रा की स्मृतियो से मुझे उबार लेते है, इसलिए लिखता हूँ। यूरोप की दुनिया से इतनी दूर कभी-कभी खाली क्षणो में मेरे हृदय मे कितनी ही स्मृतियाँ जब मकडी के जालो की भाति मुझे उलझाने लगती है तो उससे बाहर निकलने के लिये मुझे कलम का सहारा लेना पडता है।

यही इन स्कैचो की भूमिका है।

नई दिल्ली। **रामकुमार**

विषय-सूची

यूरोप के स्कैच

१. जहाज में

जहाज की जिन्दगी वास्तव में बड़ी दिलचस्प और मनोरंजक होती है। यद्यपि बम्बई में जहाज में बैठकर जितने चक्कर आये और जितना मन घबराया उसका वर्णन करके जहाज के सुख और आनन्द के महत्त्व को कम करना है. अपनी पृथ्वी और अपने देश से कोसों दूर अपने मित्रों और परिवार वालों से अलग एक नई दुनिया में आना सचमुच ही तनिक कठिन है। ज्यों-ज्यों बम्बई की अट्टालिकाएँ, ताज होटल आदि दूर होते जाते थे, तब कितने ही अपनी छोटी सी दुनिया में विश्वास रखने वाले व्यक्ति के हृदय में भी एक बार अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम, श्रद्धा और विछोह वेदना की भावना उमड़े बिना नहीं रह सकती थी। दिल्ली छोड़ते समय इतना दुःख नहीं हुआ था जितना बम्बई छोड़ते समय हुआ। और फिर एक नई जिन्दगी प्रारम्भ हुई।...

विभिन्न राष्ट्रों के लोग अपनी-अपनी भाषा में बोलते हैं। नये-नये परिचय और नये-नये साथी लोग अपने-अपने झुंड बनाकर डेक पर बैठे रहते हैं, अपने केबिन में रात को सोने के लिए भी जाना अच्छा नहीं लगता। डेक पर चारों ओर केवल समुद्र ही दिखाई देता है। प्रातः से लेकर रात्रि तक समुद्र के विभिन्न स्वरूप देखने को मिलते हैं जो एक-दूसरे से बढ़कर होते हैं। प्रातःकाल सूर्य निकलने से पूर्व आकाश में जमा हुए रंग-बिरंगे बादलों की परछाईं, फिर सूर्य की श्वेत और कभी पीली किरणों के चमकने से समुद्र का नीला पानी चाँदी की चादर-सा बन जाता है, और रात को तारों से भरे आकाश में चाँद की छाया जब पानी पर पड़ती है तो उछलती-कूदती लहरों के कारण चाँदनी झिलमिलाते मोतियों में बँटती-सी जाती है और फिर डेक पर आराम-कुर्सी पर अधलेटे आधी-आधी रात तक साँय-साँय करते हवा के झोंकों के बीच रात्रि की निस्तब्धता को महसूस करता हूँ और एक-बार तो अतीत की सारी पुरानी स्मृतियाँ और भविष्य के सुनहरे स्वप्न

आँखों के सामने घूम जाते हैं। पास ही 'बार' में विदेशी संगीत बजता है और उसी के साथ-साथ नाचने वालों की टोलियाँ टप-टप करके इधर से उधर घूमती हैं, हँसी के कहकहे गूँजते हैं और पेग पर पेग चढ़ा करते हैं। फिर अकेले में डेक के किसी कोने पर तारों की छाया में अंधकार के आवरण में लिपटे हुए किसी यूरोपीय युवक-युवती को परस्पर बातें करता हुआ देखता हूँ और दूसरे कोने पर जिन्दगी के सन्ध्या-काल में कदम रखती हुई किसी अधेड़ अवस्था वाली स्त्री को डेकचेयर पर आराम से पाँव फैलाकर लेटी हुई सूनी दृष्टि से अँधेरे सागर की ओर ताकते हुए देखता हूँ, जहाँ आकाश और समुद्र दोनों में कोई अन्तर नहीं जान पड़ता।

और फिर अपने समय का पूर्ण रूप से सदुपयोग करने वाले व्यक्तियों की भी कमी नहीं है। किताबें लगभग सब यात्रियों की साथिनें हैं, किसी के हाथ में कोई जासूसी उपन्यास, किसी के हाथ में एटलस और किसी के हाथ में दूसरी भाषाओं को सीखने की पुस्तकें दिखाई देती हैं। स्त्रियाँ अपना बुनना-काढ़ना सदा अपने साथ रखती हैं। यात्रियों में जो एक प्रकार की मैत्री और एक-दूसरे के प्रति सहृदयता हो जाती है, उसका आभास प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है। एक-दूसरे का अपने देश की बातें बताना, पत्र, फोटो, किताबें दिखलाना साधारण-सी बात है।

मनोरंजन के साधनों की भी कमी नहीं है। कभी जहाज के अधिकारी यात्रियों के मन-बहलाव के लिए कोई कार्यक्रम बनाते हैं और कभी यात्री स्वयं ही मिलकर कोई छोटा-मोटा उत्सव-सा कर बैठते हैं। दूसरे-तीसरे दिन रात को सिनेमा होता है, परन्तु फिल्में प्रायः वर्षों पुरानी और विदेशी भाषाओं में होती हैं। फैन्सी-ड्रेस एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उत्सव होता है जब कुछ यात्री भाँति-भाँति के भेष बनाकर आते हैं, कोई नाचता है तो कोई अपने चुटकुलों से दूसरों को हँसाता है और इस प्रकार डेढ़ घण्टे के कार्यक्रम के पश्चात् निर्णायक पारितोषिक देते हैं। एक सायँकाल मेरे चित्रों की प्रदर्शनी संगीत के कमरे में हुई जिसमें जहाज के लगभग चार सौ यात्रियों ने भाग लिया। एक बार तो मैंने ऐसा अनुभव किया कि दिल्ली में होने वाली प्रदर्शनियों में लोग इतनी उत्सुकता या लगन नहीं दिखाते जितनी कि इन यात्रियों ने दिखलाई। कुछ लोगों ने तो मुझसे कितने ही प्रकार के प्रश्न किये। अधिक दिलचस्पी लेने वालों ने अन्त में मेरे पेरिस में जाकर अधिक शिक्षा प्राप्त करने के विचार पर प्रसन्नता प्रकट की। और सबसे अधिक महत्त्व की जो बात मुझे लगी वह है इन यात्रियों का प्रोग्राम। बूढ़े से

बूढ़े व्यक्ति का भी अपना काम करने का कार्यक्रम बना होता है।

इतना सब कुछ होते हुए भी चारों ओर चौबीसों घण्टे पानी को देखकर एक इंच भूमि को देखने के लिए भी आँखें तरसती रह जाती हैं। विशेषकर बम्बई से लेकर अदन तक लगभग एक सप्ताह पृथ्वी को एक नजर देखने के लिए भी आँखें तड़पती रहीं। और प्रातःकाल ही जब सूर्य की प्रथम किरण समुद्र की लहरों पर नाची तब अदन शहर दिखाई देने लगा। और मेरा धैर्य अपना सारा बाँध छोड़कर बह निकला। कह नहीं सकता कि उस क्षण मुझे कितनी प्रसन्नता हुई और मैंने मन ही मन उस क्षण की कल्पना की जब डेढ़ वर्ष पश्चात् मैं फिर भारत की भूमि को देखूँगा और उसका स्पर्श कर सकूँगा।

लगभग आठ घण्टों तक अदन की सैर करने का मौका मिला। पहाड़ों की गोद में बसा हुआ एक छोटा-सा शहर जहाँ मुसलमान, अरब, अंग्रेज, यहूदी और हबशी जातियाँ, बसती हैं। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के भार से दबे हुए लोगों के चेहरों पर उनकी गरीबी, अनपढ़ता और शोषण की कहानी स्पष्ट रूप में लिखी हुई है। पहाड़ के एक ओर अमीर, धनाढ्य और अंग्रेजों के बसने के साफ-सुथरे मकान, गिरजे, स्कूल और बम्बई के पारसियों की लम्बी-चौड़ी दुकानें, काली कोलतार की पक्की सड़कें हैं और दूसरी ओर आम लोगों की आबादी रहती है। हम पाँच आदमियों ने टैक्सी करके बाजार का चक्कर लगाया। दुकानों पर सामान इतना सस्ता था कि अपने बटुए खाली कर देने को मन ललचाया। सिगरेटों पर टैक्स न होने के कारण भारत की अपेक्षा उनकी कीमतें चार गुणा कम थीं, रेशमी कमीजें ४) में बिक रही थीं। सात दिनों तक जहाज में कैद रहने के पश्चात् एक बार फिर सड़कों पर घूमना बहुत अजीब-सा लगा और फिर हम पैदल ही घूमते रहे। इतने दिनों तक इटेलियन भोजन से ऊबकर हमने भारतीय उपहार-गृह की तलाश की और अंत में हताश होकर फिर यूरोपीय भोजन ही खाया। अदन की सैर सचमुच स्वर्ग से किसी प्रकार कम नहीं लगी और अन्त में फिर जहाज पर आकर सवार हो गये तब भी सामान बेचने वालों की टोलियाँ जहाज के नीचे नावों में बैठकर सामान बेचती रहीं और किसी यात्री से सौदा पट जाने पर एक थैली में रस्सी के द्वारा वह सामान ऊपर भेज दिया जाता था और यात्री उसमें उतनी ही कीमत रखकर नीचे थैला वापस भेज देता था। ये सौदागर पौण्ड, रुपये, फ्रैंक आदि सिक्के स्वीकार कर लेते थे। जब जहाज चला तो हमने अदन से विदा ली। उसकी रोशनियाँ धीरे-

धीरे पीछे छूटती रही और फिर रात के अँधेरे में केवल आकाश के तारे ही शेष रह गये।

परन्तु अदन के पश्चात् समुद्र उतना बुरा नहीं लगा, क्योंकि बीच-बीच में छोटी-मोटी पहाड़ियाँ समुद्र की सतह से अपना सिर उठाये दिखाई देती रहीं जो सागर के नीरसपन में एक प्रकार की नवीनता भर देती थीं। परन्तु शीघ्र ही लाल सागर अपनी छाती पर हमारे जहाज को चलते हुए देखकर यह भार एवं अपमान सहन नहीं कर सका, लहरें उछलने लगीं, आकाश में बादल छा गये और जहाज झूले की भाँति डो.ने लगा। चक्करों के मारे बुरा हाल था। कभी केबिन में और कभी डेक पर गये परन्तु चक्कर दूर नहीं होते थे। जहाज की गति धीमी हो गई और लहरें, पानी के छींटे डेक तक उछालने लगीं, उपर बीस-बीस फीट तक उछलकर छोटी-छोटी पानी की पहाड़ियाँ बनाकर लहरें फिर नीचे लौट जाती थीं जिससे किसी नीली घाटी के होने का संदेह होने लगता था।

धीरे-धीरे समुद्र का क्रोध शान्त हुआ और अब .हाज फिर शान्त होकर आगे बढ़ रहा है। अब तीन बजे स्वेज पहुँच जायेगा। कुछ लोगों ने स्वेज में उतरकर काहिरा तक घूमकर फिर जहाज को पोर्टसईद में पकड़ने का कार्यक्रम बनाया है। लोग बड़ी उत्सुकता से बन्धुओं को पत्र लिख रहे हैं 'पर्सर' के दफ्तर में टिकट खरीदने वालों की भीड़ है और कल स्वेज से ससार के कोने-कोने में पत्र रवाना कर दिये जायेंगे। अब शाम के समय मिस्र की पहाड़ियाँ नजर आ रही हैं, रात के अंधकार में वे धुँधली होती जा रही हैं और कल हम मिस्र की भूमि का स्पर्श करेंगे।

२. काहिरा की एक शाम

जिस काहिरा के विषय में और पिरामिडों के सम्बन्ध में आश्चर्यजनक बातें, अपने बचपन में, भूगोल में पढ़ा करते थे, उसी देश की भूमि पर पाँव रखकर कुछ अजीब-सा महसूस करना अत्यन्त स्वाभाविक था। जहाज जब स्वेज पर खड़ा हुआ, उस समय तक मैंने अपने काहिरा जाने का पूर्ण रूप से निश्चय नहीं किया था, परन्तु दूर से ही स्वेज के मकान और इमारतें देखकर मेरा मन काहिरा जाने को ललचा उठा और मैंने अपने एक मित्र को अपने साथ चलने के लिए राजी कर लिया।

हमारे पास केवल ३० घंटे थे। स्वेज से काहिरा जाकर, वहाँ पर रात्रि व्यतीत करके, अगले दिन शहर घूमकर, फिर पोर्टसईद आकर रात को जहाज पकड़ने का कार्यक्रम था। एक छोटे से हैंडबेग में अपना सामान रखकर हमने काहिरा जाने की तैयारी कर ली। जहाज के अधिकारियों ने कुछ यात्रियों से दस पौंड लेकर उनके काहिरा जाने का कार्यक्रम बनाया था। हमने उनके साथ न जाकर अपने एक मित्र के साथ अलग से जाना तय किया। इनका काहिरा में अपना फ्लैट भी था।

स्वेज से काहिरा तक की हम लोगों ने एक टैक्सी कर ली। रास्ता अच्छा था, परन्तु पक्की सड़क के दोनों ओर रेगिस्तान था और दूर रेत के पीले पहाड़ सूर्य की किरणों में चमकते हुए दिखाई देते थे। हरियाली का नामोनिशान भी नहीं था, थोड़ी दूर तक हमारे साथ-साथ स्वेज नहर भी रही, परन्तु फिर वह पोर्टसईद की ओर चली गई।

टैक्सी के अंदर रेडियो था और अरबी भाषा में समाचार हो रहे थे। काहिरा जाने का दूसरे यात्रियों की मोटरों का काफिला भी हमारे साथ आ रहा था। बीच में एक छोटे से गेस्ट हाऊस में रुककर हमने चाय पी। काहिरा में लगभग आठ मील पूर्व बस्ती आरम्भ हो गई। कहीं-कहीं एक आध पेड़ भी किसी मकान के सामने अपनी छाया फैलाये दिखाई देता था।

नया काहिरा आया। यहाँ के साफ-सुथरे दोमंजिले-तीनमंजिले फ्लैट देखकर एक बार काहिरा पहुँच जाने के विचार से सिहर गया। फिर लम्बी चौड़ी पक्की सड़कें, भागती हुई मोटरें, विक्टोरिया, बसें और ट्रामें, ऊँचे-

ऊँची दस-दस मंजिलों वाली इमारतें और भारतीयों से मिलते-जुलते सड़कों पर चलते लोग दिखाई दिये ।

साढ़े चार बजे के लगभग हम लोग अपने किसी मित्र के फ्लैट में पहुँच गये । चाय पी कर थकान उतारी और बार-बार उसके कमरे की खिड़की से झाँककर बाहर बाजार का दृश्य देखकर अपनी उत्सुकता को शान्त कर लेते थे । उस मित्र ने हमें शाम के समय पिरामिड देख आने की सलाह दी और हम एक गाईड को साथ लेकर टेक्सी में बैठकर चल दिये ।

पिरामिड

शहर से लगभग ५ मील की दूरी पर छोटे-छोटे रेत के टीलों पर वे ऊँचे पिरामिड आकाश से बातें करते हुए दिखाई दिये । इतिहास के ये पुराने खंडहर किसी अमुक व्यक्ति की लालसा का प्रतीक बने हुए, हजारों मजदूरों की बेगार मेहनत और रक्त से सींचे हुए कोई नया सन्देश देते हुए दिखाई दे रहे थे । बड़े-बड़े पत्थरों की चट्टानों को उभारकर किस ऊँचाई पर ले जा कर एक नई इमारत खड़ी करके अपना नाम इतिहास में सदा के लिए अमर कर रखने की भावना के पिरामिड प्रत्यक्ष प्रमाण थे । ऊपर पहुँचकर सारा काहिरा शहर सूर्य की अन्तिम किरणों में चमक रहा था । गाईड अंग्रेजी में वही रटी-रटाई पुरानी बातें दोहरा रहा था कि किस प्रकार मीलों की दूरी से बिना मजदूरी दिये हुए मजदूर पत्थर लाते थे, एक बड़े विशाल पत्थर पर किस प्रकार एक राजा का मुख बनाया गया था'''इसी प्रकार की कई अनोखी चीजें थीं । रेगिस्तान में सूर्य अस्त होने के समय का भी अपना एक अस्तित्व है, जिसका आनन्द हम लोगों ने उठाया ।

यूरोप में कदम रखने के पूर्व काहिरा के बाजारों और सड़कों में सैर करना एक भारतीय के लिए अवश्य ही लाभदायक है, क्योंकि मिस्र की सभ्यता पूर्व और पश्चिम की सभ्यता के बीच एक पुल के समान है । बड़ी-बड़ी लम्बी-चौड़ी दुकानों में सजे हुए सामान, विज्ञापन के लिए रंग-बिरंगी रोशनियों का आकर्षण, सड़कों पर दाईं ओर चलने का कानून और स्थान-स्थान पर नये-नये खाद्य-पदार्थों के रेस्तरां को देखकर सचमुच भारत के बड़े-बड़े शहर फीके जान पड़ते हैं । हम बिना किसी उद्देश्य के सड़कों पर चक्कर लगाते रहे । देखने में मिस्र के लोग भारतीयों जैसे ही जान पड़ते हैं, परन्तु हिन्दुस्तानी भाषा का एक भी अक्षर लोगों की समझ में नहीं आता । विदेशी सभ्यता में मिस्र के लोग भी उतने ही रंगे हुए जान पड़े जितने कि हिन्दुस्तानी

पेरिस के बुलीवार

हैं, परन्तु फिर भी नाक तक बुरका पहने अरब का सौंदर्य लिए युवतियाँ और अपनी राष्ट्रीय पोशाक में कुछ पुरुष दिखाई दिये, अन्यथा सब कोट टाई या स्कर्ट ही पहने हुए थे। सड़क की पटरियों पर सामान बेचने वालों की भी कमी नहीं थी।

मिस्र का नृत्य

रात को उस सिंधी मित्र के घर इतने दिनों पश्चात् दाल-चावल खाकर इतनी तृप्ति मिली कि एक बार घर पर भोजन करने का आनन्द आ गया। उसी मित्र ने मिस्र का नृत्य रात्रि को हमें देखने की सलाह दी और हम नृत्य-घर की ओर चल दिये। सोचा था कि यहाँ मिस्र सभ्यता का एक नया चित्र देखने का अवसर मिलेगा, परन्तु हुआ उससे ठीक उलटा। १९वीं शताब्दी की यूरोप की बहुत सस्ती और अश्लील नकल दिखाई दी। पेट के लिए किस प्रकार शरीर का व्यापार इतने खुले आम हो सकता है और मनुष्य की वासना को किस प्रकार अत्यन्त भद्दे ढंग से उभारा जा सकता है, यही देखने को मिला। नर्तकियों ने नृत्य दिखाने की अपेक्षा अर्धनग्न अवस्था में अपना शरीर ही बिजली के प्रकाश में अधिक दिखाया और आश्चर्य होता था उन अधेड़ अवस्था वाले सिगरेट और शराब के नशे में मस्त होकर मंच पर फूल फेंकने वाले पुरुषों पर जो परदा गिरने पर खुशी से तालियाँ पीटते हुए नहीं थकते थे और अपना नृत्य समाप्त करके बाहर हाल में हाव-भाव दिखाती हुई उन नर्तकियों की कमर में हाथ डालकर उन्हें खुले हाथों से पेग पिलाते थे। यह सब देखकर विदेशी सभ्यता का उलटा रंग चढ़ने वाले देश का नग्न चित्र हमारी आँखों के सामने खिंच गया।

संग्रहालय

दूसरे दिन प्रातःकाल ही हम काहिरा के म्यूज़ियम (संग्रहालय) में गये, जिसको देखकर रात्रि की सभ्यता और दिन के प्रकाश का अन्तर और भी स्पष्ट हो गया। प्राचीन संस्कृति के स्पष्ट उदाहरण हमारी आँखों के सामने थे। हजारों वर्ष पूर्व मिस्र की क्या दशा थी और उस समय की सभ्यता और संस्कृति कितनी उच्च कोटि की थी जिसे देखकर एक बार इस समय की आधुनिक तथा कथित प्रगति पर शोक ही हुआ। कला के इतने सुन्दर नमूने आज तक कभी देखने को नहीं मिले थे। पत्थर की इतनी विशाल मूर्तियाँ थीं जितने हमारे चारमंजिले मकान होते हैं। कलाकारों ने उन पत्थरों पर किस प्रकार अपनी अनुभूतियाँ और भावनाओं को अंकित किया होगा।

और उनका यह माध्यम कितना शक्तिशाली था, जो आने वाले युग-युगान्तरों तक उनकी कृतियों को अमर रखेगा।

मिस्र के प्राचीन काल में यह प्रथा थी कि किसी राजा या महान व्यक्ति की मृत्यु के उपरान्त उसके शरीर को दबाकर उसके ऊपर एक सुन्दर कला की मूर्ति बनाई जाती थी, जो उसकी कब्र को ढक देती थी, धनी लोग उस पर सोने का काम करवाते थे। इन्हीं लम्बे-चौड़े ढक्कनों को कब्रिस्तान से उठाकर म्यूज़ियम में रखा गया है। आजकल यूरोप में जिन अनुसंधानों के पश्चात् कला के नये सिद्धान्तों की खोज की जा रही है, उसकी प्रतिच्छाया स्पष्ट रूप से हमें हज़ारों वर्ष पूर्व की मिस्र की कला में दिखाई देती है। प्राचीन काल के बर्तनों पर बने हुए सुन्दर डिज़ाइन और आकृतियाँ, वस्त्रों पर विविध रंगों का सुन्दर सामंजस्य आदि देखने को मिला। म्यूज़ियम इतना बड़ा था कि बड़े-बड़े लगभग १०० कमरों में कलाकृतियाँ बड़े सुन्दर ढंग से सजी हुई थीं। अंत में हम इतने थक चुके थे कि प्रत्येक कृति के सम्मुख ठहरना असम्भव-सा था।

मिस्र के गाँव

शाम को चार बजे के लगभग अपने मित्र को धन्यवाद देकर गाड़ी चूक जाने पर हम एक लारी में बैठकर पोर्टसईद की ओर चल पड़े। इस बार मार्ग बहुत सुन्दर था, क्योंकि नील नदी के कारण पृथ्वी अत्यन्त उपजाऊ थी, जिसमें दोनों ओर लहलहाते खेत, छोटे-छोटे गाँव और मिस्र के लोग दिखाई देते थे। मिस्र के गाँव भारत—विशेषकर काश्मीर—से बहुत मिलते-जुलते प्रतीत हुए। वही मिट्टी के घर, फूस की छतें, मैले-कुचैले वस्त्र पहने लोग और नाक तक बुरका पहने मिस्री युवतियाँ बार-बार दिखाई देती थीं, स्थान-स्थान पर गाँवों में रुकती हुई लारी यात्रियों को उतारती और नये लोग चढ़ते। लारी में आने का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि हमें मिस्र के प्राकृतिक दृश्य देखने का सौभाग्य मिला। काहिरा की पक्की सड़कें और मकान और गाँवों की झोंपड़ियाँ देखकर दो श्रेणियों का अन्तर स्पष्ट हो गया। रास्ते के साथ-साथ नील नदी की एक नहर मीलों तक हमारे साथ आई और फिर पोर्टसईद से लगभग दस मील पूर्व समुद्र का तट सड़क के साथ रहा। और फिर दूर से रात्रि के समय पोर्टसईद की बिजलियाँ दिखाई देने लगीं।

हम लगभग ६ बजे पोर्टसईद पहुँचे, तब तक दुकानों के ताले लग चुके थे, परन्तु होटलों और रेस्तरों की जिन्दगी अभी आरम्भ ही हुई थी। पता

चला कि जहाज रात्रि के १२ बजे से पूर्व नहीं चलेगा, अतः हम एक होटल में घुस गये। ब्रिटिश सैनिकों को नृत्य करते देखकर एक बार भारत का अतीत सामने आ गया। फिर बन्द दुकानों को देखकर ही संतुष्ट होकर हम जहाज की ओर चल पड़े। जहाज में मित्र लोग हमसे काहिरा का वृतान्त सुनने के लिए उत्सुक थे और हम भी काहिरा की उस रात की कहानी सुनाने को कम उत्सुक नहीं थे।

३. पांपेई के खंडहर

जहाज की यात्रा का सबसे सुन्दर भाग पोर्टसईद के पश्चात् आरम्भ हुआ और कभी-कभी तो इतने सुन्दर दृश्य दिखाई देते थे कि यात्री डेक के दोनों ओर कुर्सियों पर बैठे घंटों दूरबीन से छोटे-छोटे पहाड़ी टापुओं को देखा करते थे। उस नीरस समुद्री जिन्दगी में एक बार परिवर्तन हुआ और भूमि देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भूमध्यसागर का जल सबसे अधिक नीला था और चाँदनी रातों में हम घंटों डेक के सबसे ऊपर के भाग पर अपनी यात्रा का पूरा आनन्द उठाने के लिए ठंडी हवा के झोंकों में बैठे रहते थे।

एक सायंकाल को हमें समुद्र के दोनों ओर तट बहुत समीप दिखाई देने लगा। मालूम पड़ा कि एक ओर इटली और दूसरी ओर सिसली के तट हैं। दोनों ओर भूमि अधिक समीप थी और हमारा जहाज उसी गति से और वही पुरानी 'गड़गड़' आवाज के साथ लहरों को काटता हुआ आगे बढ़ा जा रहा था। फिर इटली के छोटे-छोटे गाँव एवं शहर दिखाई देने लगे, उनके ऊपर आकाश को स्पर्श करती हुई पहाड़ी चोटियाँ थीं और उनकी गोद में मनुष्य ने अपना निवासस्थान बना रखा था। पहाड़ों में बहती हुई नदियाँ, उनके ऊपर छोटे-छोटे पुल, हरे-भरे खेत, वृक्षों की कतारें, और छोटे-छोटे लाल छतों के मकान सब स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। हमारी जिन्दगी में एक नया आकर्षण आया। साँझ होते-होते उन गाँवों और शहरों की रोशनियाँ चमक उठीं। दूसरी ओर सिसली के शहर भी दिखाई देने लगे और हम कभी एक ओर और कभी दूसरी ओर सब दृश्यों का आनन्द उठाने के लिए भागते थे। ऊपर आकाश में टिमटिमाते धुँधले तारे और दोनों ओर शहरों की रोशनियाँ देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो सारे विश्व में दिवाली मनाई जा रही हो। विज्ञापनों की लाल, नीली, हरी रोशनियों की परछाइयाँ समुद्र के जल में दिखाई देती थीं और हमारा मन एक बार उन शहरों की जिन्दगी देखने के लालायित हो उठता था परन्तु फिर हमारे और उनके बीच गहरा समुद्र और उसकी उठती हुई लहरें थीं। वह रात यात्रा की सबसे सुन्दर रात थी।

सर्दी एकाएक बढ़ गई और हमें अपने सारे गरम कपड़े ट्रंकों में से निकालने पड़े। आकाश में बादल छा गये और समुद्र में लहरें भी धमाचौकड़ी
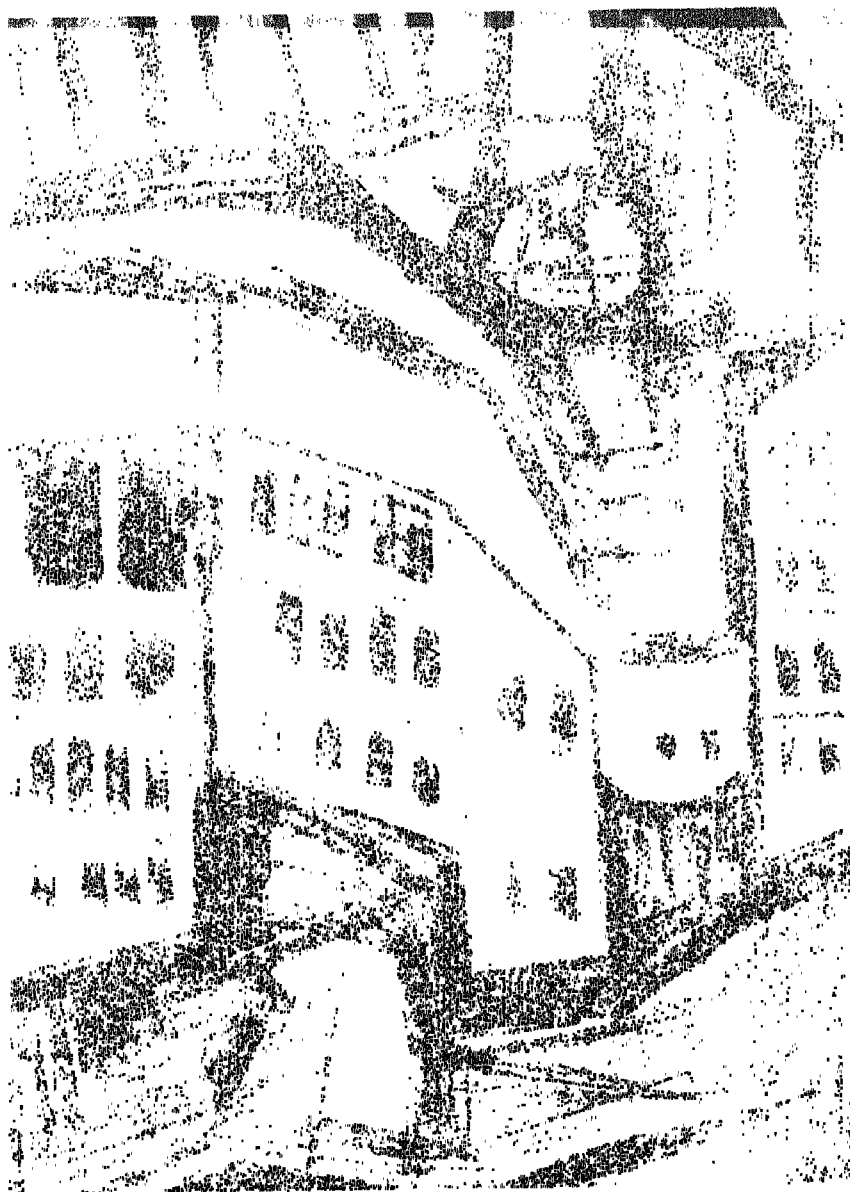
काहिरा का एक दृश्य

मचाने लगी। जहाज कागज की नाव की भाँति डोलने लगा। उसकी गति १२ मील प्रति घंटे से ८ मील की हो गई और लहरें इतनी ऊँची उठीं कि डेक पर खड़े होना दूभर हो गया। परन्तु नेपल्स के आस-पास होने के कारण यह अधिक देर नहीं रह सका नहीं तो चक्करों के कारण बुरा हाल हो जाता।

बीच में एक टापू दिखाई दिया जहाँ नैपोलियन को पहली कैद करके भेजा गया था। और अन्त में एक सुबह हम इटली के प्रसिद्ध बन्दरगाह नेपल्स पहुँच गये। बहुत से यात्री वहीं उतर गये और उनसे विदा लेते समय मैं सोच रहा था कि जिन्दगी के ऐसे कितने ही छोटे-छोटे परिचय होते रहते हैं और फिर उन व्यक्तियों से कभी मिलने का अवसर प्राप्त नहीं होता। यह सोचकर दुःख ही हुआ। बन्दरगाह से बाहर निकलते ही युद्ध का शिकार बने हुए इटली का परिचय वहाँ रहने वालों से मिला। किस प्रकार लोग सिगरेट के फेंके हुए टुकड़ों पर झपटते थे, कैसे सड़कों पर चलते लोग फटेहाल घूमते थे, परन्तु शहर के अन्दर पहुँचकर नेपल्स की दूसरी दुनिया का भी आभास मिला। वहाँ पाँच या छः मंजिली इमारतें थीं। सूटों या नवीन स्कर्टों में चिपटे नर-नारी थे, दुनिया भर का सामान सजाये बड़ी-बड़ी दुकानें थीं। मैं चार-पाँच पादरियों के साथ था जो रोम जा रहे थे। उनके साथ कुछ गिरजों को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

यूरोप की प्राचीन कला देखने के लिए गिरजाघरों में जाना ही सबसे अधिक आवश्यक है। छतों पर बड़ी विशाल कलाकृतियाँ हैं और दीवारों पर धार्मिक कहानियों को अत्यन्त ही कलापूर्ण ढंग से चित्रित किया हुआ है। कितनी ही विशाल मूर्तियाँ देखने को मिलीं, बड़े-बड़े हाल और खिड़कियों में रंग-बिरंगे शीशों को देखकर 'स्टेन ग्लास विंडो' की कला का महत्त्व प्रत्यक्ष रूप से देखने को मिला। स्थान-स्थान पर इस प्रकार के लम्बे-चौड़े गिरजाघर थे। जो महत्त्व भारतीय कला में दक्षिण के मन्दिरों को दिया जाता है वही यूरोप में गिरजाघरों को मिलता है, क्योंकि प्राचीन काल में यूरोप की सारी कला गिरजों में ही केन्द्रित थी। एक भारतीय को यूरोपीय पादरियों के साथ देख कर लोग आश्चर्य से मेरी ओर घूरते थे।

पांपेई के खण्डहर

नेपल्स में सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान पांपेई के पुराने खण्डहर हैं और कोई भी यात्री नेपल्स पहुँचकर उन्हें देखे बिना नहीं रहता। हम भी एक टैक्सी

करके पांपेई की ओर रवाना हो गये। पांपेइ लगभग दस मील की दूरी पर था और रास्ते में इटली के गाँवों को देखने का अवसर भी मिला। बीच में एक स्थान पर उतरकर पत्थरों पर बारीक काम करने का कारखाना भी देखा, यह सचमुच ही अपने ढंग का एक ही था जहाँ पत्थरों पर बड़ी बारीक मूर्तियाँ आदि बनाई जाती थीं। पांपेई को देखकर लिटन की पुस्तक 'लास्ट डेज ऑफ पांपेई' आँखों के सामने घूम गई और हजारों वर्ष की प्राचीन सभ्यता और उस समय की दुनिया देखने को मिली। वह पहाड़ जिसके फटने से पांपेई धरती में सदा के लिए विलीन हो गया था, अभी उन खण्डहरों के ऊपर खड़ा था छोटे-छोटे पत्थरों के टूटे-फूटे मकान, गलियाँ, बाजार सभी हमने देखे। दुकानों के सामने बड़े-बड़े पत्थर के बर्तन थे जिनमें शराब रखी रहती थी। बड़ी-बड़ी शिलाओं पर पांपेई के रास्ते और गलियाँ बनी हुई थीं। सब मकान पत्थरों के बने हुए थे। एक-आध स्थान पर उस समय के दीवारों पर बने हुए कुछ चित्र भी देखने को मिले जिनसे उस समय की कला का अनुमान लगाया जा सकता था। कुछ बर्तन भी थे, छोटे-छोटे पत्थरों के पुल जिनके नीचे छोटी नदियाँ बहती थीं, कुछ बड़े अमीर लोगों के मकान और बाग आदि भी देखे। परन्तु पांपेई में जितना अधिक आकर्षित एक थियेटर ने किया उतना कोई और चीज नहीं कर सकी। थियेटर में छत नहीं थी, चारों ओर गोलाकार रूप में पत्थरों की सीढ़ियाँ थीं जहाँ दर्शक बैठकर नीचे स्टेज पर नाटक को देख सकते थे, स्टेज नीचे था और सीढ़ियाँ एक-दूसरे के ऊपर ऊँचे तक बनी हुई थीं। स्टेज के दोनों ओर दो छोटे-छोटे दरवाजे थे जहाँ से अभिनेता आदि आते थे। एक अजीब-सा वातावरण इस खण्डहर का था और मैं अनुभव कर रहा था मानो पांपेई के इतिहास का नाटक मैं अपनी आँखों से देख रहा हूँ। गाइड अपनी रटी हुई बोली में उन कहानियों को दुहरा रहा था और हम सुन रहे थे। मालूम पड़ा कि अभी तक पांपेई की खोजबीन जारी है और उस प्राचीन सभ्यता के विषय में अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

जब हम पांपेई से रवाना हुए तो शाम हो रही थी, सर्दी कड़ाके की थी और आकाश में बादल मँडरा रहे थे। एक रेस्टोरां में चाय पी और सिगरेट सुलगाई, फिर शहर की ओर रवाना हो गये। पास ही समुद्र नजर आता था और बादलों के बीच में से अस्त होते सूर्य की परछाईं समुद्र में बहुत सुन्दर मालूम पड़ रही थी। हर तट पर जहाजों की रस्सियाँ आदि उलझी हुई दिखाई दे रही थीं। शाम को नेपल्स की लम्बी-चौड़ी कोलतार की

सड़कों पर सैर करके शहर के विषय में थोड़ी जानकारी हुई। दुकानों की चमचमाती रोशनियाँ और रेस्तोरां में लोगों की टोलियों को बैठे देखा। जिसका आभास पहले-पहल काहिरा में हुआ था उसी को अधिक विकसित रूप में नेपल्स में देखा और उसी की चरम सीमा को पेरिस में देखने की आशा थी।

पादरी के एक मित्र ने रात्रि के भोजन के लिए निमंत्रित किया था। खाना खाकर रात के ६ बजे जब अपने जहाज की ओर रवाना हुए तब बूँदा-बाँदी होने लगी थी। हम एक बस में बैठ गये। सड़क के एक ओर दुकानें थीं और दूसरी ओर समुद्र का तट। बम्बई के मैरीन ड्राइव से यह स्थान बहुत कुछ मिलता-जुलता जान पड़ा। दुकानें बन्द हो गई थीं। परन्तु रेस्टरां की दुनिया आबाद होनी आरम्भ हो गई थी। जहाँ कहीं चमकती हुई रोशनियाँ देखते वहाँ किसी कैफ़े के होने का अनुमान लगा लेते थे। नेपल्स छोड़कर जहाज की उसी पुरानी जिन्दगी के दो दिन और व्यतीत करना किसी प्रकार भी जेल से कम नहीं मालूम पड़े।

अन्त में जहाज ने दस बजे रात को नेपल्स से विदा ली, परन्तु दो यात्री अभी तक शहर घूमकर वापस नहीं लौटे थे। थोड़ी देर तक उनकी प्रतीक्षा करके जहाज चल पड़ा, परन्तु तट से लगभग १०० गज के फासले पर जाते ही वे दो यात्री एक मोटर बोट में भागे आये और बड़ी कठिनाई से रस्सी की सीढ़ी पर उस दम्पत्ति को ऊपर चढ़ाया।

जहाज के कितने ही परिचित बिछुड़ चुके थे और आधे से कम यात्री ही जेनोआ के लिए रह गये थे। अतः उस दिन की यात्रा पहाड़-सी जान पड़ी, मानो उस जिन्दगी में अब कोई आकर्षण शेष नहीं रह गया हो। यात्री अपना सामान बाँध रहे थे, जहाज का बार बन्द हो गया था और जिस डेक पर एक भी कुर्सी खाली नहीं दिखाई देती थी, वहाँ अब सन्नाटा रहता था। डाइनिंग रूम भी खाली हो गया था, अब जहाज इटली के तट के साथ-साथ आगे बढ़ रहा था, सर्दी भी प्रतिक्षण बढ़ती जाती थी और कभी-कभी कुछ समय के लिए सूर्य निकलने पर मैं आराम से डेक पर लेट जाता था।

जहाज तीसरे दिन प्रातःकाल ही जिनोआ पहुँच गया, सब यात्री अपना-अपना सामान बाँधकर उतरने को तैयार हो गये। १५ दिन के पश्चात् मैं भी जहाज की जिन्दगी से छुटकारा पाने को व्याकुल हो रहा था, उस बँधी हुई जिन्दगी की चहारदीवारी से ऊब चुका था। आस्ट्रेलिया से आने वाले

यात्री लगभग दो मास पश्चात् उतर रहे थे। परन्तु इटेलियन पुलिस की जाँच पड़ताल करते-करते दस बज गये, फिर 'कस्टम ऑफिस' में सामान देखा गया और अन्त में हम बन्दरगाह से स्वतन्त्र हो गये। मैं टैक्सी लेकर सीधा स्टेशन गया और पेरिस की गाड़ी का समय पूछा। उसके तीन बजे छूटने की सूचना पाकर अपना सामान स्टेशन पर ही रखकर जिनोआ देखने के लिए रवाना हो गया।

जिनोआ नेपल्स जैसा सुन्दर और बड़ा नहीं था। लोग केवल इटली भाषा ही समझते थे और एक भी शब्द इटेलियन भाषा का न जानने के कारण हमारे लिए रास्ता तक पूछना असम्भव था। बड़े-बड़े चौराहों पर एक विशाल पत्थर की कलात्मक मूर्ति दिखाई देती थी और बड़ी सड़कों के दोनों ओर जाते हुए छोटे-छोटे बाजारों में भी सब सामान आसानी से मिल सकता था। सड़कें सब सीधी ही नहीं थीं, बल्कि कहीं-कहीं रास्ते ऊपर-नीचे की ओर भी उतरते-चढ़ते दिखाई देते थे। बाजारों और मकानों को ही देखकर इटली देश की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की छाया का आभास स्पष्ट रूप से मिलता था। समय अधिक न होने के कारण बिना किसी उद्देश्य के ही स्टेशन के आस-पास चक्कर लगाता रहा और बड़ी कठिनाई से एक अंग्रेजी दैनिक पत्र खरीदकर स्टेशन के सामने एक पार्क में बैठ धूप का आनन्द उठाता हुआ पढ़ने लगा।

अन्त में पेरिस की गाड़ी में सवार होकर चैन की साँस ली। गाड़ी बिजली से चल रही थी और उसकी रफ्तार बहुत तेज थी। थर्ड क्लास के डिब्बे भी भारत के सैकिंड क्लास से अच्छे थे। उनमें मोटे-मोटे गद्दे बिछे हुए थे। प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक सीट थी और उतनी संख्या से अधिक यात्रियों का डिब्बे में आना असम्भव-सा था। सोने का स्थान सैकिंड क्लास के यात्रियों को भी नहीं मिलता परन्तु उसी सीट पर आराम से सहारा लेकर सोया जा सकता था। यात्रा करते समय सारे रास्ते में गाँव और आबादी नजर आती थी, भारत की भाँति मीलों तक ऊबड़-खाबड़ पृथ्वी का एक इंच भाग भी देखने को नहीं मिला। उससे अनुमान लगाया कि देश छोटा होने पर किस प्रकार पृथ्वी का उपयोग किया जाता है। खिड़की से ही गाँवों के साफ-सुथरे खेत, किसानों के छोटे-छोटे मकान, गाँवों की पक्की सड़कें और रेस्टोरां दिखाई दिये। गाँव छोटे होने पर भी छोटे-मोटे शहर की सुविधाओं से परिपूर्ण हैं।

फिर एल्प्स पहाड़ दिखाई देने लगे। गाड़ी पहाड़ों में से गुजर रही

थी। कभी-कभी सुरंगों में से भी गुजरना पड़ता था। पहाड़ियों की गोद में बिखरे हुए मकान और खेत काश्मीर की याद दिला रहे थे। पास ही की पहाड़ियों पर बर्फ चमक रही थी। रास्ता अति ही सुन्दर था और कुछ दृश्य तो सचमुच ही अत्यन्त आकर्षक थे। सर्दी की मात्रा और भी बढ़ गई थी। रात का अँधेरा धीरे-धीरे पहाड़ों पर छा रहा था और सूर्य की धुँधली किरणों में चमकते हुए लाल छतों के मकान और पीले खेत हम देख रहे थे।

रात्रि के प्रायः १२ बजे के लगभग मडेन पहुँचने पर फ्रांस की पुलिस ने हमें जगाया, क्योंकि यह शहर फ्रेंच सीमा का पहला शहर था। हमारे पासपोर्ट और सामान का निरीक्षण हुआ परन्तु पुलिस ने अधिक तंग नहीं किया। गाड़ी लगभग दो घंटे ठहरी और मैं बाहर प्लेटफार्म पर सिगरेट का धुआँ छोड़ता हुआ सर्दी का आनन्द उठाने लगा।

प्रातःकाल होते ही पेरिस के आस-पास की बस्तियाँ दिखाई देने लगीं, दूर चिमनियों में से धुआँ निकलता हुआ दिखाई दिया, और खेतों के बदले ऊँचे-ऊँचे पक्के मकान और सड़कें दिखाई देने लगीं। दुनिया के सबसे प्रसिद्ध शहर में पहुँचने का उत्साह कम नहीं था और आखिर मेरी वह मंजिल आ ही गई जिसके लिए मैं हजारों मील की यात्रा करके जिन्दगी के नवीन अनुभवों को स्मृति में पिरोता हुआ चला आ रहा था।

४. पेरिस के पहले अनुभव

तो आखिर मैं पेरिस पहुँच ही गया। विश्व के इतने बड़े शहर के स्टेशन पर जब मैं अकेला अपना सामान लिये खड़ा था और सोच रहा था कि कहाँ जाऊँ, क्या करूँ, किससे सलाह लूँ, तभी अपने जहाज के दो युवक गाड़ी से उतरते दिखाई दिये। उनसे बातें करने पर मालूम पड़ा कि वे भी किसी होटल में जाकर टिकेंगे। मुझे भी अपने साथ ले जाने में उन्हें कोई एतराज नहीं हुआ। हम मोमात्र के एक होटल में जाकर टिक गये और एक बड़ा-सा कमरा हमने किराये पर ले लिया। जहाज पर जो थोड़ी-बहुत फ्रेंच सीखी थी वह फौरन काम में लानी पड़ी, क्योंकि होटल की मालकिन अंग्रेजी का एक शब्द भी नहीं जानती थी। मुँह-हाथ धोकर और कपड़े बदलकर हम मोमात्र की सड़क पर निकल पड़े। कुछ दिन बाद मुझे पेरिस वालों से पता चला कि यह सड़क और बाजार का सबसे अधिक फैशनेबल स्थान गिना जाता है।

जीवन और गति से भरी दुनिया पेरिस में देखी वैसी न काहिरा में देखी थी और न नेपल्स एवं जिनेवा में। दुकानों की लम्बी-चौड़ी खिड़कियों में दुनिया भर का सामान सुचारु रूप से सजा हुआ था और कुछ दुकानें तो इतनी विशाल थीं कि हिन्दुस्तान की कम-से-कम दस बड़ी दुकानें उसमें समा जायँ। एक सबसे नवीन और उपयोगी बात यह देखी कि प्रत्येक वस्तु पर दाम लिखे रहते थे जिससे ग्राहक दुकानदारों का समय व्यर्थ में ही दामों के पूछने में नष्ट न करें। पटरियों पर सामान सजाने की प्रथा भी काफी प्रचलित है और लगभग प्रत्येक दुकान का थोड़ा-बहुत सामान दुकान के सामने पटरियों पर सजा रहता है। परन्तु पटरियाँ इतनी चौड़ी हैं कि दुकानें पैदल चलने वालों का रास्ता न रोककर बाजार की शोभा ही बढ़ाती हैं। कुछ स्थानों पर तो हिन्दुस्तान की भाँति सड़कों पर सब्जी और फल बेचने वाले अपने ठेलों में सामान रखे चिल्लाते हुए दिखाई देते हैं। यहाँ के लोगों की ईमानदारी और विश्वास-भावना तो उल्लेखनीय है। दिन में १२ बजे सब अपने ठेलों पर कपड़े ढककर अपने घर खाने-पीने और आराम करने के लिए चले जाते हैं और शाम तक सामान उसी प्रकार खुला रहता है, परन्तु कभी चोरी होने की घटना

सुनाई नहीं देती। अखबार वाले अपना गट्ठर और एक सन्दूकची रखकर चले जाते हैं और जो व्यक्ति अखबार लेता है वह उसके पैसे सन्दूकची में स्वयं रख जाता है। इस प्रकार उस दुकानदार के लौटते समय तक सन्दूकची पैसों से भर जाती है परन्तु एक पाई का भी तो अंतर नहीं पड़ता। मैं तो यह सब देखकर आश्चर्यचकित रह गया।

पेरिस की लम्बी-चौड़ी सड़कों और बाजारों का वर्णन शब्दों या फोटो में नहीं किया जा सकता। प्रत्येक सड़क चौड़ी, साफ-सुथरी और सात, आठ या नौ मंजिलों के मकानों से भरी होती है। पेरिस का केन्द्र कौन-सा है? जैसा नई दिल्ली में कनाट प्लेस, दिल्ली में चाँदनी चौक या बम्बई में हार्नबी रोड है, वैसा पेरिस का केन्द्र कोई नहीं है, क्योंकि वहाँ विभिन्न इलाकों में बड़े-बड़े चौक सहज में ही दिखाई देते हैं। यदि मोमात्र की दुकानों में रात को रंग-बिरंगी बिजलियों के विज्ञापनों में सड़क पर चलने वालों की आँखें चौंधिया जाती हैं तो 'शांजलीजे' की दोनों पटरियों पर विश्रांति-गृहों की बहार कम नहीं होती। 'मोंपारनास' पर चलते समय दोनों ओर के विशाल कैफों से संगीत की ध्वनि सुनने को मिलती है।

पेरिस के बीच में सेन नदी बहती है जिसके ऊपर शहर को मिलाने के अनगिनत पुल हैं जहाँ मोटरें, बसें और बिजली की गाड़ियाँ सरसराती हुई भागती फिरती हैं। एक ओर जिंदगी में इतनी गति, इतनी तीव्रता दिखाई देती है, और दूसरी ओर बागों में बेंचों पर धूप सेंकते हुए आराम से सिगरेट पीते हुए, विश्रांति-गृहों में घंटों अपना समय निरर्थक बातचीत में बिताते हुए और शाम को सूर्य की अस्त होती हुई धुँधली किरणों में सेन नदी के तट पर धीरे-धीरे टहलते हुए लोग भी दिखाई देते हैं। कहना यह चाहिये कि वहाँ पर जीवन की विभिन्न झाँकियाँ देखने को मिलती हैं और व्यक्ति अपनी इच्छा के अनुसार अपनी जिन्दगी आनन्दपूर्वक बिता सकता है।

पेरिस के लोगों में सौन्दर्य-भावना का विकास बहुत कलात्मक ढंग से हुआ है और इसमें कोई आश्चर्य की बात भी नहीं है, क्योंकि वहाँ की चित्रकला, संगीत और साहित्य की नदियों में प्रतिक्षण बाढ़ आती रहती है और एक फ्रेंच बच्चे के हृदय में जन्म से ही इस 'भावना' का विकास होने लगता है। छुट्टी के दिन कोई विरला ही पेरिस में रहता होगा, नहीं तो साइकिलों के पीछे खाने-पीने और खेलने-कूदने का सामान लादे घूमने वालों की टोलियाँ या बसों में बैठे परिवार के परिवार पेरिस के बाहर किसी गाँव या जंगल या झील के किनारे चले जाते हैं। एक दिन की बात बतलाता हूँ।

मैं पेरिस से लगभग दस मील दूर 'बुआद बोलोन' चला गया। उस दिन इतवार था और आकाश साफ होने के कारण धूप भी बिखरी हुई थी। स्थान दो-तीन मील की सीमा में फैला हुआ था, कहीं हरी-भरी घास के मैदान थे, कहीं पेड़ों की कतारें थीं, कहीं झीलें थीं और कहीं छोटी-छोटी पहाड़ियाँ थीं। बच्चे किलकारियाँ भरते खेल रहे थे, परिवार परस्पर बातें कर रहे थे और युवकों की टोलियाँ झीलों में तैर रही थीं। यह स्वाभाविक ही था कि प्रेमियों के झुण्डों की भी कमी नहीं थी। उस वातावरण में इतनी जिन्दगी भरी हुई थी कि अपने देश की याद आये बिना न रही, जहाँ इण्डिया गेट के फैले हुए मैदान सूने पड़े रहते हैं और घूमनेवालों की भ्रमण-रेखा केवल कनाट प्लेस के चक्करों तक ही सीमित रहती है।

पेरिस की स्त्रियों के विषय में भी अनेक दिलचस्प बातें देखने को मिलती हैं। दुकानों, विश्रांति-गृहों और सिनेमाओं में टिकट बेचनेवालों में प्रायः स्त्रियाँ ही दिखाई देती हैं और जो इस प्रकार का काम नहीं करतीं वे घर में खाना पकाना, बर्तन धोना, कपड़े धोना, बाजार से सामान लाना, सारा काम करती हैं और इनके साथ-साथ बाहर की जिन्दगी में भी भाग लेती हैं। अजायबघरों, कला-प्रदर्शिनियों, लेखकों की सभाओं, विश्वविद्यालयों में सब जगह स्त्रियों की संख्या कम नहीं है। जिन्दगी में सब जगह दिलचस्पी लेना उनका सबसे बड़ा उद्देश्य है। भारत की भाँति न तो वे उन पढ़ी-लिखी स्त्रियों के समान हैं जो समाज की तितलियाँ बनकर केवल क्लबों और पार्टियों में जाती हैं और जिन्हें घर के काम करने या बच्चों की देख-रेख करने में अपना अपमान झलकता है; और न ही उस वर्ग जैसी हैं जो केवल अपने पति, घर और बच्चों की चहारदीवारी में ही सीमित रहती हैं। स्त्री और पुरुष की सच्चे अर्थ में समानता यहाँ देखने को मिलती है। यहाँ मैं जानता हूँ कि आर्थिक व्यवस्था, सामाजिक रूपरेखा और वैज्ञानिक प्रगति के कारण ही यहाँ ऐसा हो सका है, उनके पीछे सारे योरोप की प्रगति का इतिहास है।

अप्रैल, मई और जून पेरिस के सब से सुन्दर महीने गिने जाते हैं, जब आकाश का रंग गहरा नीला होता है, जब सूर्य की किरणों में एक मीठी-मीठी सिहरा देने वाली गरमाई होती है, जब सड़कों के दोनों ओर पेड़ों की कतारों में हरे रंग की पत्तियाँ और सफेद फूल खिलते हैं, जब न अधिक सर्दी होती है और न गर्मी। यह मौसम ऐसा ही है जैसा कि दिसम्बर में दिल्ली में होता है। पेरिस की जिंदगी इस मौसम में बड़ी तेज रफ्तार के साथ

पेरिस में लवज़मबुर्ग बाग़

भागने लगती है। इस मौसम में एक व्यक्ति सुबह से लेकर रात तक काम कर सकता है और थकावट अनुभव नहीं करता। और यहाँ के ऐसे सुन्दर मौसम में मैं दिल्ली की गर्मियों की कल्पना करता हूँ जहाँ लू की थपेड़ों से झुलसा हुआ व्यक्ति अपना शरीर मरा हुआ पाता है।

यहाँ की जिन्दगी इतनी व्यस्त है कि किसी व्यक्ति के पास धन या समय का अभाव न होने पर भी वह सब दिशाओं का आनन्द नहीं उठा सकता। यदि एक ओर वह बिथोवां, शोपान, मोजार्ट या बाक के संगीत के विज्ञापन देखता है तो दूसरी ओर विश्व के प्रसिद्ध नाटकों की सूची में से एक नाटक चुनना उसके लिए एक जटिल समस्या बन जाती है। एक ओर यदि वह पिकासो, मातीस और रूओ जैसे कलाकारों की कृतियों के प्रदर्शिनियों के समाचार अखबारों में पढ़ता है तो दूसरी ओर पेरिस में बिखरे हुए अन-गिनत कला-कक्षों का आकर्षण उसे अपनी ओर घसीटता है, सड़क पर चलते हुए हजारों नई-नई पुस्तकों को देखकर उन्हें पढ़ने को उसका जी ललचाता है। फ्रांस के प्रसिद्ध 'एकजिस्टेंशलिष्ट' (जां पाल सार्त्र और उनके साथियों) की मंडली में एक शाम गुजारने की उत्सुकता उसके हृदय में बनी रहती है। मैं वर्णन नहीं कर सकता कि कला का कितना कीमती और अनमोल खजाना लोगों के लिए प्रतिदिन खुला रहता है जब एक व्यक्ति को जिन्दगी के सबसे प्रतिभा-शाली बुद्धिजीवियों के विचारों को पढ़ने और समझने का सौभाग्य मिलता है। और फिर यूरोप के दूसरे भागों को देखने का आकर्षण पेरिस की दीवारों पर लगे इश्तिहारों को देख कर दूना हो जाता है। अभी मालूम पड़ा है कि आस्ट्रिया के प्राकृतिक दृश्यों से भरे शहर साल्सबुर्ग में छः हफ्तों तक विश्व का सबसे बड़ा संगीत सम्मेलन होगा जिसमें विश्व के विख्यात संगीतकार भाग लेंगे। यह १५ जुलाई से अगस्त के अन्त तक रहेगा। जर्मनी के एक छोटे से शहर में ३ महीने तक 'ईसा की जिन्दगी' नाटक के रूप में दिखाई जायेगी। यह नाटक हर दस वर्ष बाद होता है और लोग कहते हैं कि इसकी जितनी प्रशंसा की जाय उतनी ही थोड़ी है क्योंकि जिस नाटक में हजारों अभिनेता और अभिनेत्रियाँ काम करती हैं, जो खुले हुए बागों में प्राकृतिक दृश्यों की पृष्ठभूमि में आकाश की छत के नीचे होता हो, उसे नाटक न कहकर वास्तविक जीवन का एक अंग कहना अधिक उपयुक्त होगा।

परन्तु पेरिस को परियों का देश ही नहीं समझना चाहिए। जहाँ पेरिस में इतनी विशेषतायें दिखाई देती हैं वहीं इससे बिलकुल विपरीत एक दूसरी झाँकी भी देखने को मिलती है जो पेरिस की सारी विशालता पर एक काला धब्बा

बनी हुई है। खाली जेब पेरिस नगरी में एक दिन व्यतीत करना भी असम्भव है। पैसा कमाने की प्रवृत्ति यूरोप की अन्य राजधानियों की भाँति यहाँ भी तीव्र रूप में पाई जाती है। शांजलीजे के बड़े विश्रांति-गृहों में एक प्याला चाय के दाम दो रुपये से कम नहीं देने पड़ते। बड़े-बड़े नाटकघरों और संगीत-भवनों के टिकट ३०) रुपये तक पहुँचते हैं। पेरिस एक भारतीय के लिये बहुत महँगा है। किसी थर्ड क्लास होटल में भोजन करने पर भी दो रुपये से कम नहीं देने पड़ते और फिर भी आधा पेट ही उठना पड़ता है। पिछले इतवार को छात्रों के रहने वाले स्थान 'लेटिन क्वाटर्स' के एक कोने में अपने एक मित्र के साथ कवाड़ियों का एक बाजार देखने गया। सड़क पर घूमते हुए मजदूरों की हीन अवस्था तो देखी ही थीं, परन्तु इस बार सारा का सारा बाजार उन्हीं लोगों से भरा था। मैले-कुचैले कपड़े पहने दुकानदार दुर्गन्धि से भरी पुरानी वस्तुओं को सड़क पर फैलाये बैठे थे। कुछ लड़के भी बच्चों की पुरानी पुस्तकें बेच रहे थे। उनको देखकर एक बार फिर फ्रांस के विद्रोह की कांति लौट आई। फिर भी यहाँ के गरीब से गरीब लोगों की दशा भारत के निम्न मध्य वर्ग के समान है।

पेरिस की आकर्षक जिन्दगी में भी अपने देश की याद आये बिना नहीं रहती। यद्यपि फ्रांसीसी लोग बहुत ही नम्र स्वभाव के और मिलनसार होते हैं तथापि ऐसा अनुभव करता हूँ कि उनमें वह आत्मीयता और अपनापन नहीं जो अपने लोगों में दिखाई देता है। वह शायद अपने देश के अतिरिक्त किसी भी देश में नहीं प्राप्त हो सकता।
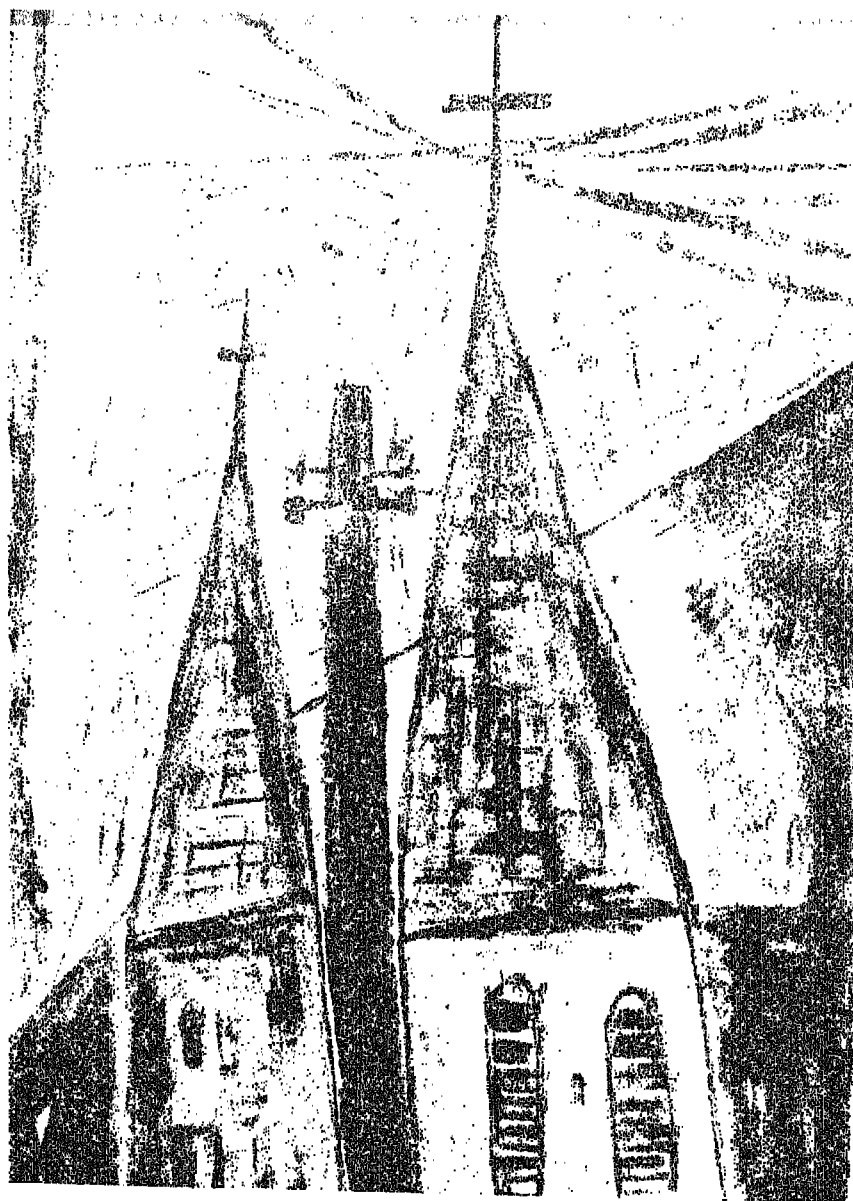
यूरोप के गिरजे

५. पेरिस का चित्रकला जगत्

इतने वर्ष बीत जाने पर भी विश्व की चित्रकला आज भी पेरिस की चहारदिवारी के अन्दर अपना आधिपत्य जमाये हुए है, इस बात पर कोई भी सन्देह नहीं कर सकता; क्योंकि जहाँ एक ओर पिकासो, मातीस, रुओ जैसे विश्वविख्यात चित्रकार पेरिस के अन्दर अपनी दुनिया बसाये हुए हैं वहाँ दूसरी ओर अमेरिका, चीन, लन्दन, स्वीडेन, इटली, जापान, भारत और विश्व के दूसरे देशों में चित्रकला सीखने के लिए छात्र भी आर्ट स्कूलों में दिखाई देते हैं। पेरिस की जिन्दगी में चित्रकला का अपना एक विशेष स्थान और अस्तित्व है जैसे राजनीति, साहित्य या संगीत का है—चित्रों की प्रदर्शिनी में इतनी भीड़ होती है कि अधिकारियों को पहले दिन दरवाजे बन्द कर देने पड़ते हैं और पुलिस की सहायता लेनी पड़ती है। पेरिस के सबसे सुन्दर भवनों में कला के म्यूजिम हैं, समाचार पत्रों में प्रतिदिन चित्रकला के समाचार छपते हैं और साप्ताहिक या मासिक पत्रों में तो कितने ही चित्र-कला पर लेख निकलते हैं, प्रत्येक पुस्तकों की दुकान में चित्रकला की पुस्तकें या चित्रों के प्रिंट ही दुकान के सबसे महत्त्वपूर्ण भाग में सजे दिखाई देते हैं और फिर आधुनिक चित्रकारों के चित्रों की प्रदर्शिनियों के लिए कितने ही हॉल और अनगिनत आर्ट गैलरियें हैं—इन सबसे इस कला के महत्त्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

चित्रकला के इतना अधिक प्रचलित होने का कारण पेरिस के आम लोगों का कला के प्रति प्रेम और अनुराग है। आम लोगों से अलग होकर कोई भी कला जीवित नहीं रह सकती—उसके उन्नति करने की तो बात ही दूसरी है। यह आज की बात नहीं, वर्षों पहले की एक ऐतिहासिक घटना है जब यकायक इटली के पश्चात् फ्रांस ने चित्रकला की बागडोर सँभाली। लुई १४ के समय में भी चित्रकारों को महल, गिरजेघर, और सार्वजनिक स्थानों को सजाने का कार्य सौंपा जाता था, उसी के परिणाम स्वरूप पेरिस के हर चौक पर एक विशाल कलामूर्ति दिखाई देती है जिससे आम लोगों की जिन्दगी में स्वाभाविक रूप से कला एक महत्त्वपूर्ण स्थान पा लेती है और प्रत्येक परिवार में एक-दो चित्र या पुराने चित्रकारों के प्रिंट अवश्य ही दीवार

पर टँगे दिखाई देते हैं।

विश्व की चित्रकला के इतिहास में जितनी भी नवीन धाराओं—इम्प्रेशनिज़म, क्यूबिज़म, फावेज़िम, सररीयलज़म, एक्ज़िस्टेंशनिलज़म—ने जन्म लिया, उनका स्रोत पेरिस के स्टूडियो और स्कूलों से ही निकला। पिकासो ७० वर्ष की अवस्था में भी नये-नये प्रयोगों में अपनी जिन्दगी बिता रहे हैं, अभी उन्होंने मिट्टी के बर्तनों पर नये रेखांकित चित्रों की प्रदर्शिनी की जिसने चित्रकला के इतिहास में एक नया पन्ना खोला, ब्राक अब क्यूबिज़म और एब्स्ट्रेक्शन की चरम सीमा पर पहुँच कर फिर यथार्थवाद की ओर झुके दिखाई देते हैं, शागाल ने दक्षिण फ्रांस के गाँवों से आकर्षित होकर वहाँ की पृथ्वी से नया संदेश पाकर एक नया टेकनीक अपनाया जिसकी सरलता और आकर्षण में एक नवीन शक्ति है और जिन्दगी और कला के प्रति एक नया रुख है। और समाजवादी यथार्थवाद के अनुयायी भी पेरिस में कम नहीं हैं जिनके चित्रों में आज का इतिहास और आम लोगों की जिन्दगी का प्रदर्शन है। इन्होंने भी चित्रकला के नवीन टेकनीकों की सहायता से अपना विषय वस्तु लेकर चित्र बनाये जो सचमुच बहुत अधिक शक्तिशाली हैं, जिनमें पिन्यों, फ़ुजेरों, रेबेले आदि उल्लेखनीय हैं।

उच्च कोटि के विश्व-विख्यात चित्रकारों को छोड़ पेरिस के दूसरे हज़ारों चित्रकारों की जिन्दगी भी एक निराले ही ढंग की है जिनमें से कुछ पिकासो, मातीस आदि को पुराने खण्डहर कह कर अपनी नवीन धाराओं का प्रचार करते दिखाई देते हैं। चित्रकला में कोई नये ढंग से चित्र बनाने या नये ढंग की कोई प्रदर्शिनी होने पर लोग उसकी गरमागरम चर्चा करते दिखाई देते हैं और पेरिस के समाचार-पत्र कालम-के-कालम उस समाचार को देते हैं। इस प्रकार के समाचार पेरिस में बसने वाले के लिए कोई नये नहीं हैं और किसी भी प्रातःकाल को समाचार पत्र पढ़ते समय वे ऐसी खबरों को पढ़ने की आशा करते हैं। कम उम्र वाले चित्रकार भी पेरिस के रेस्तराँ में, नाइटक्लबों में, अपने स्टूडियो में या शाम को सेन नदी के तट पर सैर करते हुए अपने आर्ट की बहसें करते हुए दिखाई दे सकते हैं। फिर कुछ लम्बे बाल, छोटी-सी भूरी दाढ़ी, घुटनों तक की घिसी हुई बिना क्रीज़ की नये कट की पैंट और ऊपर से कोई चमड़े की जाकेट पहने किसी को देखकर उसके आर्टिस्ट होने का अनुमान लगाना ग़लत नहीं हो सकता। अपने रहन-सहन के तरीकों और वेषभूषा की ओर अधिक ध्यान देना उनकी दृष्टि में एक प्रकार से अपना समय नष्ट करना है जिसकी आवश्यकता वे कतई महसूस नहीं

करते। वे अपने चारों ओर एक इस प्रकार का वातावरण पैदा कर लेना चाहते हैं जिससे उन्हें उनके आर्ट में सहायता मिले। 'मोंपारनास' या 'सां जरमे दे प्रे' के रेस्तरां में फुटपाथों पर रक्खी हुई कुर्सियों पर मुँह में पाइप या सिगरेट दबाये अपनी टोलियाँ बनाकर वे प्रायः संध्या के समय परस्पर बातचीत किया करते हैं।

पेरिस की दुनिया में जो चित्रकार के विषय में सबसे अनोखी और नवीन-सी बात दिखाई देती है वह है उनका छुट्टी के दिनों में प्रसिद्ध सड़कों पर दुकानों के सामने अपने दस-बारह चित्रों की प्रदर्शनी करना—लोग राह गुजरते हुए उनके पास से गुजर जाते हैं और कोई आकर्षक चित्र प्रतीत होने पर क्षण भर के लिए खड़े ठिठक जाते हैं और कोने में एक छोटी-सी कुर्सी बैठा, मुँह में सिगरेट दबाकर बेचारा चित्रकार अपने भाग्य का फैसला सुनने के लिए लोगों के मुख पर प्रकट हुई भावनाओं को पढ़ने का प्रयास करता है। यह कहना गलत न होगा कि प्रायः ये चित्र निम्न कोटि के होते हैं जो सड़क पर चलते साधारण लोगों को आकर्षण देने के लिए ही बनाये जाते हैं। और ये चित्रकार प्रायः वे होते हैं जिनको प्रदर्शिनियों में भाग लेने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता और जो फिर भी अपने आर्ट पर ही अपनी रोटी कमाने की चिन्ता किया करते हैं।

आर्ट स्कूलों और एकेडेमियों में भी चित्रकला की शिक्षा देने का अजीब सा ढंग है। प्रायः छात्र नग्न स्त्री मॉडल को सामने बिठाकर उसके शरीर को रेखांकित किया करते हैं जिससे मानव आकृति का वास्तविक ज्ञान वह प्राप्त कर सकें। कुछ स्कूलों में छात्रों को अपने दृष्टिकोण के अनुसार उसे चित्रित करने की स्वतन्त्रता दी जाती है और उसे प्रोत्साहित किया जाता है; परन्तु कुछ स्कूलों में अध्यापक अपना ढंग जबरदस्ती छात्रों पर लादने का प्रयास करते हैं।

चित्रकारों के निजी जीवन के विषय में भी प्रायः कितनी ही कहानियाँ सुनने में आती हैं जिनमें से कितनी मनगढ़न्त होती हैं और कितनी ही सच होती हैं। उनके रहन-सहन का तरीका भी बहुत अजीब-सा होता है। यदि कोई गरीब स्त्री (प्रायः मॉडल) उसके साथ कुछ दिनों के लिए उसके मकान में रहकर उसका खाना आदि पकाने को तैयार हो जाती है तो वह कोई एत्र नहीं करता क्योंकि बदले में वह उसे खाना दे दिया करता है। दोनों जानते हैं कि यह रिश्ता स्थायी नहीं है और केवल कुछ समय के लिए एक कच्चे धागे से बँधा हुआ है और इस कारण से जब वह स्त्री कोई दूसरा आश्रय

जाती है तो दोनों में से किसी को बुरा नहीं लगता। फिर कोई दूसरा मॉडल आकर उसका सूना घर बसा देता है और चित्रकार की जिन्दगी में कुछ दिनों के लिए फिर एक नई जिन्दगी आ जाती है।

किसी दूसरे देश का कोई नया व्यक्ति आकर पेरिस की सैर करे तो पहले ही दिन अनुभव करेगा कि पेरिस के एब्स्ट्रेक्ट और क्यूबिस्ट आधुनिक आर्ट ने आम लोगों की जिन्दगी पर कितना प्रभाव डाला है। साधारण सड़कों पर और जमीन के नीचे चलने वाली रेलगाड़ियों के प्लेटफार्मों पर माडर्न आर्ट में बनाये गये विज्ञापन दिखाई देते हैं, किताबों की जिल्दों और अन्दर बनाये गये चित्र आधुनिक चित्रकारों की ही तूलिका से बने होते हैं। पेरिस के विज्ञापन अमरीका से कहीं भिन्न हैं और यदि किसी विज्ञापन को किसी दूसरे देश में प्रदर्शिनी में लगाया जाए तो लोग उसे उच्च कोटि का चित्र ही कहेंगे।

प्रदर्शिनियों का विज्ञापन भी पेरिस में सिनेमा, थियेटर एवं आपेरा के विज्ञापनों की भाँति ही किया जाता है। आम सड़कों और पुस्तकों की दुकानों पर राह चलते ये पोस्टर कितनी ही बार एक व्यक्ति को आकर्षित करते हैं और वह अपनी उत्सुकता मिटाने के लिए वहाँ पहुँच ही जाता है। पेरिस के सब समाचार पत्रों में प्रतिदिन प्रत्येक गैलरी और म्यूज़ियम के समाचार छपते हैं। और सम्पादक यह अनुभव करते हैं कि उनके पाठकों को इन प्रदर्शिनियों में भी अवश्य दिलचस्पी होगी।

रात को लुव्र (पेरिस का विशाल म्यूज़ियम) में बिजली की रोशनी में चित्र और मूर्तियाँ दिखलाने का समाचार पढ़कर जब मैं भी वहाँ पहुँचा तो मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। हज़ारों की संख्या में पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे म्यूज़ियम में दिखाई दिए। जब तक चौकीदार रात के १२ बजे बिजलियाँ बुझाने पर बाधित नहीं हुए तब तक वे इसका आनन्द उठाते रहे। भारत की भाँति यहाँ लोग चित्रों पर एक नजर डालकर आगे नहीं बढ़ जाते थे वरन् प्रत्येक चित्र या मूर्ति को सब ओर से देखकर आपस में बहस करते थे और उस कलात्मक कृति की आलोचना होती थी।

दिल्ली और बम्बई में भी कितने ही लोगों को यह शिकायत करते सुना है कि एक के पश्चात् एक प्रदर्शिनी होती है और उन सब में जाना एक प्रकार से असम्भव-सा है यद्यपि केवल एक प्रदर्शिनी हॉल होने के कारण महीने में दो प्रदर्शिनियों से अधिक नहीं हो सकती थीं, और यहाँ एक साथ स्थायी म्यूज़ि-यमों को छोड़कर कितनी ही विशाल प्रदर्शिनियाँ होती हैं और सारे पेरिस में ये

गेलरियाँ बिखरी हुई हैं, तब भी लोग कभी नहीं ऊबते और सदा नई प्रदर्शिनी की बहुत उत्सुकता से बाट जोहा करते हैं। पेरिस में रहकर—जहाँ तीस चालीस हजार चित्रकार बसते हैं, वहाँ अपनी प्रदर्शिनी तक करना जिन्दगी में एक नया क़दम उठाना है। इसी कारण से सफ़ेद बालों और झुर्रियों वाले चेहरे में भी सब चित्रकारों को अपने स्टूडियों में आधी-आधी रात तक काम करते देखा है, इतना नाम और धन कमा कर भी पिकासो रुक नहीं गए हैं बल्कि नये-नये अनुसन्धान कर रहे हैं। जिस प्रकार एक वैज्ञानिक अपनी लेबोरेटरी में रात-दिन नए-नए आविष्कारों के स्वप्न देखा करता है उसी प्रकार यहाँ के चित्रकार भी अपने स्टूडियो में नये-नये रंगों और आकृतियों में उलझा रहता है और इसी कारण से आर्ट के छात्र भी अपने स्कूलों में निरन्तर छः छः घंटे काम करते हुए भी नहीं ऊबते और किसी दिन किसी नवीन धारा की खोज करने की आशा लगाए रहते हैं। मोपारनास, सेन नदी के तट पर और 'सां जरमे दा प्रे' की सड़कों पर आधी-आधी रात को भी चित्रकारों को अपने 'ईजलों' पर उलझे हुए देखा जा सकता है। पेरिस का चित्रकार कोई शौकिया नहीं होता, इसी कारण से पेरिस में कला सीख कर चित्रकार प्रायः अपने देश को लौट जाते हैं, क्योंकि वहाँ नाम पाने की अधिक आशा होती है, पेरिस में बसने का साहस उन्हें नहीं होता।

पेरिस का वातावरण ही ऐसा है कि बिना किसी स्कूल या स्टूडियो में दाखिल हुए एक कला-छात्र प्रदर्शिनियों, म्यूजियमों और चित्रकारों के सम्पर्क में रह कर बहुत कुछ सीख सकता है। निश्चयपूर्वक पेरिस ही आज विश्व की चित्रकला का गढ़ है और प्रत्येक चित्रकार को किसी-न-किसी तरह एक बार इस तीर्थ में प्रवेश अवश्य करना चाहिए। भारत से आकर एक चित्रकार पेरिस में अपने चारों ओर एक अजीब-सी दुनिया पाता है, जिसकी भारत में वह कल्पना तक नहीं कर सकता। यहाँ की प्रदर्शिनियाँ, आर्ट स्कूल और कलाकारों के काम करने का ढंग भारत से कितना भिन्न है।

६. शान्ति आन्दोलन में फ्रेंच संस्कृति

आज पूँजीवादी देशों में शान्ति के संघर्ष को जितना शक्तिशाली फ्रांस के सांस्कृतिक आन्दोलन ने बनाया है उतना शायद किसी अन्य देश के बुद्धिजीवियों से नहीं बन सका है। यद्यपि कभी-कभी इटली या लन्दन आदि में किसी अवसर पर लेखकों या चित्रकारों आदि ने मिलकर शान्ति के संघर्ष में अपनी आवाज बुलन्द की, परन्तु विभिन्न कलाओं को मिलाकर एक संयुक्त और सामूहिक आन्दोलन जितना फ्रांस में जोर पकड़ चुका है वह आज किसी से छिपा नहीं है। आज फ्रांस में लुई अरागों, पॉल एलुआर वेरकोर, आंद्रे स्तिल आदि लेखक; पिकासो, मातिस, लेजे, पिन्यों जैसे चित्रकार, लूई दाकों, लुई जूवे (जिनकी हाल ही में मृत्यु हुई है), मारिस शेवेलिये (विश्व-विख्यात हास्य रस के गायक जिन्होंने स्टाकहोम अपील पर दस्तखत किये परन्तु छः महीने पश्चात उन्हें अमरीका का विजा नहीं मिल सका); नोयेल-नोयेल जैसे फिल्म कलाकार, और कितने ही अन्य संगीतकार और उनकी संस्थाएँ, जैसे 'नया संगीत', नाटक कम्पनियाँ और उनके स्थायी थिएटर अपने-अपने कला-माध्यमों द्वारा फ्रांस के आम लोगों की जिन्दगी में युद्ध का खतरा और उसका वीभत्स चित्र और शान्ति का महान महत्त्व भर देते हैं। दूसरे फ्रांस की जनता के लिए 'युद्ध' कोई ऐसी चीज नहीं जो हवा में रहती हो, जिसके नंगे रूप को उन्होंने कभी अपनी आँखों से न देखा हो। पिछले युद्ध के बाद ५ वर्षों में नात्सी राज्य की स्मृतियाँ इतनी धुँधली बन गई हों सो बात भी नहीं है, आज भी ब्रेस्ट के खण्डहर, पेरिस के मकानों में गोलियों के निशान, शातोब्रियाँ के शहीदों की अमर कहानी, गैब्रील पेरी, जाक देकूर, मेक्स जेकोब, पौलीनेर जैसे महान् लेखकों, कवियों, वैज्ञानिकों की हत्या और 'शाँजलीजे' पर स्वस्तिका के चिन्ह लगाये हिटलर की फौजों की कवायदें चाहे प्लेवन, शूमेन, मौक, वर्तमान सरकार के सोशल डेमोक्रेट मन्त्री और आँद्रे मालरो, मारियाक आदि के लिए अतीत का एक 'बुरा स्वप्न' बनकर रह गये हों परन्तु फ्रेंच जनता के लिए आज भी वे ऐसे घाव हैं जो जिन्दगी में कभी नहीं भरते। इसी कारण से विश्व का कोई भी ईमानदार

बुद्धिजीवी कला के प्रशंसकों को धोखा देने का हकदार नहीं अन्यथा उसकी प्रशंसा करने वाले लोग कभी उसे क्षमा नहीं करेंगे, वे अपनी भावनाओं, अपनी अनुभूतियों को अपने कलाकार की कृति में देखना चाहते हैं और यदि कलाकार ऐसा नहीं करता तो वह अपने पाठकों और दर्शकों के बीच ऐसी अभेद्य दीवार खड़ी कर लेता है जिसको गिराना बाद में बहुत कठिन है।

फ्रांस में युद्ध का एक विशेष महत्त्व है जिसकी नींव आज केवल ट्रूमेन और चर्चिल के युद्ध के नारों से नहीं डाली गई वरन् फ्रांस के इतिहास के पन्ने इन घटनाओं से भरे हुए हैं। ऐसा ही फ्रेंच कलाकारों का भी इतिहास है जिनके सम्मुख यह प्रश्न नया नहीं बल्कि इसकी फ्रांस की परम्पराओं और कलाकारों की कृतियों में आज भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। स्तॉंधाल बालजाक, एमिल ज़ोला, हॉरी बारबूस, रोमाँ रोलाँ आदि की कृतियाँ इस बात का प्रमाण हैं। तो फिर आज यदि फ्रांस के बुद्धिजीवी शान्ति के लिए अपनी आवाज को बुलन्द करते हैं, अपनी कृतियों में युद्ध के प्रति घृणा की भावना उभारते हैं तो वे अपनी परम्परा को ही एक कदम और आगे बढ़ाते हैं और आम लोगों के विचारों का अपनी कृतियों में प्रतिनिधित्व करते हैं। यहाँ पर फ्रेंच बुद्धिजीवियों के विषय में एक बात और कहना असंगत न होगी जिसके फलस्वरूप ही आज का फ्रेंच साहित्य और कला में लोगों के सुख-दुख, युद्ध के प्रति उनकी प्रतिक्रिया का एक ईमानदार दर्पण बना हुआ है। पिछले विश्व-युद्ध में इंग्लैंड और अमेरिका आदि देशों के बुद्धिजीवी युद्धमंच पर ही जाकर केवल वहाँ के दृश्य चित्रित करने का प्रयास किया करते थे लेकिन फ्रांस में अरागों, जॉर्ज दिकूर, एलुआर आदि फ्रेंच बुद्धिजीवियों ने कलम के साथ-साथ तलवार को भी हाथ में उठाया था और बुद्धिजीवियों का संयुक्त मोर्चा बनाकर नाजियों के विरुद्ध आन्दोलन में नई शक्ति और नई चेतना डाली थी। आज उनमें से जो बचे हैं वे जानते हैं कि युद्ध की वीभत्स लपटों में झुलसने के बाद कलाकारों की 'तटस्थता' का क्या मतलब होता है। अतः आज उनकी कला में यथार्थवाद और लोगों की सच्ची अनुभूति की प्रतिच्छाया इतनी निखरकर उभरती है जिसमें लोग अपनी भावनाओं की ही स्पष्ट छाया देखते हैं। आज फ्रांस के लोग १६३७ में बनी पिकासो की विश्वविख्यात कलाकृति 'गर्निका' को भूले नहीं हैं जिसने [illegible] के समय स्पेन में फासिस्ट फ्रैंको के अमानुषिक अत्याचारों और पाशविकता का एक सजीव चित्र विश्व के सम्मुख रख दिया। आज

भी फ्रेंच लेखकों की युद्ध-काल में लिखी कवितायें उन दिनों की याद दिलाती हैं जब जेलों के अन्दर बन्द पार्टीजन उन्हें जोर-जोर से गाकर अपने आपको उत्साहित किया करते थे और फाँसी के तख्तों पर झूलते हुए लोग इन कविताओं से प्रेरणा पाया करते थे। लोगों की जिन्दगी में, उनके संघर्षों और आन्दोलनों में यह कला कितना महत्त्व बनाये रखती है इसका प्रमाण केवल इस एक उदाहरण से मिलता है कि नवम्बर ५१ में 'सेलों न ओतों' की विशाल प्रदर्शिनी में से जजों द्वारा चित्रों का चुनाव हो जाने के पश्चात्—जब प्रदर्शिनी के उद्घाटन में केवल चार घंटे शेष रह गये थे—तब फ्रेंच सरकार के आदेश पर कुछ चित्र दीवारों से उतार लिए गए क्योंकि उनसे फ्रेंच लोगों की भावनाओं के उभड़ने का भय था। इन चित्रों में मिल्हो का 'मोरिस थोरेज स्वस्थ हैं', लाँसों का 'पहली मई', बोरिस तासलित्स्की का 'मजदूरों का विद्रोह' और एक चित्रकार द्वारा 'हॉरी मार्ती' आदि चित्र थे जिनकी कला के ऊँचे स्तर के विषय में किसी को सन्देह नहीं था लेकिन जिनका विषय क्रांतिकारी था। पूँजीवादी और साम्राज्यवादी सरकारें इन कलाकृतियों से कितना डरती हैं, इसके उदाहरण कितने ही मिलेंगे। इस प्रजातन्त्रवाद में 'कलाकार की स्वतन्त्रता' पर का क्या मतलब निकलता है हमें वही कलाकार जानते होंगे।

आज के युग का फ्रेंच साहित्य विश्व-साहित्य में अपना एक विशेष महत्त्व रखता है। फ्रेंच साहित्यकारों ने जमाने की बदलती हुई नई करवटों और जनता के नए संघर्षों, समस्याओं और आन्दोलनों के साथ अपनी कला का इतना घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित कर रखा है कि उनकी पुस्तकें प्रकाशित होते ही लोगों में हाथोंहाथ बिक जाती हैं। १४ अक्तूबर १९५१ के दिन ३ बजे से लेकर ७ बजे तक पेरिस में 'राष्ट्रीय लेखक समिति' सी० एन० ई० की आधीनता में एक 'विशाल बिक्री' की आयोजना की गई जिसमें सब लेखकों ने अपनी पुस्तकों पर हस्ताक्षर किए। इन चार घण्टों में हजारों पाठक अपने लेखकों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने आए और चालीस हजार रुपयों की पुस्तकें बिकीं। इस प्रकार के कितने ही अवसरों पर लेखकों और उनके पाठकों के बीच में घनिष्ठ सम्बन्ध बनाने के प्रयास किए जाते हैं। जिससे लेखक एक '[illegible]' में रहकर ही अपने पात्रों और स्थितियों की रचना न करे [illegible] युग और युग से संबन्धित उसकी अनुभूतियाँ उसकी रचनाओं में झलकें। लोगों के संघर्षों में [illegible] लेखक केवल आज हिस्सा ले रहे हों यह बात भी नहीं है। [illegible] '[illegible]' के लिए

अपना विरोध प्रकट करने पर जोला पर मुकद्दमा चला और उस महान् लेखक ने अदालत में कहा—"यहाँ सब मुझे अपने विरुद्ध जान पड़ते हैं, दो चेम्बर, नागरिक शक्तियाँ, सैनिक शक्तियाँ, बड़े-बड़े समाचार पत्र सार्वजनिक मत जिसमें जहर फैला दिया गया है। और मेरे पास सिवा मेरे विचार, सत्य और न्याय के उद्देश्य के और कुछ नहीं है। और मैं शान्त हूँ, मैं अवश्य विजयी होऊँगा।' विक्टर ह्यूगो को जनता के साथ 'पेरिस कम्यून' की असफलता के पश्चात् अपनी आवाज बुलन्द करने पर देश निकाले की सजा मिली थी, और हाल ही में १९३० के बाद हांरी बारबूस के साथ रोमां रोलां की आवाज अभी तक शून्य में खो नहीं गई है जब उन्होंने हिटलर के नात्सीवाद को रोकने के लिए विश्व के बुद्धिजीवियों की आवाजों को एकत्रित करने का प्रयास किया था। बारबूस ने अमरीका जाकर सरकार से जर्मनी के अन्दर दखल देने का अनुरोध किया था, स्पेन में फासिस्ट फ्रैंको के विरुद्ध जनता के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर जब काडवेल रेल्फ फाक्स, सैकेरोज और विश्व के कितने ही बुद्धिजीवी लड़े थे, तो आज यदि अरागों के उपन्यास, एलुआर की कवितायें, लुई दाकाँ की फिल्में, जोलियो क्योरी की वैज्ञानिक खोजें, पिकासो के चित्र आज के युग में—जब साम्राज्य-वादी परमाणु बम से विश्व की संस्कृति को जमीन के अन्दर सदा के लिए दबा देना चाहते हैं—शान्ति का नारा लगाते हैं तो हमें आश्चर्य नहीं होता। और युद्ध के समय तो फ्रांस में नात्सी शासन के अधीन "मानव आत्मा के इन शिल्पियों" ने फ्रांस के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में जो भाग लिया उसकी कहानी फ्रेंच साहित्य के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखी जायगी। कलम के वे चमत्कार तलवार को भी फीका दिखलाने की क्षमता रखते हैं। उस काल के रचित साहित्य ने न केवल साहित्यिकों और कलाकारों को एकत्रित करके एक विशाल शक्तिशाली संयुक्त मोर्चा बनाया बल्कि कितने ही नवयुवकों की लेखन-शक्ति को उत्साहित किया जिसके फलस्वरूप आज हमें पीयेर देक्स, पीयेर कूरतार, और आन्द्रे स्तिल जैसे नए उपन्यासकार, चार्ल्स दोबर्जिसकी, अलेन गैरां, जाक दुबुवा जैसे युवक कवि दिखाई देते हैं जिनके विषय में अरागों ने एक बार कहा था कि जो काम हम उस उम्र में नहीं कर सके थे, वह आज ये युवक साहित्यकार करके दिखा रहे हैं। जिस समृद्ध फ्रेंच परम्परा को आज के प्रसिद्ध और युवक लेखक और कलाकार आदि ने निभाया और निभा रहे हैं उन्हीं कदमों पर आज नये फ्रेंच लेखक चल रहे हैं और अपने जमाने के नये संघर्षों, नई अनुभूतियों और चेतनाओं के बल पर एक शक्ति-

शाली साहित्य की रचना कर रहे हैं।

अरागों की कलम से (Passengers of Destiny) और 'औरलियाँ' जैसे विश्वविख्यात उपन्यास और युद्ध के समय अनेकों कवितायें, रिपोर्ताज आदि के पश्चात् उनका नया उपन्यास 'कम्यूनिस्ट' निकला है जिसके छः भाग प्रकाशित हो चुके हैं। परन्तु अभी लगभग छः और बाकी हैं। इस लम्बे उपन्यास का कथानक स्पेनिश गृह-युद्ध से आरम्भ होता है और हिटलर की पराजय के पश्चात् फ्रांस के स्वतन्त्र होने तक चलेगा। पिछले युद्ध को लेकर कितने ही उपन्यास विश्व भर के लेखकों द्वारा लिखे गये हैं जिनमें युद्ध के विभिन्न मोर्चों की लेखकों पर प्रतिक्रिया का चित्र है। इनमें सर्वश्रेष्ठ एलुआर एहरनबुर्ग का 'तूफान', प्रसिद्ध जर्मन-लेखिका आना सिगर्स (जिनको अभी स्तालिन शान्ति पुरस्कार मिला है) का (The Dead Stay Young) और अमेरिकन उपन्यासकार अलबर्ट माल्ट्ज (जो आजकल जेल में अन-अमेरिकन कार्रवाई में बन्द हैं) का 'क्रांस एण्ड द ऐरो' माने जाते हैं। यों तो कुछ फ्रेंच लेखकों ने भी फ्रांस के दृष्टिकोण से युद्ध को उपन्यासों में चित्रित किया है जैसे सात्र की 'त्रियोलोजी' पीयेर देक्स का 'अन्तिम गढ़' आदि, परन्तु अरागो ने जिस सफलता के साथ फ्रांस में युद्ध का चित्र 'कम्यूनिस्ट' में खैंचा है उतनी ईमानदारी और सच्ची अनुभूति अन्य फ्रेंच उपन्यासों में नहीं मिलती। इसका कारण पहला तो यह है कि अरागों एक कुशल लेखक है जिसके विषय में बुर्जुआ आलोचक भी अपना विरोध प्रकट नहीं करते। अपनी पिछली कृतियों के बल पर एक कलाकार की हैसियत से अरागों विश्व के आधुनिक महान् लेखकों में से एक हैं। दूसरे जहाँ अन्य लेखक युद्ध के मोर्चों पर अपनी कलम पकड़े एक पत्रकार या लेखक के रूप में युद्ध के अनुभव लेने गए थे वहाँ अरागों ने लेखक के साथ-साथ सिपाही की भावनाओं को भी स्वयं अनुभव किया था, एक फरार की हालत में, दक्षिणी फ्रांस में गाँव-गाँव जाकर पार्टीजनों को एकत्रित किया था। इन दोनों के सम्मिश्रण से उनके उपन्यास में जो निखार, गठापन और यथार्थवाद दिखाई देता है उससे यह साहित्यिक कृति फ्रांस की साहित्यिक रचनाओं में अपना विशेष महत्त्व रखेगी। इस उपन्यास का जनता में कितना स्वागत हुआ है इसका प्रमाण केवल इस बात से मिलता है कि केवल दो वर्षों में इसके प्रत्येक भाग की ६०,००० प्रतियाँ बिक चुकी हैं और प्रथम भागों के दूसरे संस्करण भी प्रकाशित होने लगे हैं, विश्व की कितनी ही दूसरी भाषाओं में भी इसके अनुवाद हो चुके हैं।

पॉल एलुआर युद्ध से पूर्व सुररियलिस्ट थे और इस आन्दोलन के विस्तार और इसकी सफलता का बहुत कुछ श्रेय आपको जाता है। परन्तु युद्ध के वीभत्स चित्र और फ्रेंच पार्टीजनों के संघर्ष आपको लोगों के अधिक समीप खींच लाए। स्पेनिश गृह-युद्ध के समय एलुआर द्वारा लिखी गई कविताएँ—विशेषकर गर्निका के विषय में—पाठकों के सम्मुख नाजियों और फासिस्तों के विरुद्ध अन्तर्राष्ट्रीय ब्रिगेड का साहसपूर्ण संघर्ष एक सजीव चित्र खींच देती है। पिछले विश्व युद्ध के समाप्त होने पर एलुआर ने प्रगतिशील शक्तियों के साथ नाता जोड़ लिया और आज तक वे बराबर शान्ति के मोर्चे पर अपनी आवाज बुलन्द कर रहे हैं। एलुआर की कविता में 'क्लासीकल' रूप को लेकर जनता से अधिक निकट का सम्बन्ध स्थापित किया है उनकी कविताओं में 'इमेजिम' इतनी सुन्दर, सरल और मासूम होती हैं कि वे सीधी पाठक के हृदय का द्वार खड़खड़ाने लगती हैं। एलुआर की कविता साबित करती है कि आज दैनिक विषयों और लोगों की समस्याओं को लेकर भी ऊँचे दर्जे की कविता रची जा सकती है और आज बड़े से बड़ा रूपवादी आलोचक भी एलुआर की कविता को प्रोपेगेंडा कह कर उनका उपहास नहीं कर सकता।

आज जो भी फ्रेंच साहित्य से थोड़ा भी परिचित है, वह यह स्पष्ट रूप से जानता है कि लगभग सब प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध लेखकों के साहित्य में फ्रांस और फ्रेंच जाति का वह चित्र दिखाई देता है जिसमें पिछले ६ सालों में फ्रेंच सरकार द्वारा फ्रांस को डालरों के लिए 'मार्शल एड' के रूप में बेच डालना, मंहगाई का निरन्तर बढ़ते जाना, और अब फिर से शस्त्रीकरण के परिणामस्वरूप आम लोगों की आर्थिक स्थिति का बिगड़ते जाना, फासिस्टों का प्रजातन्त्रवादी शक्तियों पर हमले करना आदि ····· इन सब के चित्रित करने में पाठक अनुभव करता है कि इन सब समस्याओं और संघर्षों के पीछे युद्ध की तैयारियाँ हैं जिन्हें फ्रेंच सरकार बिना अपने लोगों का हित सोचे अमरीकन साम्राज्यवादियों के इशारों पर जोर-शोर से क्रियात्मक रूप देने पर तुली हुई है। युवक उपन्यासकार आंद्रेस्तिल का हाल ही में प्रकाशित 'पहला प्रहार' उत्तरी फ्रांस के जहाज में काम करने वालों की दशा का वर्णन है कि किस प्रकार अमरीकन अड्डों के बनने पर उनके मकानों को गिराया गया और कैसे उन्होंने अपने संघर्ष किए। इसी प्रकार पीयेर देक्स ने अपने उपन्यास 'अन्तिम किले' में पोलैंड में हिटलर के कन्संट्रेशन कैम्प 'आसविच' का चित्र खींचा है परन्तु फ्रेंच जनता में विश्वास कायम रखकर उसमें आशावादी संघर्षमय दृष्टि-कोण को दिखलाया है। और 'युवक कवियों की संध्या'—जिसमें फ्रांस के सब

युवक कवियों को एकत्रित करके उनके साहित्यिक आन्दोलन को सामूहिक रूप दिया गया है—के कवि भी कभी इस संघर्ष में पीछे नहीं रहे। इसमें १८ वर्ष से लेकर २७ वर्ष तक के कितने कवि हैं जिनमें से कुछ के कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं और आजकल वे अपना एक मासिक पत्र निकालने का आयोजन कर रहे हैं। इनमें से चार्ल्स दोबजिंस्की (२२ वर्ष) की ख्याति अमरीका, इंग्लैण्ड, बेल्जियम, पोलैण्ड आदि तक फैल चुकी है जहाँ उनकी कविताओं के अनुवाद प्रकाशित भी हुए।

फ्रांस में साहित्यिकों और पत्रों का घनिष्ठ सम्बन्ध है और इसी कारण से लगभग सभी साहित्यिक किसी न किसी पत्र में अवश्य काम करते हैं। आंद्रे स्तिल कम्यूनिस्ट पार्टी के दैनिक 'ल्यूमानिते' के सहकारी सम्पादक हैं, पियेर कूरतार भी इस पत्र में विदेशी सम्पादक की हैसियत से काम करते हैं जो पहले गेबरील पेरी के सिपुर्द था। आरागों प्रसिद्ध प्रगतिशील साप्ताहिक 'ले लेत्र फ्रांसेज्' में, पेयेर गमारा 'यूरोप' में काम करते हैं। इससे इन पत्रों में समाचारों के साथ-साथ साहित्यिकता का जो पुट आ जाता है जो पाठकों की सांस्कृतिक शिक्षा में सहायक होता है और दूसरी ओर लेखक भी दुनिया के आन्दोलनों और समाचारों से अनभिज्ञ नहीं रहते। यह सोचना भूल होगी कि इन लेखकों की साहित्यिक कृतियों में पत्रकारिता की छाया छा जाती होगी जो स्वयं अपनी साहित्यिक कोटि के प्रमाण हैं। इन सब पत्रों में शान्ति के आन्दोलन को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता है।

पिकासो के शान्ति-आन्दोलन में आने से फ्रेंच चित्रकारों का भी एक सामूहिक आन्दोलन आरम्भ हो गया है। अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति सम्मेलन हो या बर्लिन युवक उत्सव, फ्रेंच कम्यूनिस्ट पार्टी की तीसवीं वर्षगाँठ हो या नीस में फ्रेंच-इटेलियन युवक सम्मेलन, पिकासो की तूलिका सदा इन शान्ति उत्सवों के लिए तैयार रहती है और उनके वे विशेष चित्र या स्केच हजारों की संख्या में कार्डों, रूमालों, टिकटों आदि पर छपकर बाँटे जाते हैं। १९३९ में गर्निका के पश्चात् १९५१ में पिकासो का नवीनतम चित्र 'कोरिया में हत्या' बहुत प्रसिद्ध हुआ और पत्र पत्रिकाओं ने इसे छापा। इसी प्रकार आज फ्रांस में चित्रकला-जगत् में समाजवादी यथार्थवाद प्रचलित हो रहा है जिसमें आधुनिक काल में फ्रेंच जनता के संघर्षों को चित्रित किया जाता है। फुर्जरों ने सात महीनों तक कोयले की खानों में काम करने वाले मजदूरों के साथ रहकर उनकी जिन्दगी को चित्रित किया जिसकी प्रदर्शिनी ने पेरिस में धूम मचा दी। इसी प्रकार बोरिसतासलिसकी, आन्द्रे पिनयो, मिल्हो आदि

के यथार्थवाद ने युवक चित्रकारों को विशेष रूप से प्रभावित किया जिससे एबस्ट्रेक्ट और क्यूबिस्ट चित्रकला की दुनिया में एक तीव्र लहर-सी दौड़ गई। फ्रेंच शान्ति सम्मेलन के अवसर पर शान्ति के विषय को लेकर बनाये स्कैचों की एक सफल प्रदर्शिनी हुई। शान्ति आन्दोलन में फ्रेंच चित्रकार लेखकों से किसी प्रकार भी कम नहीं हैं जिसका सबूत विश्व शान्ति सम्मेलन द्वारा पिकासो को दिया गया 'शान्ति पुरस्कार' है।

यही हाल फ्रेंच फिल्मों और नाटकों का भी है। लुई दाकां आज फ्रांस के प्रमुख फिल्म-निर्माताओं में से एक हैं जिन्हें शान्ति पुरस्कार भी मिला था। उनकी फिल्म 'यह दिन हमारा है' में कोयले की खानों में काम करने वालों की जिन्दगी का सच्चा और यथार्थवादी चित्र है। इसके अतिरिक्त उनकी हाल ही में बनी फिल्म 'भगवान के पीछे महान् व्यक्ति' भी अत्यन्त सफलता से फ्रांस और अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म उत्सवों में चली। दूसरी फिल्मों 'शैतान का सौन्दर्य' 'जिन्दगी कल से आरम्भ होती है' आदि में भी युद्ध के विरुद्ध अत्यन्त तीव्रता से प्रचार किया गया है। प्रसिद्ध पोलिश लेखक कोकोवचकी का नाटक 'जर्मन लोग' अत्यन्त सफलता के साथ पेरिस में महीनों तक खेला गया। 'हांरी मारतां' की जिन्दगी का नाटक-तूलों का ड्रामा पेरिस के अतिरिक्त फ्रांस के नगरों और गाँवों में भी खेला गया। सिनेमा और थियेटर फ्रेंच जिन्दगी में अपना एक विशेष स्थान रखते हैं और सार्वजनिक विचारों को बनाने में उसका महत्त्वपूर्ण हाथ है। शान्ति आन्दोलन के विस्तार के साथ-साथ उन्होंने भी अपनी भारी जिम्मेदारी को महसूस किया और बड़ी सफलता के साथ अपना कर्त्तव्य निभा रहे हैं।

वैज्ञानिकों, डाक्टरों, प्रोफेसरों आदि ने भी शान्ति संघर्ष को विस्तृत बनाकर आन्दोलन में जान डाली जिनकी चर्चा करना इस लेख में सम्भव नहीं। फ्रेंच जिन्दगी के प्रत्येक पहलू में जितनी सामाजिक चेतना है उसी के फलस्वरूप शान्ति का नारा प्रतिदिन अधिक बुलन्द होता जा रहा है। क्योंकि प्रत्येक फ्रेंच व्यक्ति युद्ध की अहमियत को महसूस करता है और वह समझता है कि आज उसकी जिन्दगी में सबसे बड़ा प्रश्न युद्ध और शान्ति का है जिसमें वह तटस्थ नहीं रह सकता। तो फिर लोगों की जिन्दगी को चित्रित करने वाला और उसी से प्रेरणा पाने वाला बुद्धिजीवी भला किस प्रकार लोगों के जीवन-मृत्यु के प्रश्न पर उदासीन रह सकता है। सबसे बड़ी बात जो मैं फ्रेंच बुद्धिजीवियों में महसूस करता हूँ वह उनकी जनता के प्रति ईमानदारी है जिससे उनकी कला में एक नई जिन्दगी और चेतना का स्पन्दन होता रहता है। शान्ति के आन्दोलन में फ्रेंच कलाकार अपने उत्तरदायित्व को भली प्रकार जानता है और उसे निभा रहा है।

७. १४ अक्तूबर की एक शाम

'Maison de la Pensee' (बुद्धिजीवियों का घर) पेरिस के बीचों-बीच जहाँ एक ओर फ्रेंच विद्रोह का अद्भुत स्मारक 'प्लास दी ला कोनकोर' है जहाँ फ्रान्स की अन्तिम रानी मेरी एन्टोने गिलोटीन पर चढ़ी थी, ठीक उसके सामने पेरिस का सबसे रोमांटिक आकर्षण, सेन नदी हवा के झोकों के साथ बड़े वेग से बहती है—उसी के पास आज के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण स्मारक यह बुद्धिजीवियों का घर है जहाँ फ्रान्स के सबसे प्रसिद्ध लेखक अरागों, पॉल एलुआर, एलसा त्रिओले, आंद्रे वरसेसोर, जां मार्सेनेक, आंद्रेस्तिल, बीसवीं शताब्दी के अमर चित्रकार पिकासो, मातीस, ताजलिस्की फुजेरों, पिनयोन, लेजे आदि और कितने ही प्रगतिशील संगीतकार, सिनेमा के कलाकार, फिलासोफर आर्कीटेक्ट आदि समय-समय पर मिलते हैं और परस्पर विभिन्न विषयों पर बहसें होती हैं, विभिन्न कृतियों की आलोचना की जाती है और भविष्य के प्रोग्राम बनाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त विश्व के कितने ही प्रसिद्ध कलाकार पेरिस में आकर इस तीर्थस्थान में एक बार आये बिना नहीं रहते और उनके स्वागत में कितनी ही सभायें, भोज, लेक्चर प्रदर्शन आदि होते हैं। यह तीन मंजिली लम्बी-चौड़ी इमारत बुद्धिजीवियों का तीर्थस्थान है, उनकी कृतियों का मन्दिर है। यहाँ पर पहली मंजिल में बड़े-बड़े हॉल हैं जहाँ अभी पिकासो और मातीस की प्रदर्शनियाँ देखने पेरिस के लोगों की भीड़ तीन महीने तक निरंतर आती रही थी। दूसरी मंजिल में विश्व-शांति सम्मेलन का हैड ऑफिस है जहाँ जूलियो क्योरी काम करते हैं और जहाँ विश्व को परमाणु बम के और तीसरे विश्व-युद्ध से बचाने के लिए प्रयास किये जा रहे हैं। यहीं राष्ट्रीय लेखकों का दफ्तर है जहाँ प्रति शनिवार पेरिस के लेखक परस्पर मिलते हैं, जहाँ प्रकाशित होने से पूर्व विश्व की महान् कृतियाँ पढ़ी जाती हैं, तीसरी मंजिल में चित्रकारों का ऑफिस है जहाँ वे प्रति बृहस्पतिवार को मिलते हैं और चित्रों पर आलोचनायें की जाती हैं, इसके अतिरिक्त संगीतकार सम्मेलन के दफ्तर भी यहीं स्थित हैं।

१४ अक्तूबर की एक सन्ध्या···पतझड़ के कारण एविन्यू जेबरील पर लगे ऊँचे-ऊँचे पेड़ों के पीले पत्ते हवा के साथ-साथ कितनी ही दूर तक आकाश में उड़ रहे थे । इसी एवन्यू पर अमेरिका और ब्रिटेन की विशाल एम्बेसियाँ स्थित हैं परन्तु आज इनका महत्त्व 'नहीं' के बराबर ही था क्योंकि लोगों की भीड़ इस एवन्यू के अन्तिम मकान की ओर बढ़ी जा रही थी । परिवारों के झुण्ड, विवाहित जोड़ों की टोलियाँ, स्कूल और कालेजों के युवक और युवतियाँ ···सब के सब 'बुद्धिजीवियों के घर' की ओर अग्रसर हो रहे थे, पेरिस के कोने-कोने से और पेरिस में रहने वाले विदेशी··· क्योंकि आज इन तीर्थ-स्थानों पर फ्रेंच लेखकों और अनगिनत पाठकों के बीच एक घना सम्बन्ध होने वाला था और कितनी ही नई पुस्तकें जैसे आरागों के 'कम्युनिस्ट' उपन्यास का चौथा भाग, पाबलो नरुदा की कविताओं का संग्रह, एलसा त्रियोले की अनुवादित पुस्तक 'कोचीन की लड़की', गमारा का नया उपन्यास 'काली रोटी के बच्चे', आंद्रे बरमेसीर की उपन्यास-शृंखला की चौथी पुस्तक आदि आज पहली बार प्रकाशित रूप में लोगों के सामने प्रस्तुत की जा रही थीं । इन नई पुस्तकों के अतिरिक्त सारी प्रगतिशील पुरानी पुस्तकें भी बिक्री के लिये थीं । और आज का सबसे बड़ा आकर्षण यह था कि ये सब लेखक अपनी पुस्तकों पर हस्ताक्षर कर रहे थे, फिर ऐसा सुनहरा अवसर कोई भी अपने हाथ से जाने देना नहीं चाहता था।

इमारत के सामने नीली वर्दी पहने कुछ सिपाही खड़े थे, यह आज कोई नई बात नहीं थी । प्रत्येक प्रगतिशील सभा में चाहे वो सिनेमा हो या संगीत-प्रदर्शन, उनकी उपस्थिति सदा अनिवार्य होती थी, बड़े से मैदान में लोगों की अपार भीड़ दरवाजे के सामने खड़ी थी और प्रत्येक ३-४ मिनट के पश्चात् दस-पन्द्रह लोगों को अन्दर भेज दिया जाता था । परन्तु बाहर आने वालों की संख्या बहुत कम थी, मानो वे इस अवसर का अन्दर पहुँच कर पूर्ण लाभ उठाना चाहते थे । बाहर प्रसिद्ध साप्ताहिक सांस्कृतिक पत्र, लेलेत्र फ्रांसेज और शाम का प्रगतिशील दैनिक 'सस्वार' बिक रहे थे ।

आखिर आधा घंटा बाहर प्रतीक्षा करने के पश्चात् मुझे अन्दर जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । बड़े-बड़े हॉल, कमरे, रास्ते—सारे स्थान में चारों ओर सफ़ेद दीवार के साथ-साथ लेखकों के काली स्याही में लिखे नाम दिखाई दे रहे थे जिनके सामने लोगों की अपार भीड़ थी । कहीं-कहीं किसी बड़े लेखक का नाम पढ़कर एक बार उसे देखने की इच्छा जागृत होती थी परन्तु फिर भीड़ देख कर एक बार चुप हो जाता था । आगे बढ़ना

भी कम कठिन नहीं था और लोगों के धक्के लगाने पर उनकी एक मुस्कान देखकर मुस्करा कर ही आगे बढ़ना पड़ता था। ये फ्रेंच लोग—इनमें आत्मीयता और अपनत्व की भावना कूट-कूट कर भरी पड़ी थी, जिसका परिचय मुझे पेरिस में दस मास रह कर पूर्णरूप से हो गया था। किसी प्रकार भी भीड़ के कम होने की सम्भावना न होने पर मैंने भी भीड़ में घुस कर कुछ पुस्तकें खरीद कर उनके लेखकों के हस्ताक्षर लेने का निर्णय किया।

दरवाजे से कुछ ही दूरी पर एलसा त्रिओले का नाम पढ़ कर मैंने उनकी रूसी से अनुवादित पुस्तक 'कोचीन की लड़की' (जिसमें एक रूसी लड़की हेवा कोस्तानीनोवा की डायरी और कुछ लेख हैं और जो १८ वर्ष की आयु में जर्मनों से लड़ती हुई मारी गई थी, इसको अनुवादित करने की आज्ञा त्रिओले को इलया एहरनबर्ग ने दी थी) खरीदने की सोची। एलसा के मुख पर पसीने की बूँदें झलक रही थीं क्योंकि पिछले दो घण्टों से वे निरन्तर पाठकों के नाम और अपने हस्ताक्षर कर रही थीं और अभी ३, ४ घण्टों तक और बिना एक क्षण भी आराम किये उन्हें अपनी कलम घिसनी थी। दो व्यक्ति वह पुस्तक बेच रहे थे और पाठक या पाठिका के नाम की चिट रख उसे एलसा के आगे बढ़ाते जा रहे थे। एलसा प्रत्येक बार खरीदने वाले को देखती थीं और फिर मुस्करा कर अपने हस्ताक्षर कर देती थीं और पाठक का नाम लिख देती थीं। मुझे भारतीय जान कर उन्होंने हाथ मिलाया और फ्रेंच में भारत के विषय में कुछ शब्द कहे, अपने चारों ओर लोगों को अपनी ओर देखते हुए मैंने सचमुच ही भारतीय होने का गर्व किया। लोगों में कितना उत्साह था, कितनी उत्सुकता थी। वे हँसते हुए किताबों के बन्डल बगल में दबाये इधर-उधर घूम रहे थे।

बाहर अक्तूबर का आकाश बादलों से घिरा हुआ था और सर्दी का प्रकोप अन्य दिनों की अपेक्षा बढ़ गया था परन्तु अन्दर भीड़ के कारण लोग गरमी अनुभव कर रहे थे और कितने ही लोगों ने कमीज़ के ऊपर का बटन खोल कर टाई की गांठ ढीली कर दी थी। एक बार खिड़की में से बाहर झाँका तो देखा कि लोगों की भीड़ कम होने की अपेक्षा बढ़ती ही जा रही थी। लोग अपना काम समाप्त करके इस इमारत की ओर बढ़े आते थे क्योंकि पिछले कितने ही दिनों से इस सभा की चर्चा समाचार पत्रों में छप रही थी, जहाँ नई पुस्तकों की आलोचनायें थीं, लेखकों की फोटो थीं, उनकी पुस्तकों के विषय में उन्हीं के विचार छपे थे। तब फिर ऐसे देश में लेखक होने का उत्साह अत्यन्त स्वाभाविक है और आज का दिन क्या उनकी
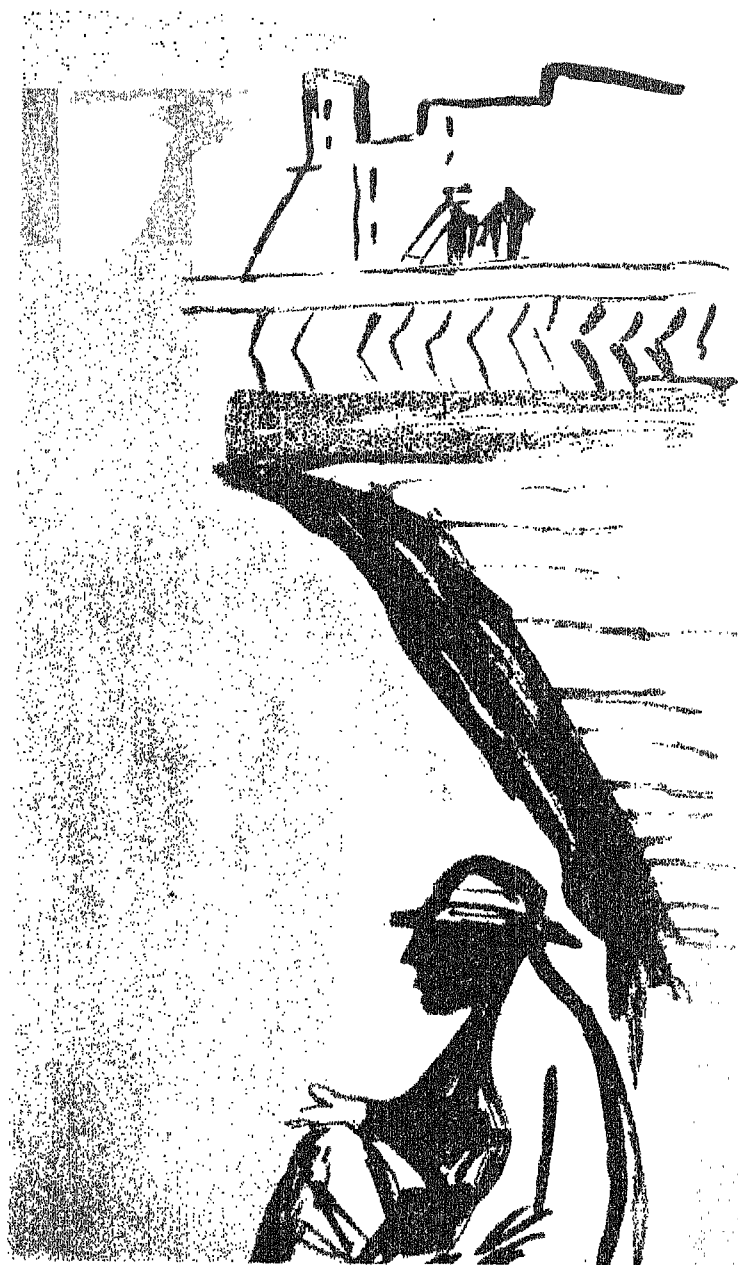
पेरिस में सेन नदी के किनारे

जिन्दगी का एक सबसे महत्वपूर्ण दिन नहीं है जहाँ अपनी पुस्तकों में दिलचस्पी लेने वाले अनगिनत पाठकों से वे एक नया सम्बन्ध स्थापित कर रहे थे। और ऐसे वातावरण में क्या कितने ही लोगों को लेखक बनने की प्रबल आकाँक्षा नहीं हुई होगी ?

इस स्टाल पर भी कितनी ही भीड़ नजर आ रही है। नाम पढ़ा तो भीड़ का होना स्वाभाविक जान पड़ा। पाबलो नरुदा की कवितायें कितने ही लोगों को कण्ठस्थ याद थीं। अपने देश से निकाले हुए इस चिलियन कवि की गणना बीसवीं शताब्दी के अमर कवियों में होती है। फिर आज के दिन यही एक विदेशी अतिथि लेखक थे और फ्रेंच लोग अपने अतिथि का स्वागत करना भली प्रकार जानते हैं। आयु अधिक नहीं थी, स्वस्थ शरीर और आँखों में शान्त क्रान्ति की चिंगारियाँ थीं जो कविता लिखते समय अवश्य लपटें बन जाती होंगी, जिनमें नरुदा विश्व की सब शोषण करने वाली और मानवता का गला घोंटने वाली शक्तियों को भस्म कर देना चाहते होंगे। उनकी ५५० पत्रों की पुस्तक 'आम गील' खरीदने से शायद कुछ ही लोग चूके होंगे। मेरी पुस्तक पर उन्होंने लिखा 'अपनी शुभ इच्छाओं के साथ—एक नये भारतीय मित्र को—' नरुदा के साथ बिताये वे दो क्षण क्या कभी भुलाये जा सकते हैं ?

एक लेख में २०० लेखकों की चर्चा करना असम्भव है, कितने ही युवक और युवतियाँ (जिनकी आयु बीस और तीस वर्ष के बीच में थी) अपने स्टालों पर बैठे अपनी पुस्तकों पर हस्ताक्षर कर रहे थे। लोगों का कभी समाप्त न होने वाला समूह निरंतर बढ़ता आ रहा था और लेखकों को साँस लेने का अवसर भी न मिलता था, कभी-कभी भीड़ जरा कम हो जाने पर वे रूमाल से पसीना पोंछ लेते थे और कभी सिगरेट सुलगा लेते थे। और बीच-बीच में अपने पास बैठे लेखक या लेखिका से मुस्करा कर दो बातें कर लेते थे। फोटो लेनेवालों की भी कमी नहीं थी और कितनी ही बार उनके बल्ब जलने पर लोग उस दिशा की ओर देख लेते थे। गोदाम से विभिन्न पुस्तकों के बन्डल लेखकों के पास पहुँचाये जा रहे थे। पीयेर गमारा को देखकर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। तीस से कम आयु थी, दुबला-पतला छरहरा शरीर और आँखों पर चश्मा था। आंद्रे वर्मेसीर ने तो अपने लेख में यहाँ तक लिखा था कि बच्चों को स्पर्श करने तक का साहस टालस्टाय, बालजाक, जोला आदि को नहीं हुआ था और यह पुस्तक लिखकर गमारा ने एक नई दिशा का स्पर्श किया है जिसमें वे अत्यन्त सफल हुए हैं। यह उप-

न्यास रोमांटिक कवितामयी भाषा में लिखा हुआ है।

२८ वर्ष के पीयेर डेक्स के प्रसिद्ध उपन्यास 'अन्तिम किला' की हजारों प्रतियाँ बिक चुकी हैं और अरागों तक ने लेखक के इस प्रथम उपन्यास की भरपूर प्रशंसा की है, परन्तु फिर भी आज पीयेर के स्टाल पर काफी भीड़ थी। वह युद्ध-कालीन कथानक पर लिखा हुआ एक सफल उपन्यास है।

और ऊपर की मंजिल के बड़े से हॉल में घूमते ही युवक कवियों की टोली ने मेरा स्वागत किया। वे पत्रिकाओं के स्टाल में सहायता कर रहे थे। 'एक व्यक्ति का विश्व में आगमन' नाम के उपन्यास का पाँचवाँ भाग 'डेनिस पुनः खोज ली गयी' आज जनता के सम्मुख प्रथम बार आया था और जिन लोगों ने इनके पिछले चार उपन्यास पढ़े थे वे लेखक की शैली और महानता से परिचित होने के कारण बड़ी उत्सुकता से यह पाँचवीं पुस्तक खरीद रहे थे। आंद्रे वर्मेसीर के साहित्यिक ज्ञान से आज कोई भी अपरिचित नहीं है और इनकी आलोचनाओं को विश्व में अत्यन्त महत्त्व दिया जाता है।

गरोदी राजनीतिक होने के साथ-साथ साहित्य का भी अच्छा ज्ञान रखते हैं। साहित्य-जगत् में 'कब्रिस्तान का साहित्य' में फ्रेंच प्रतिक्रियाशील लेखकों की फिलासफी और खोखलेपन की व्याख्या भी बहुत सुन्दर ढंग से की है। साईमन टेरी (जो अभी रूस की यात्रा करके लौटी हैं) अपने स्टाल पर फ्रेंच प्रगतिशील स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती हुई बैठी थीं।

और अन्त में आज के दो महान् लेखकों की चर्चा करूँगा। पॉल एलुआर की कविता से शायद ही कोई अनभिज्ञ होगा। बड़ी उत्सुकता से इनकी कविताओं की प्रतीक्षा की जाती है और छपने पर जोर-शोर से उसकी चर्चा पेरिस के साहित्यकों में होती है। इनकी कितनी ही पुस्तकें अनगिनत भाषाओं में अनुवादित हो चुकी हैं। अपने मित्र पिकासो के प्रति इन्होंने कितनी ही कवितायें और एक बड़ा ग्रन्थ लिखा है। भारी शरीर और चेहरे पर नम्रता थी और समय की गहरी छाया स्पष्ट रूप से उनके मुख पर अंकित थी। इनके स्टाल पर भी घन्टों लोगों का तांता बना रहा और एलुआर कभी थके नहीं, अपने प्रत्येक पाठक के लिये उनके पास एक मुस्कान थी और एक अजीब-सा हस्ताक्षर और पाठक इन दोनों को पाकर हँसता हुआ दूसरे लेखक के पास जा खड़ा होता था।

अरागों एक अलग कोने में विराजमान थे और उनके पाठकों की संख्या का अनुमान लगाकर उस कमरे के बाहर एक बड़ा-सा बरामदा खाली छोड़ दिया गया था जिससे लोगों की कतार ठीक से बन सके। और सात घन्टों

तक यह कतार कभी समाप्त नहीं हुई, लोग आते रहे और जाते रहे परन्तु कतार वैसी ही बनी रही । इससे किसी को भी आश्चर्य नहीं हुआ। उनके उपन्यास 'कम्यूनिस्त' का चौथा भाग आज पहली बार लोगों को देखने को मिला था और जल्दी ही घर जाकर उपन्यास पढ़ने की अधीरता सब में बनी हुई थी। आरागों की सहायता के लिये चार अन्य व्यक्ति थे जो उनका हाथ बँटा रहे थे। कितने ही फोटोग्राफर दरवाजे पर खड़े होकर आरागों की फोटो ले रहे थे। लम्बा कद, स्वस्थ-शरीर, सिर पर श्वेत और काले बालों का मिश्रण था। उपन्यासकार से अधिक लोग उन्हें कवि के रूप में जानते हैं और अनगिनत संग्रह उन कविताओं के प्रकाशित हो चुके हैं । कितने ही लेखक आज आरागों के उत्साह और साहस देने वाली आलोचना से सफल हुए हैं। वर्तमान फ्रेंच प्रगतिशील साहित्य में आरागों का कितना महत्त्व है इसकी चर्चा एक दिन फ्रेंच साहित्य का इतिहास लिखते समय की जायेगी । वे मुस्कराते हुए हस्ताक्षर कर रहे थे और कभी-कभी किसी पाठक या पाठिका से हँसी मजाक भी करते जा रहे थे।

इन लेखकों के अतिरिक्त कितनी ही चित्रपट अभिनेत्रियाँ और अभिनेता, संगीतकार लेखकों की सहायता के लिए उनके पास बैठे थे। और किसी भी व्यक्ति को इन लेखकों के साथ बैठने में गर्व होता और ऐसा ही शायद वे अनुभव कर रहे थे। दूसरे कलाकारों की एकता का परिचय भी स्पष्ट रूप से मिल रहा था । सिनेमा प्रेमी इन अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के हस्ताक्षर भी लेते थे। ऊपर बार और रेस्तरां था जहाँ थके हुए लोग अपनी थकान मिटाने के लिए चाय या कॉफी का एक प्याला पी रहे थे।

सारे वातावरण में एक अपनापन था मानों एक दूसरे से अपरिचित होते हुए भी वे एक ही पथ के यात्री थे जिन्हें एक ही मंजिल पर पहुँचना था। आज फ्रांस के प्रगतिशील लेखकों की लोकप्रियता और पाठकों की भावनाओं का एक आभास मिलने पर मैंने क्षण भर के लिए सोचा कि इस साहित्य के सामने सात्र का एक्जिस्टेंशलिज्म, आंद्रे मारियाक जैसे लेखक और आंद्रे मार्लो की बुर्जुआ फिलासफी का स्थान कहाँ है ? जनता से सम्पर्क रखने वाला यह साहित्य सदा के लिये अमर रहेगा और समय के साथ-साथ इसकी प्रगति होती जायेगी।

अन्त में चार घन्टों के चक्कर लगाने के पश्चात् जब 'बुद्धिजीवियों के घर' से बाहर निकला तो पेरिस की सड़कों पर बिजलियाँ चमक रही थीं परन्तु दरवाजे के बाहर उतनी भीड़ अन्दर जाने की प्रतीक्षा कर रही थी।

जितनी मैं छोड़ गया था । मैं सोच नहीं सका कि कब इसका अन्त होगा। इस तीर्थस्थान में आज की शाम शायद कोई चूकना नहीं चाहता था और जब मैं 'प्लास दी ला कौनकोर' की दिशा में मेट्रो पकड़ने के लिये गया तो पेरिस की आज की संध्या के विषय में ही सोचता रहा ।

८. लुई अरागों: लेखक और सैनिक

सन् १९४४ में जब फ्रांस के कुछ भागों ने अपने आपको नाज़ियों के शासन से स्वतन्त्र कर लिया था तब अरागों ने 'स्वतन्त्रता' लेख में लिखा—"सब पार्टियों के सदस्यों, देश के भीतर स्वतन्त्रता-आन्दोलन में लड़ने वाले सिपाहियों, अपने आपसी झगड़े भूल जाओ ! सब मिलकर एक हो जाओ, जिससे तुम भविष्य में आनेवाली ज़िम्मेदारियाँ खुशी से उठा सको, जिससे फ्रांस स्वतन्त्र और खुशहाल रह सके !" यह लेख फ्रांस के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में अरागों द्वारा लिखे गए अनेक लेखों और कविताओं में शायद अन्तिम था, और आज भी अरागों अपनी ज़िम्मेदारी जितनी सफलता से निभा रहे हैं उनसे सबको आश्चर्य होता है। २० वर्ष पूर्व किसने सोचा था कि पेरिस के बुलीवारों और गलियों में घूमता हुआ, पेरिस के कैफ़ों में आधी-आधी रात तक अपने साथियों के साथ बैठा हुआ यह लेखक और कवि किसी दिन फ्रांस के लेखकों और बुद्धिजीवियों का केन्द्र बन जायेगा, विश्व-शान्ति के संघर्ष में अपनी आवाज़ को बुलन्द करेगा।

सबसे पहले अरागों हमारे सामने गद्य लेखक के रूप में आते हैं जब 'दादाइज़्म' का प्रभाव उन पर अपनी छाप पूर्ण रूप से लगाये हुए था और वे अराजकतावादियों और क्रान्तिकारी रोमांटिक युवक लेखकों की सभा में पहले महायुद्ध के पश्चात् काम करते थे। परन्तु उन लेखकों के सैद्धांतिक विचारों और उनके कार्यक्रम से वे कभी पूर्ण रूप से सहमत नहीं थे। इन दो महायुद्धों के बीच का समय उनकी उन्नति का पहला युग था जब अधिकतर उन्होंने गद्य लिखा और फ्रेंच साहित्य में अपने लिए एक विशिष्ट स्थान बना लिया। जिस प्रकार सेज़ां की कला फ्रांस के 'कला-संग्रहों' पर छाकर एक नवीन दिशा की ओर बह चली थी, उसी प्रकार अरागों की कला भी फ्रेंच साहित्य की परम्पराओं और फ्रांस की ज़िन्दगी के साथ एक घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित कर चुकी थी। उस समय वे आन्द्रे जीद के अनन्य भक्त थे। फिर उन पर सररीयलिज़्म का प्रभाव पड़ा और वे १९२५ से लेकर १९३१ तक उस समय के विख्यात् सररीयलिस्टों (जिन में पॉल एलुआर एक उच्च कोटि के कवि थे)

के सम्पर्क में आये। उस समय एक प्रकार की अराजकता की जो भावना युवक लेखकों और कलाकारों में थी वह अरागों पर भी पूर्ण रूप से हावी थी। परन्तु उनका गद्य भली प्रकार मँजा हुआ और उच्च कोटि का होता था जिसके विषय में कभी दो मत नहीं हुए। इस बीच उनके कुछ उपन्यास प्रकाशित हुए जो कला की दृष्टि से महान् थे परन्तु वास्तविकता से दूर होने के नाते अपने युग का प्रतीक न बन सके।

सन् १६३१ के पश्चात् अरागों की जिन्दगी का एक नया युग आरम्भ होता है जब सररीयलिस्टों की टोली से वे अलग हो गये और दूसरे विश्व-युद्ध के पूर्व अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की जो छाया फ्रांस पर पड़ी थी वह उन पर भी पूर्ण रूप से पड़ी। तभी उनकी रचनाओं में यथार्थवाद का प्रभाव अधिक बढ़ा। युद्ध आरम्भ होने के पूर्व १६३६ में वे पेरिस के एक वामपक्षी शाम के समाचार पत्र 'स स्वार' का सम्पादन कर रहे थे जिसकी ५ लाख प्रतियाँ प्रतिदिन बिकती थीं। लेखक होने के साथ-साथ सम्पादन कार्य भी उन्होंने बड़ी सफलता के साथ किया। उस काल के सम्पादन कार्य के अनुभव अरागों के लिए नाजियों के शासन के अन्दर अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए, क्योंकि उन्हें कितने ही पत्र, पत्रिकाओं, पेम्फलेटों आदि का सम्पादन करना पड़ा। इससे न केवल लेखकों की कलम जीती रही वरन् लेखकों का एक विशाल संयुक्त मोर्चा नाज़ियों के विरुद्ध बनना सम्भव हो सका जिसने फ्रांस के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में लोगों को उत्साहित किया।

अगले पाँच साल अरागों की जिन्दगी और उनकी कला के लिए सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण थे और उनके इतिहास को दोहराना फ्रांस की कहानी कहना है, क्योंकि उस समय दोनों में कोई अन्तर नहीं रहता। जैसा कि अरागों ने एक बार लिखा कि फौजी कपड़े पहनकर और हाथ में बन्दूक लेकर एक व्यक्ति अपनी निजी जिम्मेदारी से मुक्त हो जाता है कि उसे अपने अफसर के आदेशों को ही पालना पड़ता है। परन्तु गैरक़ानूनी या फरार बनकर उस व्यक्ति का उत्तरदायित्व कहीं अधिक बढ़ जाता है। फ्रेंच बुद्धि-जीवियों और अंग्रेज एवं अमेरिकी बुद्धिजीवियों में यही अन्तर था। क्योंकि वे सैनिक बने हुए थे और फ्रांस पर शासन होने के पश्चात् फ्रेंच बुद्धिजीवी फरार होकर छिपे हुए काम कर रहे थे। इसी कारण युद्ध-काल में लिखे गए फ्रेंच साहित्य में जितनी जिन्दगी, संघर्ष की भावना, एक नया निखार और लोगों के साथ एक नया दृढ़ सम्बन्ध देखने में आता है, वह उस काल के अंग्रेजी या अमेरिकन साहित्य में नहीं मिलता।

युद्ध आरम्भ होते ही 'स स्वार' बन्द हो जाने के पश्चात् ४२ वर्ष की आयु में अरागों सैनिक बन गए। इस सैनिक अवस्था में कितनी ही बार ये मौत के मुँह से बचे और एक बार नाज़ियों के बन्दी बनने के बाद वे भाग आये। सैनिक कार्य के लिए उन्हें फ्रेंच सरकार की ओर से तीन पदक भी मिले। पेरिस का पतन हुआ और अरागों को अपनी पत्नी एल्ज़ा सहित दक्षिण फ्रांस भाग जाना पड़ा। जहाँ वे कभी एल्पस की पहाड़ियों में और कभी छोटे-छोटे गांवों में युद्ध के अन्त तक रहे। फ्रांस पर जर्मनी का आक्रमण होते ही अरागों की कविता का स्रोत स्वाभाविक रूप से फूट पड़ा। मानों कितने ही वर्षों से इस क्षण की प्रतीक्षा कर रहा हो। इस काल में जिन लोगों को भी उनके साथ रहने एवं काम करने का अवसर मिला, वे सब के सब अरागों की अपार शक्ति से प्रभावित हुए, वे जहाँ कहीं भी, किसी भी दशा में होते थे चाहे वह सैनिक का शिविर हो या डंकिरक के समुद्र का तट, उनका अपना छोटा-सा कमरा हो या शरणार्थियों से भरा हुआ किसी स्टेशन का वेटिंग रूम, अरागों की कलम कभी नहीं रुकती थी। कभी वे किसी बुद्धिजीवी के नाज़ियों द्वारा हत्या किया जाने पर लेख लिखते और कभी फ्रेंच लोगों को संघर्ष करने को प्रेरित करते। युद्ध आरम्भ होने से पूर्व उन्होंने अपना नवीन उपन्यास 'औरेलियों' लिखना आरम्भ किया था और युद्ध की इस अनिश्चित जिन्दगी में भी अन्य छोटे लेखों और कविताओं को लिखने के अतिरिक्त इस उपन्यास पर वे काम करते रहे।

कुछ समय तक अरागों खुले आम नाज़ियों के शासन के विरुद्ध कवितायें लिखते रहे, परन्तु सेंसर से बचने के लिए बहुत बार सचेत होकर अपने सब भावों को वे खुले रूप से प्रकट नहीं करते थे। 'लिली और गुलाब' नामक कविता को किसी ने 'ला फिगारो' समाचार-पत्र में भिजवा दिया और वह प्रकाशित भी हो गई। इस कविता ने फ्रांस के अन्य लेखकों और कवियों को भी प्रेरणा दी और फिर कितने ही लेख और कवितायें सब क़ानूनी पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। 'राष्ट्रीय लेखक समिति' की अधीनता में दक्षिणी फ्रांस के अन्य लेखकों को भी एकत्रित करने की अरागों ने ठानी और नये युवक लेखकों के अतिरिक्त आंद्रेजीद, सात्रे, मारीयाक आदि भी इस संस्था में आये। पियेर सिघर्स एक पत्रिका 'कविता' का सम्पादन कर रहे थे और उन्होंने इसके पन्ने इन सब लेखकों की रचनाओं के लिए खोल दिये। जिन कविताओं में बहुत खुले रूप से फ्रेंच लोगों को नाज़ियों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए उभाड़ा गया था एवं उन लोगों का पर्दा फ़ाश किया गया था जो नाज़ियों के

साथ मिलकर फ्रेंच लोगों में यह प्रचार कर रहे थे कि फ्रेंच लोगों को अब नाज़ियों के विरुद्ध लड़ने की आवश्यकता नहीं है—इस साहित्य को या तो पेम्फ़लेटों के रूप में ग़ैर-क़ानूनी रूप से प्रकाशित किया जाता था या किसी विदेश भेज दिया जाता था जहाँ छप कर उसकी कुछ प्रतियाँ फ्रांस में छिपा कर भेज दी जाती थीं। 'कविता' की भाँति कुछ अन्य पत्रिकायें भी इन कवियों की कविताओं को प्रकाशित करने लगीं। कभी-कभी तो एक कविता १५-१६ विभिन्न पत्रिकाओं में छप जाती थीं।

इस काल में अरागों की कविता के दो रूप हो गए, पहला क़ानूनी और दूसरा ग़ैर-क़ानूनी। ग़ैर-क़ानूनी कविता में कवि के सामने न सेंसर होते थे और न ही गेस्टापो द्वारा पकड़े जाने का भय। अतः उनकी कविता में जिस नये यथार्थवाद ने जन्म लिया वे फ्रेंच कविता के इतिहास में एक नया युग माना जाता है जब फ्रेंच कविता 'दादाइज़्म', 'सररीयलिज़्म' आदि के पश्चात् यथार्थवाद के मार्ग पर बड़ी तेज़ी से बढ़ चली। इसका श्रेय अरागों को है। अरागों ने स्वयं भी कभी इतनी कवितायें न लिखी थीं जितनी उस काल में उनकी कलम से निकलीं। यह एक प्रकार से स्वाभाविक भी था कि युद्ध काल की परिस्थितियों को देखते हुए सीमाओं में बंधे हुए और बहुत कुछ छिप कर ग़ैर-क़ानूनी रूप से साहित्य प्रकाशित करने में कविता ही एक ऐसा साधन और शस्त्र था जो आम लोगों में दूर-दूर तक अपना प्रभाव सुगमता से डाल सकता था। इसी कारण से उस काल में रचित साहित्य बहुत कुछ कविता में था। अरागों एवं दूसरे कवियों की कवितायें हाथों से लिख-लिख कर रात को लोग अपनी जान हथेली पर रखकर मकानों के दरवाज़ों से अन्दर डाल आते, जेलों और नाज़ियों के कंसेंट्रेशन कैंपों के भीतर पार्तीज़न इन कविताओं को गाते और सूली पर चढ़ते समय शहीदों के लिए यही पंक्तियाँ आश्वासन बन जातीं। इस कविता के विषय में अरागों ने अपने एक मित्र को फ्रांस स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात् एक पत्र में लिखा—"यह नई कविता जाने या अनजाने में कुछ लेखकों और कवियों के बीच षड़यन्त्र थी जिसने हमारे साहित्य में उस आवश्यक देशभक्ति की सुगन्धि डाली और वे विचार प्रगट किये जो हमारे स्वामी नहीं चाहते थे।" अरागों की कविता का लोगों पर प्रभाव देख कर नाज़ियों का दबाव डालने से विची फ्रेंच सरकार ने सब पत्रिकाओं को अरागों की कवितायें छापने से मना कर दिया, परन्तु बीसियों दूसरे नामों से अरागों की कवितायें छपती रहीं और पाठक कविता पढ़ते ही वास्तविक लेखक का आभास पा लेते थे।
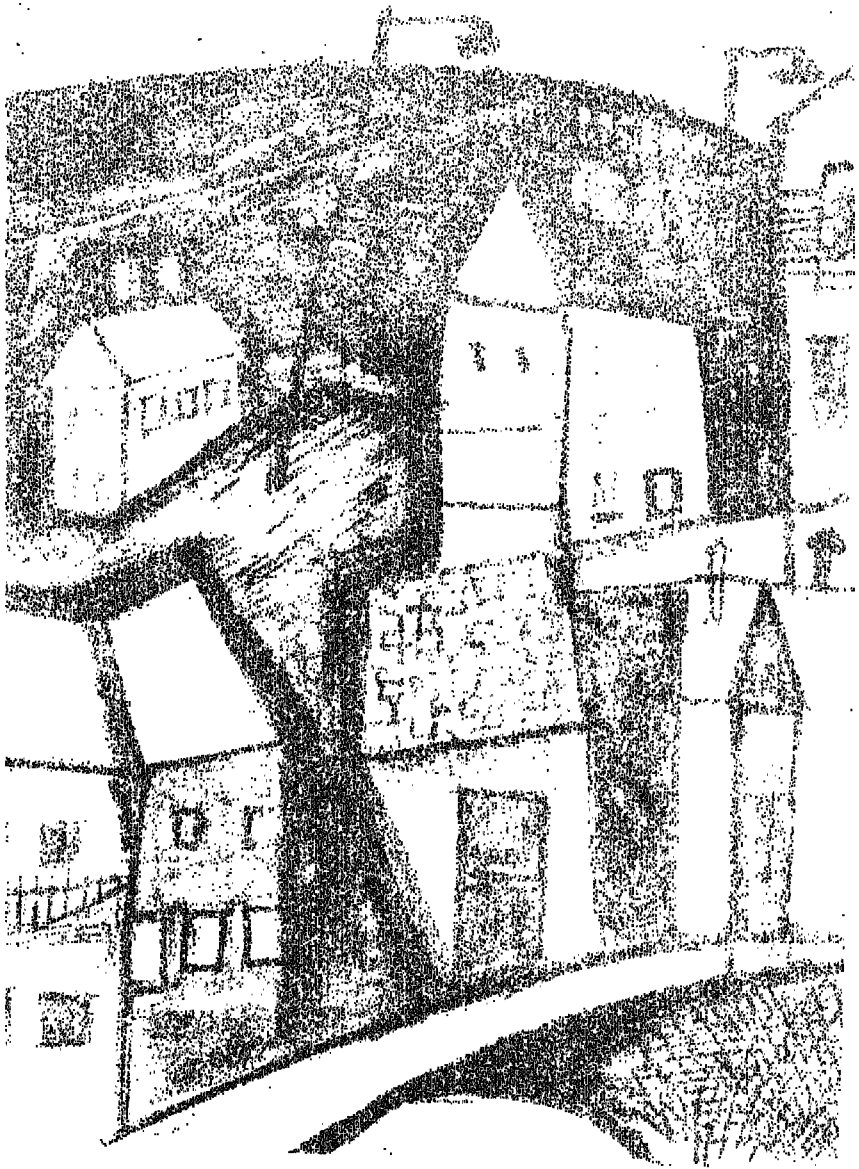
पोलैण्ड का एक गांव

सन् ४२ में इटेलियन फ़ौजों के नीस में आ जाने से अरागों और एल्ज़ा को फ़रार होना पड़ा और वे नाम बदल बदल कर कभी पहाड़ों में और कभी गाँवों में रहने लगे। परन्तु उनका संघर्ष जारी रहा। वे छिप कर अपने साथियों से मिलते रहे और अपनी रचनायें भेजते रहे। उनका संघर्ष कभी ढीला नहीं पड़ा। एक बार बहुत भारी ख़तरा उठा कर अरागों और एल्ज़ा दोनों कितनी ही अप्रकाशित कृतियों की पांडु लिपियाँ लेकर एक प्रकाशक को देने के लिए पेरिस गए। बीच ही में एक स्थान पर गेस्टापो ने सब यात्रियों के सामान को पूर्ण रूप से तलाशी ली। अरागों के डिब्बे में सब स्त्रियों के हाथ के बेग तक देखे गये, एल्ज़ा के बेग में वे सब पांडु लिपियाँ थीं। गेस्टापो का एक सैनिक एल्ज़ा का बेग हाथ में लिए खोलने ही वाला था जब कि किसी अफ़सर ने उसे आवाज़ दी। वह बेग को एल्ज़ा के हाथों में थमा कर चला गया। लौटने पर उसे बेग की तलाशी लेनी याद न रही। यदि वह तलाशी लेता तो कितनी ही कृतियाँ सदा के लिए नष्ट हो जातीं और अरागों और एल्ज़ा पर क्या बीतती उसका अनुमान लगाना कठिन नहीं।

अरागों की आर्थिक स्थिति भी बहुत बुरी थी। एल्ज़ा ने अमेरिका में प्रकाशित अरागों के उपन्यास 'नियति के यात्री' को दिखा कर मुझे बतलाया कि इस पुस्तक की रायल्टी ने युद्ध काल में उनकी बहुत सहायता की। जितना बड़ा परिश्रम अरागों स्वयं करते थे वैसा ही वे अपने साथियों से भी चाहते थे। इसी बीच में अरागों ने कितनी ही फ्रेंच लेखकों की सभाओं में भाग लिया और 'राष्ट्रीय लेखक समिति' के मोर्चे को अधिक दृढ़ बनाया। विभिन्न राजनीतिक और सामाजिक विचारों वाले लेखक जैसे—कैथोलिक, सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट आदि—इस संस्था के अन्दर आये। मेक्स जेकोब, पॉल एलुआर, ट्रिस्तन ज़ारा जैसे सररीयलिस्ट लेखकों ने भाग लेकर इस आन्दोलन को अधिक शक्तिशाली और विस्तीर्ण बनाया।

फ्रांस के स्वतन्त्र होने पर रिपोर्टों से मालूम पड़ा कि दक्षिणी फ्रांस में लेखकों के आन्दोलन के फलस्वरूप २०० पत्र और पत्रिकायें प्रकाशित होने लगे थे जिनकी लाखों प्रतियाँ पाठक खरीदते थे युद्ध के बाद जब अरागों अपनी पत्नी सहित पेरिस लौटे तब स्टेशन पर उनका स्वागत करने वालों में पॉल एलुआर भी थे। सन् १९३१ में सररीयलिस्टों का खेमा छोड़ने के पश्चात् अरागों फिर कभी इस महान् कवि से नहीं मिले और उस दिन १३ वर्षों के पश्चात् दो महान् लेखकों का यह मिलन केवल भावुकतापूर्ण ही नहीं वरन् भविष्य में 'राष्ट्रीय लेखक समिति' को शक्तिशाली बनाने में भी बहुत सहायक

सिद्ध हुआ।

यदि अरागों के साहित्य पर एक आलोचनात्मक दृष्टि डाली जाए तो पता चलेगा कि वास्तव में अरागों कवि की अपेक्षा उपन्यासकार और गद्य लेखक अधिक उच्च कोटि के हैं। इस युद्ध काल में उन्होंने जो कवितायें लिखीं वे फ्रेंच साहित्य के इतिहास के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि फ्रेंच कविता का इस काल में पुनर्जन्म हुआ। परन्तु उनके उपन्यास 'नियति के यात्री', 'औरेलियो' आदि को पढ़ कर पता चलता है कि इस कला में अरागों कितने उच्च कोटि के कलाकार हैं। वर्तमान युग में अरागों विश्व के इने-गिने उपन्यासकारों में से एक हैं। उनके उपन्यास फ्रांस की महान् विभूतियों—बालजाक, स्टेंढल, जोला, रोमां रोलां—की परम्पराओं से घने सम्बन्ध स्थापित करके उन्हें आगे ले गए हैं। उनके मंजे हुए कलाकार होने के विषय में दो मत नहीं हैं। उनके उपन्यासों में फ्रेंच जिन्दगी का एक सजीव चित्र मिलता है जिसके पात्र अपने युग की परिस्थितियों का प्रतिनिधित्व करते हैं और सात्र, मारियाक, जूल रोमां, कास्यू की भाँति फ्रेंच जिन्दगी के एक छोटे से सड़े-गले टुकड़े को ही चित्रित नहीं करते। उनका उपन्यास फ्रांस की जिन्दगी का एक विशाल 'केनवस' होता है जिसका प्रत्येक चरित्र अपनी ही दुनिया में खड़ा न होकर यथार्थता के रंगमंच पर उस युग की स्थिति में संघर्ष करता हुआ उस समय का वास्तविक प्रतीक बन जाता है। 'टेकनीक' की दृष्टि से अरागों के उपन्यास अपना एक विशेष महत्व रखते हैं जिनसे उनकी कला उभर कर पाठकों के हृदय में एक विशेष स्थान बना लेती है।

युद्ध के बाद आज तक अरागों ने फ्रेंच साहित्यकों को संगठित करने, युवक और नये लेखकों को ठीक दिशा में अग्रसर होने के लिए उत्साहित करने, साहित्यिक पत्रिकाओं के सम्पादन, अपनी साहित्यिक रचनाओं में और विश्व शांति के संघर्ष में जो महत्वपूर्ण काम किया है वह किसी प्रकार भी कम नहीं है। अन्य कार्यों के अतिरिक्त आजकल वे अपना नवीनतम उपन्यास लिखने में संलग्न हैं। आलोचकों का विचार है कि यह उपन्यास बीसवीं शताब्दी के यथार्थवादी सर्वोत्कृष्ट उपन्यासों में से एक है। इस उपन्यास की चर्चा करते हुए एक बार अरागों ने मुझसे कहा था कि इस उपन्यास का प्रत्येक भाग लिख-कर वे अनुभव करते हैं कि उनकी कला में यथार्थवाद अधिक निखर रहा है। इस उपन्यास में स्पेन के गृह युद्ध के अन्त तक का फ्रांस का इतिहास है। फ्रेंच लोगों के साथ नाजियों के विरुद्ध फ्रांस के स्वतन्त्रता आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण अरागों इस उपन्यास में उस काल के फ्रेंच लोगों

की जिन्दगी को अति सफलता और ईमानदारी के साथ चित्रित कर सके हैं। पिछले महायुद्ध पर लिखे गए उपन्यासों में यह अपना एक विशेष स्थान रखता है जो आने वाले युग में चिरस्मरणीय रहेगा और अपना ऐतिहासिक महत्व रखेगा।

आज जब कभी पेरिस की याद आती है तब शनिवार को राष्ट्रीय लेखक समिति की सभा में या उनके पत्र 'स स्वार' के रेस्तरों में खाना खाते समय अरागों का लम्बा क़द, सफ़ेद रेशम की भाँति मुलायम बाल, नीली चमकती आँखें और आत्मीयता से भरी मुस्कान सबसे पहले मेरी आँखों के सामने आ जाती है, कभी एलुआर के गले में हाथ डाले, कभी युवक कवियों की सभा में उनके साथ साहित्यिक विषयों पर चर्चा करते हुए और कभी किसी सार्वजनिक सभा में मंच पर कुर्सी में चुपचाप ठोढ़ी पर हथेली धरे हुए उनके विभिन्न चित्र और मुद्रायें तस्वीरों की भाँति मेरी आँखों के सामने घूम जाती हैं। अभिमान की तो छाया तक उनमें नहीं है और पेरिस आने वाला कोई भी साहित्यिक इस कारण उनसे आसानी से भेंट कर सकता है। आज अरागों का वर्तमान फ्रेंच साहित्य में क्या स्थान है और इस साहित्य को आगे बढ़ाने में उन्होंने क्या किया, यह इस बात से पता चलता है कि युवक लेखक सदा अरागों और उनकी रचनाओं से प्रेरित होते रहते हैं और अरागों किसी न किसी प्रकार अपनी व्यस्त जिन्दगी का कुछ समय निकाल कर इन साहित्यिकों की रचनाओं पर अपने विचार प्रकट करते रहते हैं।

६. पिकासो 'गार्निका का चित्रकार'

२५ अक्तूबर १६५२ को विश्व के महान चित्रकार पाबलो पिकासो ने अपनी जिन्दगी के ७० वर्ष पूरे किए और इस अवसर पर दक्षिणी फ्रांस में वेलूरी नामक गाँव में उनके पास दुनिया भर से लाखों के सन्देश आए—इन सब का उत्तर उन्होंने केवल एक वाक्य में दिया—"मैं चित्र बनाता रहूँगा और शान्ति के लिए अपना संघर्ष जारी रखूँगा।" इन शब्दों में पिकासो की कला और जिन्दगी क्या सारा रहस्य और उनके जीवन का उद्देश्य झलकता है, जो विश्व के हजारों युवक चित्रकारों को एक सही रास्ता दिखलाते हैं। एक बार मेक्सिको के प्रसिद्ध चित्रकार दयागो रिवरा ने पिकासो के विषय में कहा था—"मैं भगवान में विश्वास नहीं करता। परन्तु पिकासो में विश्वास करता हूँ।"

पिकासो के पिता स्पेन में चित्रकला के अध्यापक थे और उनका जन्म २५ अक्तूबर १८८१ में हुआ था। बचपन में ही पिकासो ने चित्रकला की शिक्षा पानी आरम्भ कर दी थी। कितनी ही बार पैसों के अभाव के कारण रंग और कैनवस तक खरीदने में उन्हें कठिनाइयाँ उठानी पड़ती थीं। परन्तु सब मुसीबतों का सामना करते हुए वे आगे बढ़ते गए। एक ही स्थान पर ठहरना उन्होंने नहीं सीखा था, अतः एक मंजिल को पार करके वे दूसरी की ओर बढ़ जाते, जिसके परिणामस्वरूप आज भी उनके 'ब्लू पीरियड', 'रोज पीरियड', 'निग्रो पीरियड' आदि प्रसिद्ध हैं। दुनिया और समय के बदलने के साथ-साथ उनके टेकनीक भी बदलते गए, जो आज भी अपने युग के प्रतीक हैं। इसी से उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैली और स्पेन के गृह-युद्ध से पूर्व सब लोग उनको बीसवीं शताब्दी का एक महान चित्रकार मानने लगे थे। जब स्पेन में नाजी और फासिस्ट शक्तियों ने स्पेनिश लोगों पर अमानुषिक अत्याचार किये तब उनकी जिन्दगी और कला का एक नया अध्याय आरम्भ हुआ और वे अपनी तूलिका से अपनी फासिस्ट विरोधी भावनाओं को प्रकट करने लगे, जिसके परिणामस्वरूप 'गार्निका' की महान् कृति का जन्म हुआ। फ्रांस में भी नाजियों के शासन में उन्होंने फ्रेंच लोगों का साथ दिया और उन्हें

सब प्रकार से सहायता दी। यह काल विश्व की चित्रकला के इतिहास का एक नया युग है जब 'क्यूबिस्ट' और 'एबस्ट्रेक्ट' टेकनीक अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर एक नये यथार्थवाद को जन्म देता है, जिसमें पिकासो ने सब से पहले कदम उठा कर एक नवीन दिशा में जमाने की वर्तमान राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं को अपने केनवस पर चित्रित किया और आज हम दुनिया भर में कितने ही इस नये यथार्थवाद के अनुयायिओं को पाते हैं, जो नवीन विषयों को लेकर उनके उपयुक्त रूप (form) की तलाश कर रहे हैं।

अगस्त १६४८ में विश्व-विख्यात बुद्धिजीवियों की रोकोलो कांग्रेस में उन्होंने भाग लिया, जिसने बाद में अन्तर्राष्ट्रीय शांति सम्मेलन का रूप धारण किया। कितनी ही बार उन्होंने अपना यह विचार प्रकट किया है कि आज के परमाणु युग में, जब तीसरे विश्व युद्ध की चर्चा बहुत जोरों से चल रही है, तब विश्व के किसी भी बुद्धिजीवी के लिए तटस्थता की नीति अपना उनके लिए अपनी कला और मानवता के साथ घोर अन्याय करना है। इससे विश्व के अन्य बुद्धिजीवियों, विशेषकर चित्रकारों के भीतर उन्होंने एक नई भावना को जन्म दिया।

पेरिस में पहले विश्व-शांति-सम्मेलन के लिए पिकासो ने शांति का प्रतीक 'कबूतर' बनाया, जो दुनिया के कोने-कोने में गया और उस पर उनको शांति-सम्मेलन की ओर से 'शांति पुरस्कार' मिला। साथ ही अनेकों इसी प्रकार के अवसरों पर उन्होंने चित्र बना कर आन्दोलन में अपना सहयोग दिया। १६५१ में बर्लिन में हुए तीसरे युवक उत्सव पर उन्होंने ताश के पत्ते जैसी चार आकृतियों का एक चेहरा बनाया, जिस को हजारों की संख्या में रूमालों पर छापा गया। इस प्रकार की सामाजिक कृतियां देकर उन्होंने उदाहरण दिया है कि जो कला अपने युग और काल का दर्पण नहीं बनती, वह कदापि जीवित नहीं रह सकती।

पिकासो आज भी अपनी कला में उतने ही युवक हैं, जितने कि पहले थे। क्योंकि आज भी जब उनका एक-एक चित्र हजारों डालरों में बिक जाता है तब भी वह नये-नये प्रयोगों में मग्न हैं। उनकी ७०वीं वर्षगाँठ पर उनके परम मित्र महान् कवि पाल इलयार ने बहुत ठीक कहा—"वे दुनिया के सब चित्रकारों में अधिक जवान हैं।"

१०. फ्रांस के युवक कवि

फ्रांस कवियों का देश है। आज से नहीं बल्कि पिछली कितनी ही शताब्दियों से फ्रांस का वातावरण कविता से भरा हुआ है। जहाँ विक्टर ह्यूगो और बाद्लेयर, रिम्बो और अपालीनेर की कविताएँ गूंजती रही हैं और जिनसे देश की सामाजिक जिन्दगी और विचारधारा प्रभावित हुई है और स्वयं कविता का रूप और विषय भी युग की करवटों के साथ-साथ बदला है। कविता साहित्य की एक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली धारा रही है। बीसवीं शताब्दी भी फ्रेंच कविता का एक प्रमुख मोड़ है, जब नये-नये प्रयोग हुए, कविता संगीत और चित्रकला के अधिक समीप आई और पिछले दो विश्व-युद्धों ने फ्रांस की पृथ्वी को रंगमंच बना कर जो-जो नाटक खेले और जिनके फलस्वरूप वहाँ के लोगों की जिन्दगी और विचारधारा में जो-जो उतार-चढ़ाव और परिवर्तन हुए, वे सब फ्रेंच कविता में उभर कर हमारे सम्मुख आते हैं। पहले युद्ध के पश्चात त्रिस्तन जारा की अध्यक्षता में 'दादाइज़्म' की नींव रक्खी गई और इसके चारों ओर धीरे-धीरे पाल एलुआर, मेक्स जेकोब, आरागों आदि कवि एकत्रित हुए जिन्होंने अपना घोषणा-पत्र निकाला, अपनी इस नई विचारधारा को समझाने के लिये न केवल कवितायें लिखीं, बल्कि लेख भी लिखे। जिससे फ्रांस के अतिरिक्त यूरोप के दूसरे देशों में भी इस नई धारा की चर्चा चली। इसके बाद तो इन 'वादों' का तांता-सा लग गया। 'एक्सप्रेशनिज़्म' 'सुररीयलिज़्म', 'कंसट्रक्टविज़्म' और 'एग्जिस्टेन्शलिज़्म' आदि धाराओं की टोलियां बनती और टूटती रहीं। ये कुछ धारायें तो ठोस विचारों के आधार पर बनी थीं, परन्तु कुछ केवल नवीनता और मौलिकता के बहाने ही प्रतियोगिता के स्वार्थ से जन्मी थीं। परन्तु इन सब में एक सत्य यह था कि फ्रांस के लोगों की निराशा की चरम सीमा, उनकी प्रगति में एक रुकावट, उनकी पुरानी परम्पराओं की शृंखला का टूट जाना, भविष्य में अन्धकार आदि इन सब में झलकता था और नवीन दिशायें उनकी मानसिक स्थिति की प्रतिक्रियाएँ थीं।

दूसरे विश्व-युद्ध के पश्चात नाज़ियों के बर्बर और अमानुषिक शासन

से मुक्त होने पर फ्रांस की कविता के प्रति देश भर के लोगों में प्यार था, श्रद्धा थी और उसके भविष्य में एक अटूट विश्वास था। इसका कारण यह था कि नाजियों से मुक्ति पाने के लिए फ्रेंच कविता एक ऐसा उत्साह देनेवाला हथियार बन गई थी, जिसे शत्रु कभी नष्ट नहीं कर सका। उस समय के कवियों की कितनी ही टोलियां पेरिस के अतिरिक्त फ्रांस के दूसरे शहरों और गाँवों में बनी थीं और उनकी देशभक्ति की भावनाओं से भरी कवितायें हाथ से लिख-लिख कर या छाप कर रातोंरात लोग घरों के दरवाजों के अन्दर डाल जाते थे। परिस्थितियों ने भी कविता का ही साथ दिया।

१९४५ में इन युवक कवियों को एक संस्था में बांधने का आवश्यक कार्य प्रसिद्ध फ्रेंच लेखिका एल्जा त्रियोले ने किया और इसका नाम भी (Les Jeunes Poets) 'युवक कवि' रखा गया। इस समय इन की शाखायें सारे फ्रांस में हैं और इसके लगभग ३०० सदस्य हैं। प्रत्येक कवि की मौलिक शैली को पनपने का पूरा सहयोग फ्रांस की 'राष्ट्रीय लेखकों की समिति' (C. N. E.) द्वारा दिया जाता है, इन कवियों की रचनायें 'ले लेत्र फ्रांसेज', 'यूरोप', 'नूवेल क्रिटिक' आदि पत्रों में छापी जाती हैं, इनके संग्रह भी प्रकाशकों ने छापे हैं और इनकी सब से बड़ी समस्या—आर्थिक समस्या को भी इन्हें साहित्यिक पत्रों और पत्रिकाओं में काम दिला कर सुलझा दिया गया है। यदि अरागों, एलुआर, जारा, क्लाद मारगान क्लाद रुआ आदि जैसे लेखकों और अन्य साहित्यिक संस्थायों का पूरा सहयोग इन्हें न मिलता, तो शायद 'युयक कवि' इतनी जल्दी कभी सफलता का मुँह न देख सकते।

अक्तूबर १९५१ में साहित्यिक साप्ताहिक 'ले लेत्र फ्रांसेज' ने लगभग ४० युवक कवियों की कविताओं का एक संग्रह 'खूबसूरत जवानी' के नाम से छापा, जिसकी प्रस्तावना एल्जा ने लिखी थी। इसकी आलोचना करते हुए पीयेर सिघेर ने एक लेख में लिखा कि ये फ्रेंच कवि अपनी कविताओं में आज की वर्तमान जिन्दगी, प्यार करने और कल्पना करने का स्वर्गीय सुख, बोलने की प्रसन्नता, संघर्ष करने और जिन्दा रहने का आन्दोलन, खुश रहने का अधिकार आदि भावनाओं को नियमित रूप से प्रकट करते हैं। 'मनुष्य' में विश्वास इन कवियों का मौलिक सिद्धान्त है जिनकी नींव पर वे अपने महल खड़े करते हैं। उनके जीवन के अपने स्वप्न, उनके प्रेम की अपनी मधुर कल्पनायें, उनके संघर्षों की अपनी रूपरेखायें, उनकी वाणी द्वारा उनके विचार प्रकट करती हैं। परन्तु वे अपने विचारों का सीमा अपनी ही दुनिया में न

बांध कर सामाजिक चेतना और युग सत्य से मिला कर एक नये भविष्य के तानेबाने बुनते हैं और इसीलिए इन कविताओं का धरातल और इनकी पृष्ठ-भूमि खोखली न होकर समाज की विषमताओं का स्पर्श करती हुई एक नई चेतना का द्योतक बन जाती है।

मुझे आरागों की बात याद आती है जो एक दिन उन्होंने अपने दफ्तर में मुझ से कही थी—"जो हम अपने यौवन में नहीं कर पाये थे, वह आज के युवक कवि कर रहे हैं..." ये कवि फ्रांस की परिस्थितियों से पैदा हुए हैं और सत्य और वास्तविकता के प्रति ईमानदार होने के कारण वे अपने युग की सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक धारणाओं का सही अर्थों में प्रतिनिधित्व करते हैं। भविष्य के सामने उम्र की बात नहीं उठती और इसी-लिए रेने देपेस्त्र, चार्ल्स दोबजिंसकी, जाक दुबुआ, एलेन गेरां की कविताओं में वे सब होता है जो एलुआर, आरागों, मार्सेनक, जारा आदि की कविताओं में हम पाते हैं। उनकी सफलता का एक सब से बड़ा कारण यह भी है कि अपनी परम्पराओं को इन कवियों ने ठीक तरह से सम्भाला है और उसी को वे अपनी शक्ति और अनुभूति के सहारे आगे बढ़ा रहे हैं।

ये कवि सब दिनों के गानों को अपनी कविताओं में गाते हैं और आनेवाले दिनों की भी चर्चा करते हैं। "इनकी कविता एक नई शराब की भांति है, यह उनकी जवानी का खून है, यह एक सच्चे आदमीयों की आत्मा है, जो प्यार करते हैं, आशावादी हैं, जो संघर्ष करते हैं। युवकों जैसी अराजकतावादी जिन्दगी से दूर ये कवि ठोस और कर्तव्यशील इन्सानों की मूर्तियाँ हैं, जिनके लिए कविता अपना फालतू समय काटने या मनोरंजन करने का साधन न बन कर उनकी जिन्दगी का एक भाग बन गई है। ये कवि जिन्दगी की वास्तविकता में रहते हैं और संघर्षमय वर्तमान से बचने के लिए कविता की रचना नहीं करते। अपने साथियों के साथ इन मुसीबतों के बीच ये कवि सारी मानवता के लिए एक सुन्दर-भविष्य का निर्माण कर रहे हैं और वे इसकी घोषणा भी करते हैं।" कविता के इतिहास में इस प्रकार की सामूहिक और स्पष्ट घोषणा पहले कभी नहीं सुनी।

परन्तु इस घोषणा से यह नहीं समझना चाहिए कि इनकी कविताएँ भी एक ही जैसी हैं या इनकी कविताओं में एक ही बात कही जाती है। सब कवियों की भाषा अलग है, उनकी अनुभूति उनकी अपनी अनुभूति है और उनके कहने का ढंग अपना ढंग है इसलिये उनकी कविता उनकी अपनी

एक छोटा सा कैफ़े

कविता है। परन्तु जिंदगी के प्रति उन सबका दृष्टिकोण एक है, इंसान और भविष्य में सबका विश्वास है और आज का संघर्ष उन सब का संघर्ष है। उनका कोई अपना 'वाद' नहीं है, क्योंकि वे सब यथार्थवाद में विश्वास रखते हैं।

कहना न होगा कि फ्रांस के महान् कवि पाल एलुआर और अरागों से इन्होंने बहुत कुछ सीखा है। कुछ एलुआर के समान पतले-पतले नाजुक तारों से अपनी कल्पना के चित्र बनाते हैं और कुछ अरागों की भाँति ठोस शब्दों और स्पष्ट चित्रों का निर्माण करते हैं। फ्रांस के इन कवियों के अतिरिक्त मायकोव्स्की, नाजिम हिकमत नरुदा का प्रभाव भी कम नहीं है। इन कवियों की रचनाओं को इन युवक कवियों ने ध्यान से पढ़ा है और इनसे सीखा है।

रेने देपेस्त्र हेटी के कवि हैं, परन्तु फ्रांस में अनेक वर्षों तक रहने के बाद और फ्रेंच में ही लिखने के कारण उनकी गणना फ्रेंच कवियों में ही होती है। इन पर अमेरिका के महान् कवि वाल्ट ह्विटमैन की कविता का विशेष प्रभाव है। इनकी कविताओं के दो-तीन संग्रह भी निकल चुके हैं। चार्ल्स दोबजिस्की २१ वर्ष की आयु के अत्यन्त प्रतिभाशाली कवि हैं और इनकी कविता 'हमारा प्रेम कल के लिये है' जब 'ले लेत्र फ्रांसज़' में छपी थी, तब तो साहित्यिक दुनिया में हलचल सी मच गई थी, इसका अनुवाद अंग्रेजी पोलिश आदि भाषाओं में हो चुका है, जिसकी सराहना साहित्यिक आलोचकों ने की। इनके अतिरिक्त जाक दुबुआ और १८ वर्ष के जाक रूबो में भी वे सब गुण विद्यमान हैं, जो एक सफल कवि में पाये जाने चाहिएँ। इन कवियों की कविताओं के संग्रह 'पोयेजी ४१' की सीरीज़ में प्रकाशित हो चुके हैं और जनता ने हार्दिक रूप से उनका स्वागत किया है।

वे रातें मुझे अभी तक याद हैं जब ये युवक कवि प्रति शनिवार को 'मेज़ों द ला पांसे' के कमरे में या सेंट मिशेल के 'काफ़े द्यूपों' के बरामदे में घंटों एक दूसरे की कविताओं पर या किसी अन्य कवि की रचना पर गरमागरम बहसें किया करते थे, परस्पर झगड़ते थे और अपने कंधे हिलाते थे। उनकी बहसों में जिन्दगी होती थी, कविता का एक नशा होता था। गर्मियों की छुट्टियाँ होने से पूर्व उनकी टोली पेरिस से बाहर किसी नदी के किनारे पिकनिक पर जाया करती थी जहाँ घंटों तैरने के बाद कविता पाठ होता था। साल में एक दिन एक सार्वजनिक जलसे में उनकी सर्वश्रेष्ठ कवितायें पढ़ी जाती थीं, फ्रेंच कविता के पढ़ने का ढंग भी अन्य देशों की

अपेक्षा बहुत निराले ढंग का है, कविता पढ़ते समय कवि की आवाज़ जोश से ऊँची हो जाती है, उसके बाल माथे पर बिखर जाते हैं और उसका अंग-अंग उत्साह से हिलने लगता है।

इन युवक कवियों की रचनाओं को पढ़ कर कोई भी महसूस कर सकता है कि फ्रेंच कविता का भविष्य अत्यन्त उज्जवल है। आज फ्रांस में साहित्य-प्रेमी, छात्र और मजदूर, चित्रकार और मध्यवर्ग के लोग इन कवियों की रचनाओं को बड़ी दिलचस्पी से देख रहे हैं।

जिंदगी की ह्रासोन्मुख प्रवृत्तियों का ज्ञान उन्हें है परन्तु कभी उन्हें 'आईडलाइज़' करने की बात उनके दिमाग़ में नहीं आती। टी० स० इलियट को ये अपना गुरु नहीं मान सकते, क्योंकि इलियट की भाँति उन्हें पेरिस के पुल गिरते दिखाई नहीं देते। जाँ पाल-सात्र की भाँति अस्तित्ववाद की फिलासफ़ी में उन्हें विश्वास नहीं है। उन्हें पेरिस के बुलीवारों और बुलीवारों पर बने रेस्तरों के 'टेरसों' से प्यार है, सेन नदी के ऊपर बने हुए नये और पुराने पुलों, नौत्रेदाम और साकरीकर के गिरजों, लुव्र और वरसाई के कला संग्रहालयों, लेटिन क्वाटर्स और लुक्ज़म्बुर्ग के बाग उनके चिन्तन और उनकी कल्पना का एक आवश्यक अंग बन गये हैं। अपनी ज़मीन और अपने आसमान पर उन्हें गर्व है। कविताओं में प्रकट किये हुए उनके विचार और विचारों से पैदा हुए उनके चित्र फ्रांस का प्रतिनिधित्व करने की क्षमता रखते हैं।

'युवक कवि' संस्था भी फ्रांस की साहित्यिक दुनिया का एक महत्व-पूर्ण अंग है, जिसकी छाया के नीचे आज के युवक कवि कल के श्रेष्ठ और पक्के कवि बन जायेंगे। चमत्कारों में उनका विश्वास नहीं है और इसी कारण से उनकी कविता में चमत्कार देखने को नहीं मिलते। वर्तमान और भविष्य के बीच वे आज एक पुल बन गए हैं, जिससे पुरातन और नूतन का समन्वय हो गया है। बीते हुए कल और आने वाले कल के बीच में उन्होंने एक नया सम्बन्ध स्थापित कर दिया है।

आज भी एलुआर की वाणी फ्रांस के कोने-कोने में गूंजती है—

आज कैसा कर रहा है राज धरती पर
हमारा कल
स्थान मानव का यहाँ अक्षुण्ण है
अनिवार्य है रहते दिनों तक।
और देखो हो उठा संसार

कैसी चीज़ उपयोगी
सर्व सुख आनन्दमय सम्पन्न अविनाशी अमर
आज द्रव्य जीवन मनुज का साथ पाकर
पूर्णता को प्राप्त है।

और इन्हीं पद-चिन्हों पर ये युवक कवि आगे बढ़ रहे हैं, वे समय के साथ हैं और समय उनका साथ दे रहा है। वे समाज की विषमताओं को दूर करने के प्रयास में मग्न हैं और उनकी वाणी में युग की वाणी बोल रही है।

११. रोमां रोलां के घर में

पेरिस में जिस दिन श्रीमती रोमां रोलां से पहली बार भेंट हुई थी, उसी दिन मैंने अनुभव कर लिया था कि यह दिन मेरी यूरोप यात्रा में चिर-स्मरणीय रहेगा। बुलीवार मोंपारनास की चहल-पहल के बीचोबीच पहली मंजिल में चार कमरों के साधारण से फ्लैट को देखकर ही कोई नवागन्तुक उस महान् आत्मा की सादगी, जिन्दगी के संघर्षों में भाग लेने की भावना, आम लोगों के बीच रहकर उन्हें समझने की उत्कट इच्छा का आभास सहज में ही पा सकता है। गोर्की और अपनी जिन्दगी का चित्र खींचते हुए रोमां रोलां ने स्वयं ही कितनी बार लिखा है कि जिस जिन्दगी में संघर्ष करके गोर्की को जो प्रेरणा मिली वह रोलां को नहीं मिल सकी, क्योंकि वे एक मध्यवर्ग के परिवार से आये थे। परन्तु लोगों को जानने की तीव्र इच्छा ने रोलां को उनसे मिलकर एक हो जाने के लिए बाधित किया। उस पहले दिन उनके कमरे में बैठकर चारों ओर 'बुक शेल्फों' में सजी किताबों, दीवारों पर लगे रोलां के अनेक चित्रों आदि को देखकर मैं उस क्षण की कल्पना करने लगा जब वे यहीं बैठकर अपनी कलम से अपने विचारों को प्रकट करते होंगे, जहाँ उस समय के विश्व के अनेक बुद्धिजीवी उनसे मिलने के लिए इस घर के द्वार खटखटाते होंगे।

उसके पश्चात् फिर कितनी ही बार श्रीमती रोलां से भेंट होती रही और प्रत्येक बार वे रोलां की जिन्दगी की कुछ घटनायें मुझे सुनाया करती थीं। मुझे पता चला कि पेरिस के दक्षिण में लगभग २०० मील की दूरी पर 'वेजले' नामक एक छोटे से शहर में रोमां रोलां ने १९३७ में एक मकान खरीदा था जहाँ उन्होंने अपनी जिंदगी के अन्तिम वर्ष बिताये थे। रोलां में मेरी दिलचस्पी देखकर उन्होंने कहा कि एक बार वे मुझे अपने साथ कुछ दिनों के लिए वेजले के मकान में ले चलेंगी। वेजले के विषय में भी मैं लोगों से बहुत सुन चुका था कि यह फ्रांस के पुराने शहरों में से एक है, यहाँ के गिरजे की १२वीं शताब्दी की शिल्प और मूर्तिकला अत्यन्त उच्च कोटि की है···और मैंने उनका निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

दिन महीनों में बदलते गये और आखिर मेरे भारत लौटने के केवल बीस दिन बाकी रह गये। तभी पता चला कि श्रीमती रोलां शीघ्र ही एक सप्ताह के लिए वेजले जा रही हैं और मैंने यूरोप की अन्तिम यात्रा उस महान् आत्मा के घर जाकर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करके समाप्त करने की ठानी।

सितम्बर का नीला आकाश और फैली हुई धूप की गरमाई। हवा में धीरे-धीरे सर्दी की मात्रा बढ़ती जा रही थी। पेरिस से श्रीमती रोलां, उनकी एक सेक्रेटरी, एक जापानी प्रोफेसर (जिन्होंने रोलां की १३ पुस्तकों का जापानी भाषा में अनुवाद किया और एक वर्ष के लिये पेरिस में रोलां की जिन्दगी और साहित्य का अध्ययन कर रहे थे) और मैं—हम चार यात्री वेजले की ओर रवाना हो गये। लौरेंस नाम के स्थान पर हमने रेलगाड़ी छोड़ दी और रोलां के एक पुराने मित्र लूसियां की कार में चालीस मील की यात्रा पूरी की। मार्ग में दृश्य अत्यन्त सुन्दर थे, कहीं हरे-भरे लहलहाते खेत, कहीं धीमे स्वर में बहती हुई छोटी-छोटी नदियाँ और उनके ऊपर बने हुये पत्थरों के पुल, लाल छतों और चिमनियों के गाँव और छोटे शहर पार करती हुई हमारी छोटी-सी कार दौड़ी जा रही थी और श्रीमती रोलां लूसियां से वेजले के लोगों और अपनी जान-पहचान के परिवारों के समाचार पूछ रही थीं। रास्ते में एक रेस्तरां में हमने चाय पीकर यात्रा की थकान दूर करने का प्रयास किया।

वेजले से लगभग डेढ़ मील की दूरी से एक पहाड़ी के ऊपर हमें शहर दिखाई देने लगा। पुराने घरों की छतें और दीवारें एक दूसरे के आलिंगन पाश में बंधी जान पड़ती थीं, कहीं चिमनियों में से निकलता हुआ धुँआ उस घर के आबाद होने का आभास दे रहा था और शहर की चोटी पर प्रसिद्ध गिरजे की ऊँची मीनारें आकाश को छू रही थीं। शहर के पीछे अस्त होते सूर्य की रोशनी में क्षितिज पर जमा हुए बादलों के झुंड रंग-बिरंगे सैनिकों का रूप धारण करके इस पुराने शहर की सुरक्षा के लिये खड़े प्रतीत होते थे। इतना सुन्दर शहर का दृश्य यूरोप में शायद कहीं ही मुझे देखने को मिला हो। अब मैंने जाना कि क्यों रोमां रोलां ने फ्रांस भर में से इस शहर को अपने निवास स्थान के लिए चुना। जहाँ रेल नहीं जाती, जहाँ २५० से अधिक लोग नहीं बसते, जहाँ जिन्दगी का कोलाहल प्रवेश नहीं कर पाता। दूसरे विश्व-युद्ध के बादल जब मानवता और संस्कृति का विध्वंस करने के लिये मंडरा रहे थे, जर्मनी, इटली और स्पेन में जब नात्सी फासिस्ट दूसरे देशों की आजादी का गला घोटने की योजनायें बना रहे थे, तब पहले युद्ध

में अपने ही देशवासियों और साम्राज्यवादी शक्तियों से लड़कर थके हुए, विश्व में अमर शान्ति स्थापित करने के संघर्ष में असफल हुए रोमां रोलां एक बार फिर एकान्त में अपनी आत्मा के विशाल जगत में विचरण करना चाहते थे, जिससे अपने आपको तैयार करके एक बार फिर वे उन शक्तियों से लड़ सकें। अतः उन्होंने वेजले में रहने की ठानी जहाँ एकान्त में फिर अपने आपको खोज सकें और मानवता की आजादी के लिये एक नई लड़ाई लड़ सकें।

आखिर एक बड़े से मकान के सामने आकर हमारी कार रुक गई और मैं चुपचाप इस नीरव संध्या में उस बन्द मकान की सूनी खिड़कियों, दरवाजों और उजड़े हुए बगीचों की ओर ताकने लगा जहाँ आज से कुछ वर्ष पूर्व विश्व के एक सबसे महान बुद्धिजीवी अपने विचारों की दुनिया में मस्त रहते थे, इस एकान्त में रहकर भी जिनकी आत्मा मानवता की स्वतन्त्रता और आम लोगों की भलाई के लिये रात-दिन तड़पा करती थी। रोलां की बहन इन दिनों दक्षिणी फ्रांस में थीं, अतः मकान पिछले कितने ही महीनों से उजाड़ पड़ा था। बगीचे को पार करके हम सीढ़ियाँ चढ़ कर मकान के दरवाजे पर पहुँचे जहाँ पत्थरों की एक छत और एक तरफ बेलों तथा फूलों से लदा बरामदा था, सामने छोटी-छोटी पहाड़ियाँ और खेत थे। तीसरी मंजिल पर मेहमानों के कमरे थे जहाँ हमें रहना था, दूसरी मंजिल में रोलां का कमरा और लायब्रेरी थी। नीचे एक बड़ा-सा चौकोर कमरा था, जिसके आधे भाग में खाने की बड़ी सी मेज थी और दूसरे भाग में बीच में एक प्यानो रखा था जिसके ऊपर कुछ किताबें, रोलां की फोटो आदि थीं। दीवार से सटी विशाल बुक-शैल्फ में दुनिया भर की साहित्यिक, संगीत और चित्रकला की पुस्तकें रखी थीं। एक कोने में एक बड़ी लम्बी-सी आरामकुर्सी थी जिस पर बैठकर रोलां कभी अपने मेहमानों से बातें किया करते थे और कभी लिखा-पढ़ा करते थे। दीवारों पर कितने ही जापानी, चीनी, इटेलियन चित्र लगे थे। एक शीशे की आल्मारी में विभिन्न मेहमानों द्वारा लाई हुई विभिन्न देशों की भेंटें अजायबघर का आभास देती थीं, मुझे तो सारा घर ही एक अजायबघर-सा प्रतीत हुआ जिसकी प्रत्येक वस्तु अतीत के किसी व्यक्ति से सम्बन्ध रखती थी। लूसियाँ ने बतलाया कि कितनी ही रातों में जब खुली खिड़की में से हवा के झोंके साएँ-साएँ करते कमरे में प्रवेश करते थे, तब कितनी ही बार उन्होंने रोलां को इस प्यानो के सामने बीथोवन का संगीत बजाते देखा है, जब उनकी आँखों में एक अजीब-सी

रोशनी चमकती थी, जब उनके चेहरे के भाव दुनिया के संघर्षों से थक कर संगीत में एक अमर शान्ति और मुक्ति का आनन्द पाते थे। किसी मेहमान से बातें करते समय सदा वे उसको बिजली की रोशनी में बिठलाते थे जिससे उसके भावों का वे अध्ययन कर सकें। कमरे के सामने छज्जे पर खड़े होकर सामने सूर्य की धुंधली रोशनी में पहाड़ियों को देखते समय मेरा मन रोलां की जिन्दगी का अध्ययन करने लगा। बुक-शैल्फ पर रखी पुस्तकों के पन्ने उलटते समय मुझे सदा उन क्षणों की याद आती थी जब झुर्रियों से भरे नरम हाथों से रोलां भी एक दिन इन किताबों को देखते होंगे। सारे मकान में मुझे उनकी एक अदृश्य छाया-सी दिखाई दी जो शायद आज भी इन कमरों में शान्ति पाने के लिए विचरती होगी। चारों ओर एक सूना-सा सन्नाटा छाया हुआ था। श्रीमती रोलां चुप-चाप आरामकुर्सी पर अधलेटी हुई, आँखें बन्द किये हुए थीं। उनकी सेक्रेटरी रसोई घर में शाम का खाना पका रही थी, मैं और जापानी प्रोफेसर चुपचाप कभी कुर्सियों पर जा बैठते और कभी चुपचाप कमरे की वस्तुओं का निरीक्षण करने लगते। बाहर अन्धकार प्रतिक्षण गाढ़ा होता जा रहा था और वेजले की पहाड़ियाँ, मकान गिरजा सब धीरे-धीरे विलीन होते जा रहे थे। दूर कभी-कभी गिरजाघर के घण्टे वेजले के जीवित होने की सूचना लोगों को देते थे। उस रात को जब सब लोग अपने-अपने कमरों में सोने के लिये चले गये, तब मैं कितनी ही देर तक मकान से सटे बगीचे में घूमता रहा। दूर पहाड़ों पर बसे गाँवों की रोशनियाँ आकाश के तारों के साथ चमकती रहीं।

अगले दिन प्रातःकाल नाश्ते के पश्चात् हम वेजले से बीस मील की दूरी पर 'क्लेमसी' नामक स्थान पर गये जहाँ रोलां का जन्म हुआ था और जहाँ उन्होंने स्कूल की प्रारम्भिक शिक्षा पाई थी। 'क्लेमसी' एक छोटी-सी नदी के किनारे पर बसा हुआ एक छोटा-सा शहर है। सर्वप्रथम हम उस पुराने मकान में गये जहाँ रोलां के माता-पिता रहते थे और जहाँ रोलां ने अपना बचपन बिताया था। उस मकान में आजकल एक फ्रेंच किसान परिवार रहता है, जिसने हमारा स्वागत किया और गाँव की बनी हुई 'लाल शराब' पिलाई। मकान से सटी हुई नदी को देखकर श्रीमती रोलां ने बतलाया कि रोलां बचपन में कितने ही घण्टों तक इस नदी के किनारे पेड़ों की छाया में अकेले लेटे रहते थे और इस प्रकार के कितने ही दृश्यों, घटनाओं और गाँव के पात्रों को उन्होंने 'जाँ क्रिस्तोफ' में चित्रित किया है क्योंकि इनकी स्मृति उनके मस्तिष्क में घुल मिल गई थी। क्लेमसी के चारों ओर बिखरी

प्रकृति को देख कर कोई भी व्यक्ति 'जाँ क्रिस्तोफ़' के बचपन के वर्णन और इसमें समानता का आभास सहज में ही लगा सकता है । 'जाँ क्रिस्तोफ़' के निर्माण में क्लेमसी की प्रकृति, उसके लोगों और वातावरण ने जो महत्वपूर्ण पार्ट खेला है, उसे देख कर सचमुच ही मैंने अपने भाग्य को सराहा । कुछ देर तक हम आसपास के लोगों से बातें करते रहे जिनको रोमाँ रोलाँ को जानने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था । फिर हम क्लेमसी के छोटे से कब्रिस्तान गये जहाँ रोलाँ सदा के लिये अमर विश्राम कर रहे हैं । कुछ वर्ष पूर्व उन्होंने श्रीमती रोलाँ से कहा था कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनकी समाधि यहीं बनाई जाए क्योंकि पेरिस की टीपटाप और दिखावे से उन्हें नफ़रत थी । आज उनकी समाधि के बहुत साधारण-से पत्थर पर केवल उनका नाम ही खुदा हुआ है, जन्म या मृत्यु की तिथि तक नहीं जो उनकी दृष्टि में अनावश्यक थीं । सारे कब्रिस्तान में रोलाँ और उनके माता-पिता की ही समाधियाँ सब से साधारण और सादी थीं, न संगमरमर के पत्थर की कोई मूर्ति केवल चारों ओर कुछ पतझड़ के बचे हुए फूल ही रह गये थे । हमने कुछ फूल उनकी समाधि पर चढ़ाये । दूर पहाड़ियाँ सूरज की किरणों में चमक रही थीं और तेज हवा के चलने से ऊपर पेड़ों की शाखाओं से मुरझाये पत्ते गिर पड़ते थे । चारों ओर सन्नाटा था और हम सब भी चुपचाप अपने हृदय में उठे आवेगों को थामे खड़े थे । श्रीमती रोलाँ की आँखें सूनी थीं; मानो उनमें जिन्दगी की कोई रोशनी न हो, उनके भूरे बाल हवा में उड़ कर उनके माथे पर झूल रहे थे । परन्तु वे चुपचाप जेबों में हाथ डाले रोलाँ की ओर ताक रही थीं मानो अतीत की सारी स्मृतियाँ उनकी आँखों के सामने तूफान की बिजलियाँ बन कर चमक उठी हों । उन्होंने वास्तव में अपना अस्तित्व खोकर रूस से फ्राँस आकर अपनी सारी जिन्दगी रोलाँ के हाथों समर्पित कर दी और आज उनकी मृत्यु के पश्चात् भी वे उनके सारे पत्र दुनिया के कोने-कोने से इकट्ठे करके ६० पुस्तकों में प्रकाशित करवा रही हैं । 'रोमाँ रोलाँ के मित्र' नाम की संस्था की विभिन्न शाखायें विश्व के कोने-कोने में खुली हुई हैं और खुल रही हैं जिनसे पत्र-व्यवहार करना, उनके प्रश्नों के उत्तर देना, प्रकाशकों से रोलाँ की पुस्तकों का हिस्साब-किताब रखना आदि यह सब उनकी जिम्मेदारी है जिनको ५७ वर्ष की अवस्था में भी वे अत्यन्त सफलता के साथ पूरा कर रही हैं ।

एक दिन हमने शहर का चक्कर लगाया । शहर के मकान और दुकानें पहाड़ी पर स्थित होने के कारण लोगों को थोड़ी चढ़ाई चढ़नी पड़ती

है। पुराने पत्थरों के बने हुए मकान, तंग सड़कें और गलियाँ पार करके हम चोटी पर जा पहुँचे जहाँ रोमन टेकनीक का २०वीं शताब्दी का बना हुआ एक अति सुन्दर गिरजाघर खड़ा है जो रोमन टेकनीक के सर्वसुन्दर गिरजों में से एक है। इसके अन्दर दीवारों पर बनी हुई मूर्त्तियाँ भी फ्रांस की मूर्त्ति-कला में अपना एक विशेष महत्त्व रखती हैं। इस शहर ने प्राचीन काल के कैथॉलिक और प्रोटैस्टेंटों के कितने ही धार्मिक युद्ध देखे और कितने ही राज्यों का उत्थान और पतन देखा। परन्तु आज वेजले केवल टूरिस्टों का ही एक स्थान रह गया है जहाँ विदेशी चन्द घण्टों के लिए अपनी कारों में आते हैं और लौट जाते हैं। अतः दुकानें बन्द हो गई थीं, मकानों पर 'खाली मकान' के कितने ही बोर्ड दिखाई दिए। गिरजे के पीछे एक लम्बा-चौड़ा विशाल मैदान है जहाँ धार्मिक अवसरों और राष्ट्रीय त्योहारों के दिन आसपास के गाँवों के लोग वेजले में इकट्ठे होते हैं और इस मैदान में घण्टों नाच-गाना होता रहता है। यहाँ से चारों ओर दूर-दूर तक घाटियों में बिखरे गाँव और हरे-भरे खेत और पहाड़ियों का दृश्य सचमुच अत्यन्त आकर्षक है। शाम के वक्त यहाँ की सूर्य अस्त होने की झाँकी भी बहुत अद्वितीय है। गिरजे के घण्टे ही वेजले की नीरवता में एक जिन्दगी डालते हैं।

इस प्रकार वेजले में हमारे दिन बीतने लगे। मौसम साफ होने के कारण मैं कितनी ही देर तक मकान के सामने खुले बरामदे में आरामकुर्सी पर धूप में बैठा रहता, या मकान के विस्तृत बाग में पेड़ों के नीचे सेब, अंगूर या अलूचे खाता हुआ लेटा रहता, पास के खेतों में किसान काम करते, कभी अपने लोकगीत गाते। चारों ओर का वातावरण इतना उत्साहजनक था कि रोलां का 'एक्शन' शब्द मेरे कानों में सदा गूँजता रहता। श्रीमती रोलां को खेतों में काम करने का बहुत शौक था। अतः पेरिस की बन्द जिन्दगी की थकान उतारने के लिए वे दिन भर अपने खेतों में काम करती रहतीं और कभी-कभी मैं भी कुदाली लेकर उनके साथ जुट जाता और कुछ समय के लिए टाल्सटाय के 'शारीरिक परिश्रम' का महत्त्व अनुभव करता। प्रातःकाल की कॉफी और टोस्टों के नाश्ते के पश्चात हम दोपहर के खाने तक शहर की सैर करते; गिरजों की मूर्त्तियों को देखते, किसी कैफे की कुर्सियों पर धूप में बैठकर टूरिस्टों के आवागमन को देखने के साथ-साथ गरम कॉफी या लाल शराब पीते, कभी-कभी लम्बी सैर के लिए आसपास के गाँवों तक जा पहुँचते और मैं बाजारों के चित्र बनाता। खाने के बाद प्रायः मैं धूप में बैठकर रोलां के पत्र या लेखों की पुस्तक 'आई विल नॉट रेस्ट' (मैं आराम नहीं करूँगा)

पड़ता। शान्ति के इस महान् सैनिक के विचार पढ़कर मुझे आश्चर्य होता था उनके हृदय में मानव के प्रति कितनी सहानुभूति थी। वे युद्ध की शक्तियों को भस्म कर देना चाहते थे और एक नई दुनिया, नई मानवता को जन्म देने के स्वप्न देखा करते थे जिसमें मानव द्वारा मानव का शोषण न हो। इस संघर्ष में बुद्धिजीवियों को आम लोगों का पक्ष लेकर लड़ने के लिए ललकारते थे, उनकी तटस्थता और निष्पक्षता को वे उनकी कायरता समझते थे। पहले युद्ध के बाद जब जर्मनी में नात्सीवाद और इटली में फ़ासिस्ट शक्तियाँ और स्पेन में फ्रैंको आम लोगों के आन्दोलन का निर्मम दमन करने में व्यस्त थे और इंग्लैण्ड, फ्रांस आदि की सरकारें तटस्थता की नीति अपना रही थीं तब उन्होंने अपनी आवाज़ बुलन्द की और 'बर्लिन में खूनी जनवरी', 'इटली का फ़ासिज्म', 'फ्रैंको के विरुद्ध युद्ध' आदि कितने ही लेख लिखे। रोलां ने सदा बुद्धिजीवियों की स्वतन्त्रता के लिए अपनी आवाज़ उठाई—मैं सब प्रकार की हिंसा के विरुद्ध हूँ और सबसे अधिक उस हिंसा के विरुद्ध जो लेखक की स्वतन्त्रता की हत्या करती है।

एक शाम को आकाश में बादल घिर आये और सर्दी की मात्रा अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक बढ़ गई। खाने के बाद हमने बड़े कमरे में आग सुलगाई और कमरे की बत्ती बुझा दी, क्योंकि रोलां कितनी ही बार ऐसी रातों में चुपचाप आँखें बन्द किये हुए चिमनी के पास लेटे रहते थे। श्रीमती रोलां भी पास बैठी रोलां की ज़िन्दगी की कितनी ही महत्त्वपूर्ण घटनायें बतलाती रहीं और हम कभी हँसी से अपनी कुर्सियों से उछल पड़ते और कभी गम्भीर बात होने पर ध्यान लगा कर उनकी बातें सुनते, जापानी प्रोफ़ेसर मिया मोका चिमनी की आग की रोशनी में अपनी नोटबुक पर कुछ नोट लिख रहे थे। वे रोलां की सोवियत संघ की यात्रा के विषय में बतला रही थीं कि इस नवीन दुनिया को उन्होंने कितनी उत्सुकता से देखा और अध्ययन किया। अक्तूबर की महाक्रान्ति के पश्चात् वे बहुत ध्यान से इस देश की प्रगति का अध्ययन कर रहे थे और सदा ही वे इस नये ढांचे के प्रति अपनी सहानुभूति दिखलाते रहे जैसा कि उनके कितने ही लेखों से पता चलता है। गोर्की के साथ उनके घर में रहकर उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता हुई और वहीं एक दिन भोजन के वक्त उनकी स्तालिन से भी मुलाकात हुई। श्रीमती रोलां ने यह सब बड़े दिलचस्प तरीके से हमें बतलाया और हम भी बड़े ध्यान से उस महान् लेखक के जीवन की घटनाएँ सुनते रहे। गोर्की और रोमां रोलां—बीसवीं शताब्दी के इन दो महान् लेखकों के मन में एक दूसरे के

प्रति बहुत इज्जत थी । यद्यपि दोनों में मतभेद भी थे परन्तु इन्होंने कभी मनमुटाव का रूप धारण नहीं किया ।

बाहर वर्षा आरम्भ हो गई थी और कभी-कभी बिजली की कड़कड़ाहट से सारा बेंगला गूँज उठता था । लकड़ियों की लपटों के पास ही रखी अल्मारी के ऊपर एक मूर्त्तिकार द्वारा बनाया हुआ रोलाँ का सिर रखा था । लम्बी नाक, उसके नीचे अधपके बालों की मूँछें, गोल ठुड्डी और नम्रता से भरी आँखें—उन्हें देख कर कोई ही शायद अनुमान लगा सकता हो कि इस चेहरे के भीतर कितनी जिन्दगी भरी थी, क्रान्ति की कितनी तीव्र लहरें तूफ़ान मचाया करती थीं । मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा मानो रोलाँ अभी किसी कमरे से निकल कर हमारे सामने आ खड़े होंगे । श्रीमती रोलाँ एक के बाद एक नया किस्सा बतला रही थीं—बारबूस के साथ उनकी बहसें, लिबनेख्त और रोजा लुक्जुमबुर्ग की हत्या के पश्चात् रोलाँ का शोकमय क्रोध, लेनिन और गोर्की की मृत्यु पर उनके आँसू, दूसरे महायुद्ध के छिड़ने पर उनकी संघर्ष-भावना, भारत के प्रति उनका प्रेम, सहानुभूति और इज्जत आदि । विश्व के किसी कोने में भी आम लोगों के साथ अन्याय होने पर वे सदा अपनी कलम के सहारे अपनी आवाज बुलन्द करते थे । उनकी कलम में कितनी शक्ति थी इसका अनुमान इसी बात से लग जाता है कि हिटलर ने बर्लिन के चौराहों पर 'जाँ क्रिस्तोफ़' और उनकी दूसरी पुस्तकों को जलाकर होली मनाई थी, एक अजायबघर में निषेध की हुई पुस्तकों में मार्क्स एंगल्स, लेनिन के साथ-साथ रोलाँ का 'जाँ क्रिस्तोफ़' भी रखा था । आखिर जब चिमनी में रखी अन्तिम लकड़ी की लौ भी समाप्त हो गई और कमरे के अन्दर भी बाहर जैसा ही अन्धेरा छा गया, तब हम लोग अपनी कुर्सियों से उठे और अपने अपने कमरों में चले गये । उस रात को मैं कितनी ही देर तक अपने कमरे की खुली खिड़की के सामने खड़ा होकर बाहर अन्धेरे में डूबे खेतों और मकानों की ओर निहारता रहा । हवा के झोंके पेड़ों की शाखाओं को उखाड़ कर दूर फेंक देना चाहते थे, बिजली के चमकने से क्षण भर के लिये पहाड़ियों का उभार दिखाई दे जाता था ।

आखिर मेरे पेरिस लौटने का दिन भी आ गया । जापानी प्रोफेसर तीन दिन पहले ही लौट गये थे । जाने से एक दिन पूर्व मैं प्रातःकाल ही अपने प्रोग्राम में मग्न हो गया । आकाश साफ़ था, गहरे नीले रंग का और पिछली रात वर्षा होने के कारण पहाड़ियाँ धूप में साफ़-सुथरी होकर चमक रही थीं । अन्य दिनों की भाँति १२ बजे तक मैं शहर का चक्कर लगाता

रहा। एक फिलास्फर का छोटा-सा मकान देखा जिसे विश्व-विख्यात् शिल्पकार लकबूजिये ने डिजाइन किया और चित्रकार लेजे ने दीवारों पर चित्र बनाये थे। शहर का वातावरण ठीक उस प्रकार का था जैसा कि हिमालय में बसे शहरों में सर्दियाँ आने पर हो जाता है। सर्दियों में टूरिस्टों की भीड़ न होने के कारण होटलों की मरम्मत हो रही थी, कुछ दुकानें भी इन चन्द महीनों के लिये बन्द हो गई थीं। शहर के बाहर कुछ दुकानों का एक छोटा-सा बाजार प्रति सप्ताह लगता है जहाँ से वेजले के लोग खाने-पीने का सामान खरीद लेते हैं। चारों ओर एक ऐसी शान्ति छाई हुई थी जिसमें मनुष्य भी प्रकृति का एक अंग बन गया प्रतीत होता था, जहाँ से जिन्दगी का कोलाहल, संघर्ष और विषमतायें कोसों दूर मालूम देती थीं। यहाँ के लोग अपनी ही एक नई दुनियाँ में व्यस्त हुए जान पड़ते थे।

रात को फिर सर्दी होने के कारण हमने आग जलाई। विशाल कमरे में वही सन्नाटा था, केवल बड़ी-सी घड़ी की टिक-टिक गूँज रही थी। दीवार पर एक कोने में बीथोवां की एक मूर्ति टंगी हुई थी जो रोलां को बहुत प्रिय थी। श्रीमती रोलां ने मुझे उनके सोने का कमरा दिखलाया जो अब प्रायः बन्द रहता था। बीच में एक चारपाई थी जहाँ वे प्रातःकाल उठकर १२ बजे तक काम किया करते थे। एक ओर किताबों की अलमारी रखी थी जिसमें उनकी चुनी हुई पुस्तकें रखी रहती थीं। दीवार पर कोने में टैगोर का चित्र टंगा हुआ था। एक ओर उनकी आरामकुर्सी रखी हुई थी जिसके ऊपर अभी तक उनका रात्रि का लम्बा ऊनी कोट रखा था। सब सामान उसी प्रकार रखा हुआ था जैसा कि उनकी जिन्दगी के वक्त था। कोई भी व्यक्ति यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि इस कमरे में कोई रहता न हो। कमरे के बाहर छोटा-सा बरामदा था जहाँ से सामने के खेत और 'संट पेर' को जाने वाली कोलतार की सड़क बल खाती हुई पहाड़ी के एक ओर छिप गई थी।

आखिर अगले दिन मैं जब पेरिस की ओर रवाना होने लगा तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मैं किसी स्वप्न की दुनियां से बाहर निकल रहा हूँ। इस अजीब से शहर और इस अमर घर में मैंने सात दिन कब बिता डाले, इसका पता उस क्षण लगा। मेरा सारा दिमाग रोमां रोलां और उनके विचारों से भरा हुआ था। श्रीमती रोलां ने मुझे चलते समय रोलां की कुछ पुस्तकें और एक फोटो भेंट स्वरूप दी जिन्हें देख कर ही मैंने अनुभव किया मानो रोलां को मैं अपने साथ ले जा रहा हूँ। उनका 'जां क्रिस्तोफ़' और दूसरी रचनाएँ सदा ही मुझे जिन्दगी में आगे की ओर ले जाएंगी और एक नई दुनियां, एक नये मानव का निर्माण करने में सदा ही मुझे प्रेरित करती रहेंगी।

पेरिस में पुराने मकान

१२. पॉल एलुआर

"आरम्भ में ही मेरी प्रकृति एक विजेता की सी थी । मैं एक नया इन्सान था । मेरे सामने एक ऐसा भविष्य था जिसमें बादल नहीं थे", ये पंक्तियाँ कवि ने सन् १६४२ में अपनी कविताओं के एक संग्रह की भूमिका में लिखी थीं ।

पॉल एलुआर की कविता पर उनकी प्रारम्भिक जिन्दगी का कितना गहरा प्रभाव पड़ा है, उसे जानने के लिए उनके बचपन की एक झाँकी को देखना आवश्यक है । सेंट डेबिस नामक शहर में १४ दिसम्बर, १८६५ में उनका जन्म हुआ । उनके छोटे से शहर की फ़ैक्टरियों की चिमनियों से निकलते धुएँ, छोटी-छोटी बल खाती हुई शहर की गलियों और साफ नीले आसमान की ऊँचाई ने उन्हें बचपन में ही कविता लिखने की प्रेरणा दी। एक भयानक बीमारी के कारण उन्हें पढ़ाई छोड़कर स्विट्ज़रलैण्ड के एक सैनिटोरियम में कुछ समय बिताने के लिए बाध्य होना पड़ा और जब वे वापस लौटे तब सन् १६१४ के महायुद्ध में सिपाही की वर्दी पहन कर वे युद्ध में चले गए । बीमारी और युद्ध की वीभत्स घटनाओं ने उनके कोमल हृदय पर एक स्थायी प्रभाव डाला, जिसे वह फिर कभी दूर नहीं कर सके। "मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैं सुबह का इन्तजार नहीं करता । हमारी तरह रात्रि भी अमर है " उन्होंने लिखा ।

एलुआर की कविताओं का पहला संग्रह सन् १६१८ में 'शान्ति की कविताएँ' नाम से प्रकाशित हुआ, जिस की भूमिका में उन्होंने लिखा—"मैं एक आग के ताने-बाने बुन रहा हूँ, क्योंकि नीलापन मुझे धोखा दे गया है···।"

उस समय जूल रोमां और एपोलीनेर के बीच में एक बड़े जोर का वाद-विवाद चल रहा था । एलुआर ने दोनों की कविताओं का बड़े ध्यान से अध्ययन किया । उन्हीं दिनों उन्होंने जर्मन और अंग्रेजी उपन्यासकारों की कृतियाँ, भौतिकवादी दर्शन और जाँ पाल, रिम्बो, बादलेयर और लाम्रा की पुस्तकें भी पढ़ीं । एलुआर ने भी बड़े सीधे सादे शब्दों का उपयोग

अपनी कविता में किया, जिससे आम लोग उन्हें समझ सकें।

सन् १६१८ में उनका परिचय कुछ युवक कवियों की एक टोली से हुआ, जिसमें आंद्रे ब्रेतों, अरागों, त्रिस्तन जारा आदि थे, जिनके साथ मिलकर उन्होंने सुररीयलिज्म को जन्म दिया, जो उनके लिए एक नवीन बौद्धिक अनुभूति थी। इस टोली के कवि आंद्रे ब्रेतों का एलुआर पर गहरा प्रभाव पड़ा, जो उनकी उस समय की कविताओं में दिखाई देता है।

यद्यपि इस सुररीयलिस्ट टोली के कवियों में कुछ सैद्धान्तिक अन्तर थे, परन्तु फिर भी सन् १६२२-२५ में यह टोली जितना प्रभाव फ्रेंच कविता पर डाल सकी उतना पहले किसी 'वाद' ने नहीं डाला था। फिर बाद में सबने अपनी अलग-अलग दिशा खोज निकाली। एक नए कलाकार मेक्स अर्नस्ट से एलुआर का परिचय हुआ जो अपने में एक विशेष महत्व रखता है। तीन चित्रकार अर्नस्ट, पिकासो और चिरिको भी इस टोली में शामिल हुए। लेखकों एवं चित्रकारों में एक नया सम्बन्ध स्थापित हुआ। कवि चित्रकारी करने लगे और चित्रकार कविता लिखने लगे। कविताओं के स्केच चित्रकार बनाते थे और उनके चित्रों को शब्दों में कवि बांधते थे। सामूहिक रूप में कविता लिखने का एक नया दौर चला और सन् १६२६ में एक कविता संग्रह पॉल एलुआर, रेने क्लार और ब्रेतों के नाम से प्रकाशित हुआ।

एक दिन मार्च १६२४ में एलुआर अचानक घर से गायब हो गए और उन्होंने कहीं भी जाने की सूचना अपने परिवार वालों एवं मित्रों आदि को न दी। कुछ समय पश्चात् लोगों ने अनुमान लगाया कि उनकी मृत्यु हो गई है और उनके ऊपर बहुत से लेख आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए, आलोचकों ने इस तरुण कवि की कविता का लेखा-जोखा किया। परन्तु एलुआर मार्सेई की बन्दरगाह पर आ गये थे और उन्होंने एक जहाज पकड़ लिया। इस यात्रा में वे हिन्दुस्तान, सीलोन, मलाया, हिन्दचीन, न्यूज़ीलैंड, जावा, सुमात्रा आस्ट्रेलिया और ताहिती गए और फिर वापस लौट आए। आठ महीने पश्चात् उनके लौट आने पर सबको अत्यन्त आश्चर्य हुआ, परन्तु इस यात्रा की चर्चा उन्होंने किसी से नहीं की। जो विचार उनके मन पर मंडराते रहते थे वे इस यात्रा में शान्त हो गए और यही उनकी यात्रा का उद्देश्य भी था। कुछ काल पश्चात् उन्होंने फिर इटली, चेकोस्लोवाकिया, जर्मनी, बेल्जियम और स्पेन का दौरा किया। स्पेन में उनकी मुलाकात प्रसिद्ध स्पेनिश कवि लोरका से हुई, जिनकी कविताओं का उन्होंने फ्रेंच में रूपान्तर किया। स्पेन पर उन्होंने

कुछ कविताएँ लिखीं जो आज भी उच्च कोटि की समझी जाती हैं।

कवि के मस्तिष्क में इतने ढेर से विचार थे कि अपनी कविता के रूप से वे सन्तुष्ट नहीं थे। उन्होंने कविता के रूप में अनेकों प्रयोग किए और अपने विचारों को उतने ही शक्तिशाली ढंग से व्यक्त करने के मार्ग खोजे, जिससे फ्रेंच कविता के रूप में इन चन्द वर्षों में बहुत परिवर्तन हुए और इसका बहुत कुछ श्रेय एलुआर को जाता है। उनके गद्य गीतों का भी अपना विशेष महत्व है, जिनकी प्रसिद्धि फ्रांस में काफी हुई और इनके संग्रह भी प्रकाशित हुए।

सन् १९३०-३६ यूरोप के लिए एक बहुत महत्त्वपूर्ण समय था, जब जर्मनी में नाजीवाद और इटली में फासिज्म का उदय हो रहा था। फ्रांस की स्थिति डांवाडोल थी और बुद्धिजीवियों ने भी उस संकट काल में इन शक्तियों का डट कर सामना किया। एलुआर की कवित्व शक्ति अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई थी। इस काल में लिखी हुई कविताएँ प्रेम की नहीं थी, उनमें आत्मविश्वास की झलक थी और मानव में अटूट विश्वास था! 'उपजाऊ आँखें' नाम का संग्रह सन् १९३६ में प्रकाशित हुआ, जिसमें पिकासो ने चित्र बनाए थे। यह उनकी कविता का एक नया मोड़ था, जहाँ शब्द सीधे थे परन्तु अनुभूति एब्स्ट्रेक्ट थी।

सन् १९३६ में एलुआर को स्पेन आने का निमन्त्रण मिला, जहाँ पिकासो के चित्रों के विषय में उन्हें कुछ लेख पढ़ने थे। ऐसे अवसर को वे भला कैसे हाथों से जाने देते जब पिकासो उनके अन्तरंग मित्र थे और उनकी चित्रकला को कवि बहुत महत्ता देते थे। स्पेन के रेस्तराँ में आधी-आधी रात तक बैठे स्पेनिश संगीत सुनते समय कवि की अनुभूति कितनी ही नई दिशाओं को छूती थी और इसी कारण से उस समय की स्पेन में लिखी कविताओं में स्पेनिश संगीत का आभास मिलता है। उसी वर्ष कवि ने एलान किया कि अब वह समय आ गया है जब सब कवियों का यह अधिकार है और कर्त्तव्य भी है कि दूसरे लोगों—आम लोगों-की जिन्दगी ने उनमें जो स्रोत बहाए हैं, उन्हें वे अपने निकट रक्खें और उनसे प्रेरणा लें। कविता लोगों को अपने आप मुक्त करने में सहायता दे और उन्हें ऐसा करने के लिए प्रेरित करे। स्वतन्त्रता के खंडहरों के नीचे कविता में कवि में एक नई प्रेरणा थी और विचारों का अमूल्य कोष था। एक सुन्दर भविष्य का निर्माण करने में कवि ने अपनी सब रचनात्मक शक्तियों को लगा दिया। यह काल कवि की रचनात्मक शक्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण काल था और कवि कभी-

कभी ऐसा महसूस करते थे कि अपनी सब अनुभूतियों को कविता का रूप देने में अपने आपको असमर्थ पाते थे। उनकी कलम उनके विचारों का साथ नहीं दे पाती थी। कविताओं के संग्रह निकलते गए और फ्रेंच कविता का विकास कवि की प्रत्येक कविता के साथ एक नए स्तर पर पहुँचता गया।

दूसरा विश्वयुद्ध आरम्भ हुआ और एलुआर एक फौजी का जामा पहन कर बन्दूक थामे अपने देश की सीमाओं की रक्षा करने के लिए चले गए। फिर एक लम्बी, नीरस और भयानक जिन्दगी आरम्भ हुई। ट्रेंचों में घन्टों पड़े रहना, बमों का विस्फोट और कभी न सुनने वाली रेलगाड़ियों की गड़गड़ाहट ने कवि में एक नई अनुभूति पैदा की। पहले युद्ध और इस युद्ध की जो प्रतिक्रिया एलुआर पर हुई, उसमें अन्तर था। इस बार कवि ने युद्ध की वास्तविकता को गहराई से समझा और अपने कर्त्तव्य का निर्णय किया।

"निरपराधियों का केवल वह सपना
प्रातः की केवल वह फुसफुसाहट
ऋतुएं अपने आप में एका करने के लिए
बर्फ और आग को रंगती हुई
एक भीड़ आखिरकार एक हो गई"

इस काल में कवि के हृदय में दो अन्तर्विरोधी प्रवृत्तियों का जन्म हुआ—वास्तविकता और कल्पना। इन दोनों में सामंजस्य लाने की उन्होंने भरपूर कोशिश की।

उसके पश्चात् फ्रांस पर नाजियों का शासन हुआ। 'रेजिस्टेंस' के नाम से जो आन्दोलन सर्वव्यापी बना, वह फ्रांस के इतिहास में सदा अमर रहेगा। कवि, लेखक, चित्रकार, संगीतकार और बुद्धिजीवियों का शत्रु के विरुद्ध जो संयुक्त मोर्चा बना उसका उदाहरण किसी दूसरे देश में नहीं मिल सकता। इस काल के साहित्य की चर्चा करते हुए एक ब्रिटिश आलोचक ने फ्रांस और ब्रिटेन के कवियों में अन्तर बतलाते हुए कहा कि ब्रिटेन के कवि मोर्चे पर जाकर शत्रु से लड़े, परन्तु फ्रांस के कवियों ने अपने देश में शत्रुओं के शासन के विरुद्ध आन्दोलन किया जिसमें उनकी कविता में जो आग और शक्ति है, वह ब्रिटेन के कवियों में नहीं मिलती। पॉल एलुआर भी इस आन्दोलन से अछूते नहीं रह सके। उनकी जिन्दगी का एक नया और सबसे महत्त्वपूर्ण अध्याय आरम्भ हुआ और जिन लोगों ने इस आन्दोलन में भाग लिया, वे जानते हैं कि एलुआर का इसमें कितना योग था। फ्रांस को

पुनर्जीवन देते समय अपनी कवितायें लिखने के साथ-साथ उन्होंने फ्रांस के युवक कवियों को एकत्रित किया। समय और परिस्थितियों ने उस समय के साहित्य में कविता को ऐसा महत्त्व दिया जिससे कविता के अनेक स्रोत बह निकले। शत्रु के भय से कहानी, उपन्यास, लेख आदि प्रकाशित होने बहुत कठिन थे, क्योंकि प्रकाशकों और पुस्तक विक्रेताओं पर नाज़ियों का कड़ा पहरा था। परन्तु कविता की हज़ारों प्रतियाँ साईक्लोस्टाइल करके आसानी से लोगों तक पहुँचाई जा सकती थीं।

सन् १९४०-४१ में लिखी गई एलुआर की कवितायें एक नई आग, देश के प्रति एक नए प्रेम और विद्रोह करने की शक्ति से ओत-प्रोत हैं। ये उस देश के दुर्भाग्य के गीत थे, जो नाज़ियों के क्रूर शासन के अन्दर दबा हुआ भी अपने आपको स्वतन्त्र करने की चेष्टा कर रहा था। एलुआर ने उस पेरिस को प्रेरणा दी, जिसकी गलियों में अब संगीत की धुनें नहीं सुनाई देती थीं, जहाँ के निवासी निराशावाद की चरम सीमा को पहुंच रहे थे और जहाँ के निरपराध फाँसी के तख्ते पर बिना कहे-सुने झूल जाते थे। अपने हाथों में कविताओं के पुलिन्दे लिए एलुआर पेरिस के एक भाग से दूसरे भाग के चक्कर लगाया करते थे और गेस्टापो-नाज़ियों के जासूस-उनकी खोज में घूमा करते थे।

नाज़ियों का शासन प्रारम्भ होते ही फ्रांस के लेखक और बुद्धिजीवी दक्षिणी फ्रांस चले गये थे, जहाँ माकीज़ के नाम से वे प्रसिद्ध हुए। अरागों उनके अगुआ थे और आन्दोलन की बागडोर उनके हाथों में थी। परन्तु पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन का अच्छा प्रबन्ध वहाँ नहीं था और उन्हें दूसरे देशों और पेरिस के प्रकाशकों पर ही निर्भर रहना पड़ता था। बहुत से युवक कवि आन्दोलन में आए और उन्होंने नाज़ियों के विरोध में कवितायें लिखीं। एलुआर की जिम्मेदारी दक्षिण फ्रांस और पेरिस के साहित्यिकों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की थी जिसको उन्होंने बहुत खूबी के साथ निबाहा। जून १९४४ में उन्होंने 'एटरनल रिव्यू' के नाम से पत्रिका निकाली, जिसके चारों ओर उन्होंने युवक कवियों को एकत्रित किया और उनकी कविताओं के संग्रह भी प्रकाशित किए।

और अन्त में वह दिन आया, जब नाज़ियों के शासन के समाप्त होने के बाद दक्षिणी फ्रांस से अरागों और एल्सा पेरिस लौटे। स्टेशन पर पॉल एलुआर ने उनका स्वागत किया। ये दो कवि १४ वर्षों की जुदाई के पश्चात् परस्पर मिले थे, क्योंकि सन् १९३० में अरागों ने सुर्रियलिस्ट ग्रुप को छोड़

दिया था । इन दो महान् कवियों का मिलन उनके विचारों और स्वप्नों का मिलन था ।

फ्रांस की स्वतन्त्रता के बाद भी अपनी मृत्यु तक कवि ने कभी शोषित मानवता का साथ नहीं छोड़ा । कोरिया के युद्ध का उन्होंने विरोध किया । शान्ति आन्दोलन में उन्होंने अपनी आवाज़ बुलन्द की । फासिस्टों ने जब स्पेन में गर्निका पर बमबारी करके शहर को ज़मीन में लगा दिया था तो कवि की वाणी में जो मर्म और संघर्ष करने की चुनौती थी, वह आज भी लोगों ने भुलाई नहीं है । बार्सेलाना में जब तीन लाख मजदूरों की हड़ताल हुई, तो एलुआर की कविता में स्पेनिश जाति के दमन और उनके आन्दोलन की झलकियाँ देखने को मिलीं । एलुआर किसी भी वाद के साथ उस समय तक रहे जब तक उसकी उपयोगिता और आवश्यकता उन्होंने महसूस की । निष्प्राण जंजीरों में अपने आप को जकड़े रहना उनकी स्वतन्त्र प्रवृति के विरुद्ध था चाहे वे जंजीरें उनकी अपनी ही बनाई हुई क्यों न हों । किसी भी वाद के गुलाम वे नहीं रहे, सदा उसके कफ़न पर खड़े होकर उन्होंने अपने विचारों को बुलन्द किया जो आवश्यकता पड़ने पर उनके मस्तिष्क में उभर आए थे ।

सन् १९५० में एक पत्र का सम्पादन करते हुए उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण चित्रकारों के पत्रों, उनकी डायरी के पत्रों आदि को उद्धृत किया । उसी वर्ष पिछले तीन सौ वर्षों में लिखी गई फ्रेंच कविताओं को चुनकर दो भागों में संग्रह प्रकाशित किया और उसकी भूमिका में फ्रेंच कविता पर एक लम्बा महत्त्वपूर्ण लेख लिखा । विक्टर ह्यूगो की वर्षगाँठ के सिलसिले में एलुआर फ्रेंच कवियों के प्रतिनिधि बन कर मास्को गए, जहाँ सोवियत लेखकों ने फ्रांस के इस महान् कवि का स्वागत किया । एलुआर की कविताओं के ८० संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं और एक-एक संग्रह के कितने ही संस्करण निकल चुके हैं । एक महत्त्व पुस्तक में पिकासो पर लिखी हुई उनकी कविता है और पिकासो के ६० वर्षों तक बनाए हुए गिने-चुने चित्र हैं ।

मुझे शनिवार की वह सन्ध्यायें अभी तक याद हैं, जब मेजों द ला पांसे के दफ्तर में एलुआर कभी-कभी राष्ट्रीय लेखक समिति की मीटिंग में आया करते थे । उनका लम्बा कोमल चेहरा उनकी चमकती हुई भूरी आँखें और उनके मुस्कुराते होंठ सब को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे । उनकी कविता की छाप उनके चेहरे पर स्पष्ट रूप से अंकित थी । अरागों, त्रिस्तान, जारा, एल्जा और आंद्रे स्तिल आदि लेखक मित्रों से वे एक

कोने में बैठ कर गम्भीर मुद्रा में बातें किया करते थे। युवक कवि आज भी एलुआर के आभारी हैं, क्योंकि एलुआर से कवि और आलोचक के रूप में उन्होंने उनसे बहुत कुछ सीखा है। जब कभी किसी नए कवि की कोई कविता प्रकाशित होती थी और एलुआर उसमें उसकी प्रतिभा की कुछ झलकियाँ देखते थे, तो सदा ही प्रोत्साहन का एक पत्र लिख देते थे। आज फ्रांस में उनकी कविता के भक्तों में छात्र, मज़दूर, किसान, बैंक क्लर्क, ऊँचे घरानों की स्त्रियाँ, लेखक, कवि और बुद्धिजीवी सभी पाए जाते हैं। उनकी कवितायें सबके लिए हैं और इसी कारण से सब उनका आदर करते हैं।

सन् १९५२ की सर्दियों में एक छोटी-सी बीमारी के बाद उनकी मृत्यु हो गई। परन्तु उनकी कविता आज भी अमर है और आने वाले युग में भी अमर रहेगी।

"बुझ गए हैं जो सितारे मुझे लगता है कि जैसे
वही अपने थे।
जो मनुष्यों को मनुष्यों से विलग कर काट देतीं
उन्हीं भीतों को मिला कर एक कर देता विलाप
दोष कोई भी नहीं अब जो कथा का मर्म समझाए।
बच गया सब कुछ विनाश नहीं हुआ
संकल्प ऐसा दृढ़ किया हमने
अब हमें लेकर भविष्य खड़ा हुआ है
हमीं तो वरदान का हैं पूर्व ईप्सित रूप
देखो
आज कैसा कर रहा है राज अवनी पर
हमारा कल ...."

१३. ब्रिटेनी; फ्रांस का स्कैंडेनेविया

केवल पेरिस देख लेने के उपरान्त सारा फ्रांस देखने का दावा करना फ्रांस के साथ सरासर अन्याय करना है । फ्रांस के दक्षिण में तुलूस, ल्योन, नीस, पूर्व में एल्पस की ऊँची चोटियाँ और पश्चिम में ब्रिटेनी, फिनीस्त्र और समुद्र के तट पर स्थित छोटे-छोटे शहरों की दुनिया पेरिस से सर्वथा भिन्न है, जिसका ज्ञान फ्रांस में आये टूरिस्टों को अधिक नहीं है ।

फ्रांस के पश्चिम में समुद्र के तट बसा हुआ ब्रिटेनी एक ऐसा ही इलाका है, जहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ-साथ उसकी संस्कृति भी फ्रांस के अन्य भागों की अपेक्षा सर्वथा भिन्न है। गर्मियों की छुट्टियाँ काटने का सौभाग्य मुझे यहाँ प्राप्त हुआ । एक रात्रि की यात्रा कर मैं और मेरा एक मित्र 'ब्रेस्ट' नामक प्रसिद्ध बन्दरगाह पर पहुँच गए । पेरिस के पश्चात फ्रांस के दूसरे भागों को देखने का यह मेरा पहला ही अवसर था । मैंने अनुभव किया कि फ्रांस के छोटे-छोटे शहर और गाँव पेरिस की अपेक्षा किसी नये व्यक्ति के लिए अधिक आकर्षक प्रतीत होते हैं, क्योंकि पेरिस से जरा नीचे स्तर पर विश्व के दूसरे शहर और भारत में बम्बई और कलकत्ता भी इसी ढाँचे में ढले होते हैं परन्तु फ्रांस के ग्राम बाहर से आये लोगों के लिए अपना एक विशेष महत्त्व रखते हैं ।

जब सन्ध्या के समय हम ब्रेस्ट पहुँचे, उस समय सूर्य समुद्र और आकाश के बीच में चमक रहा था । हम एक छोटे से होटल में अपना सामान रखकर शहर घूमने के लिए निकल पड़े । स्थान-स्थान पर टूटी-फूटी इमारतें और मकान देखने को मिले । सड़कों पर अँधेरा था और बहुत ही धुँधली रोशनी वाला इक्का दुक्का लैम्प पोस्ट दिखाई देता था । रात के आठ बजे ही लोगों को अपने-अपने घरों में घुसे देख कर पेरिस की जिन्दगी याद आये बिना न रही, जहाँ जिन्दगी ही रात के दस बजे आरम्भ होती है, फ्रांस के इन दो शहरों का अन्तर देख कर प्रत्येक विदेशी को आश्चर्य होगा । कभी-कभी तो ब्रेस्ट आने पर पछताते थे कि नाहक ही पेरिस से इतनी दूर आये । होटल के कमरे से नीचे फैला हुआ समुद्र और तट पर खड़े जहाज, नावें आदि दिखाई दे रही थीं । पिछले युद्ध में ब्रेस्ट जर्मनी का अड्डा था, जहाँ से वे

लन्दन पर आक्रमण किया करते थे और इसी कारण से इसकी दुर्दशा हो गई थी। होटल की मालकिन से पता चला कि युद्ध के पश्चात शायद ही ब्रेस्ट में एक साबुत मकान बचा हो और जो थोड़ा बहुत हमने अच्छी दशा में देखा वह युद्ध के बाद ही खड़ा किया गया है। परन्तु ब्रिटेनी के दूसरे भाग देखकर हमने अनुमान लगाया कि ब्रेस्ट ब्रिटेनी में होते हुए भी उसकी संस्कृति और सभ्यता से दूर है, क्योंकि यह केवल एक बन्दरगाह है और यहाँ बसने वाले अधिकतर जहाजों में काम करने वाले मजदूर, या व्यापारी लोग हैं जो फ्रांस के दूसरे भागों से आकर यहाँ बस गए हैं। होटलों और रेस्तराँ में भी नीली वर्दी वाले नाविकों और मजदूरों को देख कर ऐसा अनुभव करते थे मानो हम किसी युद्ध वाले इलाके में पहुँच गए हों।

अगले ही दिन हम ब्रेस्ट की बस में बैठकर लगभग १५ मील की दूरी पर बसे एक गाँव 'प्लूगेस्ताल' की ओर रवाना हो गए जहाँ मेरा एक फ्रेंच मित्र रहता था। प्लूगेस्ताल ब्रेस्ट के ठीक सामने समुद्र के पार एक छोटी-सी पहाड़ी पर बसा हुआ एक छोटा सा शहर है। समुद्र पार करने के लिए एक बहुत सुन्दर पुल बना हुआ था, जहाँ से हमें ब्रिटेनी का सौंदर्य देखने का अच्छा अवसर मिला। रास्ते में कितने ही छोटे-छोटे गाँव देखने को मिले जिनके दो मंजिले साफ सुथरे मकान, पक्की सड़कें, होटल, रेस्तराँ सब में एक अजीब सा आकर्षण था। कितनी ही बार हरी हरी घाटियाँ और छोटी-छोटी पहाड़ियाँ देखने पर काश्मीर की याद आये बिना न रहती थी। फ्रांस के गाँवों के उन्नत होने का महत्त्वपूर्ण रहस्य यह है कि पक्की सड़कें दूर दूर तक पहाड़ी इलाकों तक में फैली हुई हैं और बसें निरन्तर एक दूसरे इलाके में आती जाती रहती हैं, इसी यातायात की सुविधा के कारण यहाँ पर रहने वाले लोग बाहरी दुनिया के समाचार जानते रहते हैं और अन्य लोगों से अपना सम्पर्क बनाये रखते हैं।

प्लूगेस्ताल ब्रिटेनी की सभ्यता और संस्कृति में अपना एक विशेष महत्त्व रखता है और यहाँ के राष्ट्रीय संगीत और नृत्य बहुत उच्च कोटि के माने जाते हैं। यहाँ की पुरानी वेशभूषा भी अत्यन्त आकर्षक है। लारी के अड्डे से उतर कर हम प्लूगेस्ताल की छोटी-छोटी सड़कों का चक्कर लगाने लगे, छोटे-छोटे बार और रेस्तराँ की कुर्सियाँ बाहर धूप में रक्खी गई थीं और गर्मियों की छुट्टियाँ होने के कारण अन्य स्थानों से आई हुई टोलियाँ भी कभी कभी देखने को मिलती थीं। हम दो भारतीयों को देखकर लोग हमारी ओर एक नजर भर कर देख लेते थे, जिससे मैंने सोचा कि वे फ्रांस की सैर

करने वाले भारतीय शायद ही इतनी दूर पहाड़ों और समुद्र का मिलन देखने आते हों। और मेरी यह धारणा प्लूगेस्ताल में रहने वाले मित्र ने और भी पक्की कर दी। कुछ समय पश्चात हम ढूँढ़ते ढूँढ़ते उस फ्रेंच मित्र के घर पहुँचे। मेरी टूटी-फूटी फ्रेंच ने हमारी ब्रिटेनी यात्रा में क्या सहायता दी, इस का अनुमान इसी से हो सकता है कि इतनी बड़ी यात्रा में हमें एक भी अंग्रेजी बोलने वाला व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। मेरे मित्र के पिता का शराब का व्यापार था अतः खाने के साथ दस प्रकार की विभिन्न शराबों के स्वाद के साथ साथ फ्रेंच गाँवों में बसने वाले धनी परिवार के अन्दर भी झाँकने का एक अवसर मिला। परिवार के पाँच-छः सदस्य होने पर भी तीन तीन आधुनिक फैशन के सजे हुए मकानों को देखकर एक बार ब्रेस्ट के रेस्तराँ के सामने चीथड़े पहिने एक भिखारी और रात को समुद्र से आती हुई ठंडी हवाओं की छाया में बाग़ के बैंच पर लेटे हुए एक व्यक्ति की याद आये बिना न रही।

ब्रिटेनी के प्राकृतिक सौंदर्य का सबसे बड़ा कारण समुद्र का सुन्दर किनारा है, जिसकी रूपरेखा प्रत्येक शहर में अलग ही देखने को मिली। चार बजे के लगभग हम उस फ्रेंच मित्र एवं उसके चार पाँच मित्रों के साथ समुद्र तट पर स्नान करने के लिए गए। चारों ओर एक अजीब सी नीरवता छाई हुई थी और दूर दूर तक समुद्र की उछलती कूदती लहरें ही देखने को मिलती थीं, तट के पीछे छोटी-छोटी हरी-भरी पहाड़ियाँ थीं। कितनी ही देर तक हम धूप में लेटे रहे। वह फ्रेंच युवक अपने साथियों के साथ ब्रिटेनी के लोक-गीत गाता रहा, जिनमें से बहुत कुछ धार्मिक विषयों पर बनाये हुए थे। वह फ्रेंच भारत के विषय में विशेष उत्सुक था और उसने कितने ही प्रश्न भारतीय संगीत और नृत्य पर हम से पूछे।

जब हम प्लूगेस्ताल से ब्रेस्ट के लिए अन्तिम लारी में रवाना हुए, उस समय साँझ हो चुकी थी और पत्थर के मकानों की खिड़कियों में से बिजली की रोशनी बाहर आ रही थी। प्लूगेस्ताल की मीठी स्मृति में खोये हुए हम दोनों लारी की सीटों पर चुपचाप बैठे रहे और दिन भर की घटनाओं को जिन्दगी की दूसरी स्मृतियों के साथ बाँधते रहे। रास्ते में स्थान स्थान पर छोटे-छोटे गाँवों से लोग चढ़ते उतरते रहे और लारी उसी चाल से निरन्तर आगे बढ़ती रही।

उसी फ्रेंच मित्र से पता चला था कि ब्रेस्ट के उत्तर में लगभग १०० मील की दूरी पर सेंट पोल दा ल्योन नामक स्थान पर अगले दिन सारी

ल्यूगेस्तेल की एक सड़क

ब्रिटेनी का एक वार्षिक मेला होने वाला है, जिसका उस सारे इलाके में अपना एक विशेष महत्व है, जिसमें ब्रिटेनी के सब प्रान्तों की टोलियाँ अपनी पुरानी राष्ट्रीय वेषभूषा में नृत्य और संगीत का प्रदर्शन करेंगी। अगले दिन प्रातःकाल ही हम बस के टिकट लेकर अपना सामान बाँध कर पोल दा ल्योन जाने के लिए तैयार हो गए। परन्तु चाय पीते समय देर हो जाने के कारण सब लारियाँ चली गईं और पता चला कि अगली लारी शाम को पाँच बजे से पहले नहीं मिलेगी। निराशा में हम ब्रिटेनी के नक्शे को देखकर दूसरे स्थानों का विवरण पूछते रहे जिससे किसी अन्य शहर जा सकें। परन्तु फिर बस कम्पनी के मालिक ने हमें परदेशी जान कर हमारे साथ सहानुभूति दिखलाते हुए कहा कि वह अपनी कार में आध घंटे में पोल दा ल्योन जायेगा, अतः हम उसके साथ जा सकते हैं। हमारी प्रसन्नता की सीमा न रही और ब्रेस्ट से अन्तिम विदा लेने के विचार से हम अड्डे के बाहर टहलते रहे। आकाश में बादल छाये हुए थे और धीरे-धीरे सर्दी का प्रकोप बढ़ता जा रहा था। पेरिस की अपेक्षा फ्रांस के इस भाग में सर्दी अधिक पड़ती है।

पोल दा ल्योन को यदि ब्रिटेनी का एक प्रतिनिधि शहर कहा जाय, तो कोई गलती न होगी। इसके मकान, बाजार, होटल, रेस्तरां आदि सब प्लूगेस्ताल की अपेक्षा अधिक बड़े थे। मेला होने के कारण लोगों के झुँड के झुँड सड़कों पर घूमते दिखाई दिए। सब घर और दुकानें ब्रिटेनी के विभिन्न झंडों से सजी हुई थीं। पुरुष, स्त्री, युवक, बच्चे सब नाना प्रकार की रंग-बिरंगी पोशाकें पहने हुए थे। ऐसा अवसर पाने पर हमने अपना भाग्य सराहा, क्योंकि साल में इने-गिने दिनों में ही लोग अपनी इन पोशाकों को पहनते हैं। पोल दा ल्योन में यद्यपि अंग्रेज और अमेरिकन यात्री इस मेले को देखने के लिए काफी संख्या में आए हुए थे, परन्तु दो तीन चीनी छात्रों के अतिरिक्त हमें एशिया का कोई भी व्यक्ति देखने को नहीं मिला। होटल सब भरे हुए होने के कारण हमने अपना सामान एक रेस्तरां में रख दिया और बाजार में निकल पड़े। दुकानों पर ब्रिटेनी चित्रकला के नमूने भी देखने को मिले जो बहुत कुछ अफ्रीका की नीग्रो कला से मिलते-जुलते हैं। इसी कला की छाया लोगों की वेषभूषा को देखने पर भी मिलती है। बड़े गहरे लाल, हरे नीले रंग के स्कर्ट, उनके ऊपर श्वेत जाली का एप्रन और सिर पर किसी दूसरे रंग की अजीब-सी टोपी। लगभग सभी वस्त्रों पर कसीदे का काम हुआ था। इसी तरह की पुरुषों की वेषभूषा भी गहरे रंगों की थी। सारा वातावरण रंगों में रंगा हुआ प्रतीत होता था, जैसा कि भारत के

दक्षिण में देखने को मिलता है। छोटे-छोटे जुलूस बाजा बजाते हुए एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर जा रहे थे। गिर्जाघर के सामने पादरियों और पोल दा ल्योन के नाचने और गाने वालों का एक जुलूस निकला। यह मेला भी एक धार्मिक घटना के आधार पर होता है और प्रातःकाल से दोपहर तक यह गिर्जाघर के अन्दर और चारों ओर तक ही सीमित रहा। खिलौनों, फल आदि की अस्थायी दुकानें बीच सड़क में लगी हुई थीं और ब्रिटेनी के दूसरे भागों से स्कूलों के बच्चों की टोलियाँ चारों ओर भीड़ लगाये हुई थीं। लारी के अड्डे पर अनगिनत लारियाँ खड़ी हुई थीं।

खाना खाकर हम भी भीड़ के रेले के साथ शहर के बाहर उस बड़े से पार्क में जा पहुँचे जहाँ संगीत और नृत्य का प्रदर्शन होनेवाला था। पार्क के एक कोने में बड़ा-सा रंगमंच बना हुआ था और तीनों ओर लोगों की अपार भीड़ घास पर बैठी हुई थी, चारों ओर लाउड स्पीकर लगे थे, आकाश साफ हो गया था और पेड़ों से छनती हुई हवा के झोंके गर्मी को दूर कर रहे थे।

पार्क का समस्त वातावरण ही कलात्मक हो रहा था और ब्रिटेनी की हरी-हरी पहाड़ियाँ पार्क के एक ओर अपना सिर ऊँचा उठाये दिखाई दे रही थीं। थोड़ी देर पश्चात कार्यक्रम आरम्भ हुआ और सबसे पहले पोल दा ल्योन की टोली ने आकर बैंड के साथ साथ अपना लोक नृत्य आरम्भ किया। छः युवक और छः युवतियाँ रंगमंच पर एक ही साथ हाथ पैर उठाते और गिराते थे, जिससे उनके वस्त्र बिजली की भाँति चमक उठते थे। बैंड स्कॉटलैंड के लोक-संगीत की ही भाँति थे परन्तु उनका संगीत उनसे सर्वथा भिन्न था। नृत्य में एक ऐसी शान्तिमय गति थी जो कहीं और देखने को नहीं मिली। रंगमंच पर उनके रंग बिरंगे वस्त्र सूर्य के प्रकाश में बहुत उजले होकर चमक रहे थे। इसी प्रकार एक टोली के पश्चात् दूसरी और तीसरी आती रही और अपना नृत्य और संगीत समाप्त करके दर्शकों की तालियों के बीच में बिदा लेती रही। प्लूगेस्ताल का नाम सुनते ही लोगों ने हर्ष से उनका स्वागत किया और उनका नृत्य वास्तव में दूसरों की अपेक्षा अधिक उन्नत था। छोटे-छोटे लड़के और लड़कियाँ भी कितनी ही बार स्टेज पर अपनी कला दिखाने आये और शाम को लगभग छः बजे यह प्रोग्राम समाप्त हुआ। ब्रिटेनी की लोक-कला वास्तव में अपना एक विशेष महत्त्व रखती है। यद्यपि उनके नृत्य और संगीत में भारत या अफ्रीका के लोक-नृत्य की भाँति वह गति नहीं होती परन्तु उन का धीरे-धीरे पाँव उठाना और बढ़ाना,

उछलना-कूदना सब में एक गहरी शाँति-सी होती है, जिसका सम्बन्ध ब्रिटेनी के प्राचीन वर्षों के पुराने इतिहास और धार्मिक विश्वास से है और जो उनकी कला का आधार है । इस कार्यक्रम के पश्चात् पार्क से लेकर गिरजे तक ये टोलियाँ विभिन्न धार्मिक सन्तों की मूर्तियाँ और झंडे लिए धार्मिक गीत गाते हुए आईं । सड़क के दोनों ओर बाजारों में, मकानों की छतों और खिड़कियों पर दर्शकों की अपार भीड़ थी । इस प्रकार उस मेले का अन्त हुआ ।

रात्रि को पोल दा ल्योन में कहीं स्थान न मिलने के कारण हमने पाँच मील की दूरी पर रोस्कोफ़ नामक समुद्र के किनारे पर बसे हुए एक छोटे से शहर में जाने का निश्चय किया और रोस्कोफ़ जाने वाली लारी में जा बैठे । मार्ग अत्यन्त ही सुन्दर था और उतराई चढ़ाई होने के कारण किसी पहाड़ी इलाके में यात्रा करने का आभास होने लगता था । जब रोस्कोफ़ पहुँचे, उस समय रात्रि के ९ बज रहे थे, दिन भर की थकान से चूर होकर किसी होटल में रात काटने की कल्पना में ही सुख मिलने लगा था । परन्तु यात्रियों की बाढ़ आ जाने से हमें सब होटलों में निराशा के दर्शन करने पड़े । अपना सामान उठाये एक होटल से दूसरे और फिर तीसरे से 'न' सुनकर उस रात को कहीं स्थान न पाने का विचार आते ही आगे सोचने विचारने का साहस नहीं होता था । सर्दी बहुत बढ़ गई थी और जब कोट के कालर कानों तक खींच कर हमने अन्तिम होटल से भी नकारात्मक उत्तर पाया, तो रेस्तराँ की कुर्सी पर धम से बैठने के अतिरिक्त दूसरा कोई चारा नहीं दिखाई दिया । अन्त में एक होटल के मालिक ने दया करके अपनी गैरज की दो मोटरें हमें दे दीं, जिनकी सीटों पर लेटकर हमने रात काट दी और एक बार आँख लग जाने पर फिर प्रातःकाल ९ बजे ही उठे ।

समुद्र तट पर ब्रिटेनी के ठीक उत्तर में बसा हुआ रोस्कोफ़ मुझे सब स्थानों से अधिक सुन्दर प्रतीत हुआ । होटल की खिड़कियों के पास बैठ कर सामने समुद्र की लहरों को देखते हुए अगले दिन प्रातःकाल चाय पीने में जो आनन्द आया, वैसा पेरिस में मिलना कठिन था । रोस्कोफ़ में रहने वालों की जनसंख्या १००० से अधिक नहीं है, परन्तु अनगिनत बड़े बड़े होटलों को भरे हुए देख कर सैर करने वालों का प्रिय स्थान होने का अनुमान लगा सका हूँ । छोटा-सा बाजार और बीच में एक गिर्जाघर और अन्त में समुद्र का अत्यन्त सुन्दर तट था, जहाँ नहाने वालों और धूप में नंगे बदन लेटने वालों की कमी नहीं थी, बीच में और किनारे पर कितनी ही काली काली चट्टानें थीं जहाँ यात्रियों की टोलियाँ छुट्टियों का आनन्द मना रही थीं । समुद्र में

मछलियाँ पकड़ने वालों की भी कमी नहीं थी । सामने ही आधा मील के अन्तर पर लिलो दा ब्रिटज नामक छोटा-सा द्वीप था, जहाँ के मकान, गिर्जा-घर की ऊँची मीनारें और पहाड़ियाँ दिखाई दे रही थीं । दृश्य अत्यन्त ही सुन्दर और शरीर में सिहरन पैदा करने वाला था । इस द्वीप में आने जाने के लिए नावों का सहारा लेना पड़ता था । इस प्रकार रॉस्कोफ की यात्रा का भी अन्त हुआ और जब हम लारी में बैठकर पुनः पोल दा ल्यान जाने लगे तो उतना ही दुःख हुआ जितना कि अपने प्रिय बन्धु से बिछुड़ने पर होता है। और फिर पोल दा ल्यान से हमने पेरिस के लिए गाड़ी पकड़ी और इस प्रकार ब्रिटेनी की यात्रा समाप्त हुई।

ब्रिटेनी को कुछ लोग फ्रांस का स्कैंडेनेविया कहते हैं और यह बहुत कुछ हद तक ठीक भी है । समुद्र के तट पर काली-काली चट्टानों को देख कर प्रकृति एक रहस्यमयी गुत्थी प्रतीत होती है । यह फ्रांस का एक सर्वोत्तम भाग है जहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ साथ वहाँ की संस्कृति को भी एक नवीन झाँकी देखने को मिलती है ।

१४. यूरोप का हिमालय-आल्प्स

अपने चारों ओर एक श्वेत रंग का साम्राज्य छाया देखकर प्रकृति के इस नये सौन्दर्य को देखते हुए कोई भी सिहरे बिना नहीं रह सकता। इन पहाड़ी गाँवों में मकानों की दीवारें, खिड़कियाँ या कहीं-कहीं किसी पतझड़ के बिना पत्तियों वाले ठूँठों के अतिरिक्त और किसी में भी कोई रंग नहीं था। 'आल्प्स' का यह रूप देख कर एक बार अपने उस ऊँचे हिमालय की याद आई और मन ही मन तुलना करने लगा, हमारे देश में कितने ही पहाड़ी इलाकों को मनोरम स्वास्थ्यवर्धक स्थान बनाने का कोई विशेष प्रयास नहीं किया गया यहाँ तक कि सड़कों तक का अभाव सदा दिखाई देता है—होटलों आदि की तो बात ही दूसरी है—परन्तु यूरोप में पहाड़ों की चोटियों तक जाने की व्यवस्था है, मोटरों की पक्की सड़कें दूर-दूर तक काली मोटी रेखाओं सी दिखाई देती हैं, फिर 'बर्फ की स्केटिंग', 'स्कीईंग', 'स्लेजिंग' आदि खेलों का पूरा प्रबन्ध है जिनके लिए सर्दियों में दूर-दूर से लोग आते हैं, अतः आधुनिक ढंग के होटल, रेस्तराँ, क्लब आदि गाँव-गाँव में पाये जाते हैं, और यहाँ स्थाई रूप से रहने वालों की आमदनी भी हो जाती है।

'ईस्टर' होने के कारण हमें अत्यन्त कठिनाई से दो रातें अन्य स्थानों में व्यतीत करने के पश्चात् 'प्राज़ा' नामक गाँव के एक होटल में रहने का स्थान मिला जो ५,५०० फ़ीट की ऊँचाई पर स्थित था। पेरिस से कार में आने के कारण कोई अधिक मुसीबत नहीं उठानी पड़ी। यह स्थान हमने इस लिए चुना कि यह बहुत खुला था, चारों ओर पर्वत-श्रेणियाँ थीं परन्तु दूर-दूर तक घाटियाँ देखने को मिलती थीं, और रात के सन्नाटे में पहाड़ों पर बिजलियाँ जलती हुई देखकर सामने के गाँवों का अनुमान लगाया करते थे। फ्रांस का दक्षिण-पूर्वी यह मार्ग 'आल्प्स' की गोद में बसे अपने मनोरम स्थानों के लिए काफ़ी प्रसिद्ध है जहाँ जाड़ों में सर्दी के खेल खेलने वालों की टोलियाँ और गर्मी में पहाड़ों के चीड़ के पेड़ों में छनती हुई हवा के झोंके और 'धूप का स्नान' करने वालों का जमघट सदा दिखाई देता है। यहाँ से स्विजरलैंड की राजधानी जनेवा केवल तीस मील के अन्तर पर ही रह जाती है और इटली की सीमा भी दूर नहीं है।

पेरिस से चलते समय हमने सोचा था कि बसन्त का आगमन पहाड़ों पर हो गया होगा और हमें बर्फ और धूप दोनों ही मिलेंगे परन्तु हमारा अनुमान गलत निकला क्योंकि अभी तक सर्दियों का अन्त नहीं हुआ था, और दस दिनों में कितनी ही बार नई बर्फ पड़ी। कभी-कभी तो सर्दी की मात्रा इतनी बढ़ जाती थी कि हमें अपने ओवरकोटों में भी सर्दी लगने लगती थी।

अगले ही दिन से हमारी टोली के दो साथियों ने 'स्कीइंग' आरम्भ कर दी। यह खेल देखने का मेरा पहला ही अवसर था। बच्चों, स्त्रियों और पुरुषों के झुण्ड के झुण्ड पहाड़ियों की चोटी से नीचे फिसला करते थे, परन्तु जो लोग इस खेल को अच्छी तरह जानते थे वे बिजली की तार से लटकती हुई एक रस्सी को अपनी कमर में बाँध लेते थे और उसी के सहारे बिना एक क़दम उठाए वे पहाड़ की सबसे ऊँची चोटी पर पहुँच जाते थे जहाँ वे अपनी कमर पर बंधी रस्सी को खोलकर वापिस नीचे भेज देते थे, और फिर स्वयं स्कीइंग करते हुए तेज़ चाल से नीचे आ पहुँचते थे। नये रंगरूट धीरे-धीरे छोटी ढलान के ऊपर सँभल-सँभल कर जाते थे, और फिर फिसल कर नीचे आते थे। बच्चों की टोलियाँ 'स्लेजों' पर फिसल कर अपना मन बहलाया करती थीं। यूरोप में 'सर्दियों के खेल' अपना एक विशेष महत्त्व रखते हैं, और लोग बड़ी उत्सुकता से इनका इन्तज़ार किया करते हैं। 'आइस स्केटिंग' जानने के कारण मुझे स्कीइंग करने में कोई विशेष कठिनाई नहीं पड़ी, परन्तु जूते और स्की आदि किराये पर लेना अधिक कीमती होने के कारण, मैं एक दो दिन से अधिक स्कीइंग नहीं कर सका।

इन्हीं स्कीइंग मैदानों के नीचे छोटा सा 'कोर्शेवाल' नामक एक गाँव था जहाँ कितने ही कैफे, रेस्तराँ, होटल और दुकानें थीं। हम अपने दिन के खाने के सामान ख़रीद कर एक रेस्तराँ में आ बैठते थे और रेस्तराँ से लाल शराब, कॉफी आदि लेकर अपना भोजन किया करते थे और फिर शाम तक धूप में अधलेटे पड़े रहते थे या मैं कभी-कभी बाज़ारों के चित्र बना लिया करता था। ऐसी ही रोज़ की दिनचर्या थी। एक बार अकेला ६,००० फ़ीट की ऊँचाई पर बसे अन्तिम गाँव में गया; जहाँ कितनी ही बार ऊपर बर्फ पर चढ़ते समय मोटरें या लारियाँ आगे जाने से इन्कार कर देती थीं, उनका एक पहिया घूमा करता था, परन्तु बर्फ पर आगे नहीं बढ़ पाता था और फिर सब यात्री उतर कर धक्के लगाया करते थे। वहाँ से लौटते समय ढलान होने के कारण सात मील तक 'स्लेज' पर लौटा। इन छोटे-छोटे गाँवों में लकड़ी के

बने हुए रेस्तराँ और कैफ़े का वातावरण निराला होता है जहाँ अपनत्व का वातावरण देखने को मिलता है। कितनी ही बार अकेले सैर करने के बाद सर्दी दूर करने के लिए किसी कैफ़े में घुस कर चिमनी में लकड़ियों की जलती हुई आग के सामने कुर्सी घसीट कर गरम कॉफ़ी पीने में जो आनन्द मिलता था वह पेरिस के शानदार रेस्तराँ में भी कभी नहीं पा सका था। कभी-कभी रात्रि के ११ बजे के लगभग अपने होटल के कमरे की खिड़की से बाहर झाँक कर ऊपर आकाश में चमकते तारों या घाटियों में गूँजती हुई वायु के झोंके रात्रि की निस्तब्धता और सोई हुई प्रकृति को जगाते हुए देखकर एक क्षण के लिए मेरे विचार बहुत दूर उड़ जाया करते थे और वे अकेले क्षण और भी अकेले जान पड़ते थे मानो मेरा कहीं कोई घोंसला न हो।

हमारे गाँव में लगभग ३० मकान और २५० लोग थे। ऐसी कड़ाके की सर्दी में भी जब रात के समय किसी स्त्री को एक छोटी-सी झील के किनारे बर्फ़ जैसे ठंडे पानी में कपड़े धोते देखता था तो क्षण भर के लिए मुझे अपने ओवरकोट में भी सर्दी लगने लगती थी। चीथड़ों को सी कर पैंट या कमीज बनाकर अपनी सर्दी दूर करने वाले लोगों को देख कर तो एक बार काश्मीर की याद आए बिना न रहती थी। मकानों की दशा भी लोगों जैसी ही थी। किसी भी दीवार से गिरे हुए पलस्तर और किसी पुरानी खिड़की से अपनी अन्तिम साँसें लेते हुए लकड़ी के तख्ते ऐसे प्रतीत होते थे मानो अभी गिर पड़ेंगे। जिन इने-गिने लोगों की आमदनी टूरिस्टों पर निर्भर थी।

हमारे होटल के रेस्तराँ में काम करने वाली लड़की प्रतिदिन प्रातः आठ बजे से लेकर आधी रात तक काम किया करती थी, और कभी कभी अपनी थकान मिटाने के लिए काम करते-करते जब कभी किसी फ्रेंच लोक-गीत को वह धीरे-धीरे गाती थी, तब भी उसके स्वर में एक उदासी और निराशा की छाया देखा करता था। एक दिन रेस्तराँ में रात भर नाच और गाना होता रहा क्योंकि उसी गाँव में रहनेवाले युवक की अविवाहित जिन्दगी की वह अन्तिम रात थी जिसे वह अपने मित्रों के साथ मना रहा था। 'एकोर्डियन' का स्वर सारे गाँव में ठंडी हवा के साथ गूँज रहा था। इस प्रकार के अवसर इस ग्राम-जिन्दगी में कभी-कभी आते रहते हैं और यही यहाँ के लोगों के मनोरंजन के साधन हैं। एक रात को रेस्तराँ के हाल में दीवार पर एक सफ़ेद पर्दा लगाकर एक पुरानी फ़िल्म भी दिखाई गई जिसमें आस-पास के लोग भी आए थे।

इस प्रकार पेरिस की व्यस्त और कोलाहलमय जिन्दगी से दूर शान्त

वातावरण और प्रकृति की रहस्यमयी दुनियाँ में दस दिन काटकर हम वापिस रवाना हो गए। दो दिन पहले चलने का कारण यह था कि रास्ते में दूसरे शहर, कला म्यूज़ियम पुराने गिर्जे और 'बारुक' एवं 'रोमन' शिल्प-कला के नमूने देखने का समय बचा रहे। पहाड़ों की चढ़ाई पर मोटर चढ़ते समय जितना उल्लास और उत्सुकता थी उतना ही दुःख अब नीचे भागते समय हो रहा था। अस्त होते सूर्य की धुँधली किरणों में 'आलप्स' की चोटियों की श्वेत बर्फ पर क्षितिज के रंगीन बादलों की छाया पड़ रही थी, गाँव के पश्चात् गाँव छूटे जा रहे थे, कहीं 'स्कीइङ्ग' करके घर लौटने वालों की टोलियाँ, कैफ़ों में बैठ दिन भर की थकान दूर करने के लिए एक प्याला कॉफ़ी या सर्दी भगाने के लिए ह्विस्की पीने वालों की मंडलियाँ दिखाई देती थीं। थोड़ी देर में हम सीधी सड़क पर आ पहुँचे, पहाड़ अब भी दिखाई देते थे, परन्तु दूर, मानो किसी दूसरी दुनिया के हों। अन्त में रात काटने के लिए एक होटल के सामने हमने अपनी कार रोक दी और पेट भरकर खाना खाया।

प्रातःकाल तैयार होकर जब अपने कमरे की खिड़की से बाहिर झाँका तो सामने ही एक नदी देखकर बाहर निकल आया। नदी के ऊपर कुछ पहाड़ियाँ थीं जिन पर ऊँची चोटियों का साया था। हल्की धूप में नदी के ऊबड़-खाबड़ तट पर सैर की। एक ओर लारियों का अड्डा था जहाँ से आस-पास के शहरों और गाँवों की ओर लारियाँ जाती थीं। नाश्ता करके हम आगे बढ़े। पहाड़ अभी तक हमारा साथ दे रहे थे और छोटी-छोटी पहाड़ियाँ तो कभी सड़क के ऊपर ही दिखाई देने लगती थीं। 'एँसी' नामक प्रसिद्ध स्वास्थ्यवर्धक स्थान अत्यन्त ही सुन्दर और साफ़-सुथरा दिखाई दिया। बीच में एक बड़ी भारी हरे रंग के स्वच्छ पानी की झील थी, और चारों ओर पहाड़ियाँ जिन पर मकान ताश के घरों जैसे प्रतीत होते थे। गर्मियों के दिनों में फ्रांस और स्विट्ज़रलैंड से लोग यहाँ सैर करने आते हैं और झील के तट पर नंगे बदन 'सूर्य स्नान' करने वालों की टोलियाँ की टोलियाँ देखी जा सकती हैं। कैफ़े के बाहिर बाग में झील के किनारे धूप में बैठकर एक-एक प्याला गरम कॉफ़ी पीने का लालच हम नहीं छोड़ सके। दूसरे पहाड़ों की भाँति ऐंसी में भी होटल बहुत महंगे हैं। यह स्थान फ्रांस के मध्य वर्ग के लोगों के भी बूते के बाहिर है।

मोटर फिर ७० मील की रफ़्तार से भागने लगी। हमारी टोली में एक फ्रेंच युवक भी था जो पिछले युद्ध में जर्मनी के विरुद्ध फ्रेंच पार्टीज़नों के साथ मिलकर लड़ा था, पेरिस एवं उत्तरी फ्रांस पर नाज़ियों का अधिकार हो

जाने के पश्चात् फ्रेंच पार्टीजन यहाँ आल्प्स की पहाड़ियों से अपनी लड़ाई और आन्दोलन जारी रख रहे थे, इस प्रकार के कितने ही दिलचस्प और लोगों की वीरता के किस्से उसने हमें बतलाए।

'ओतों' नामक शहर का एक प्रसिद्ध गिर्जा और उसकी 'गोथिक' शिल्प-कला और मूर्ति-कला के पुराने नमूने देखने के लिए हमने अपना मुख्य रास्ता छोड़कर दूसरा अपनाया और दिन के तीन बजे के लगभग वहाँ जा पहुँचे। शहर में घुसते ही हमें दूर से गिर्जे की ऊँची मीनारें दिखाई दीं, दरवाजे के ऊपर ईसा एक विशाल मूर्ति पत्थर की बनी थी जिसकी कला प्राचीन मिस्री कला से काफी मिलती जुलती जान पड़ी। अन्दर शीशे की रंगीन खिड़कियों में बने चित्रों से घिरे हुए विशाल गिर्जाघर का अजीब सा वातावरण था। दीवारों के ऊपर बाईबल की कहानियाँ मूर्तियों द्वारा दिखाई गई थीं, बाहिर से खिड़कियों में पड़ती हुई धूप से गिर्जे के शीशों में बने हुए चित्र (Stain Glass Windows) चमक रहे थे, और मोटी-मोटी काली रेखाओं से उनमें अद्भुत शक्ति आ गई थी। मध्य युग की इस उच्च कोटि की कला से आधुनिक चित्रकारों ने बहुत कुछ सीखा है और अपने चित्रों में इन्हीं काली रेखाओं की नकल की है। शिल्प-कला के इतने उच्च कोटि के नमूने भी यूरोप में कम ही देखने को मिलते हैं। १२वीं शताब्दी में बना हुआ ओतों का यह गिर्जा शिल्प-कला के इतिहास में अपना विशेष महत्त्व रखता है। ओतों की बनी हुई शराब भी बहुत प्रसिद्ध है और मेरे फ्रेंच साथियों ने एक 'बार' में बैठकर जी भर कर अपनी प्यास बुझाई और मैं गिर्जे के साथ लगा हुआ एक संग्रह देखने चला गया, जहाँ पुरानी मूर्तियां आदि के नमूने रखे हुए थे, इस प्रांत की लोक-चित्रकला के कुछ चित्र भी थे।

'ओतों' से लगभग बीस मील की दूरी पर हम 'वजले' देखने भी गये रास्ता अत्यन्त सुन्दर था, और सड़क के दोनों ओर हरे-भरे खेत, पहाड़ियाँ और टीले थे। सूरज छिप रहा था, और क्षितिज में जमा हुए बादलों के झुंड विभिन्न रंगों में रंगे दिखाई दे रहे थे। किसी बाजार के मोड़ पर पीछे झाँकने से सुन्दर दृश्य दिखाई देता था, एक प्राकृतिक दृश्य बनाने वाले चित्रकार के लिए यह स्थान अति उत्तम है।

हल्की-हल्की बूँदा-बांदी होने लगी। हम सब चुपचाप शाम की नीरवता में 'वेजले' की स्मृतियाँ लिए अपनी यात्रा तय करने लगे और कुछ देर पश्चात् मन को हल्का करने के लिए हिन्दी, अंग्रेजी और फ्रेंच में गाना गाने लगे। रात घिर रही थी और अन्धकार के आवरण में लिपटी प्रकृति के बीच

हमारी मोटर गाँव और शहर पार करती हुई पेरिस जाने वाली सड़क पर तेज चाल से भागी जा रही थी। कुछ ही देर में हमने एक छोटे से शहर में अपनी यात्रा की अन्तिम रात बिताने के लिए एक होटल के सामने अपनी मोटर रोक दी और अपना सामान उतारने लगे। बादलों और वर्षा के कारण सर्दी की मात्रा बढ़ गई थी अतः हीटरों से गर्म हुए होटल के 'डायनिंग रूम' में खाना खाते समय हम दिन भर की यात्रा की थकान भूल गए।

प्रातःकाल फिर हम गरम कॉफी पीकर रवाना हो गए। पेरिस से लगभग ६० मील पहले 'शात्र' नाम के प्रसिद्ध गिर्जे को देखने का प्रोग्राम बना क्योंकि विश्व के 'गोथिक' टेकनीक में 'शात्र' की शिल्प-कला का दूसरा नमूना नहीं मिलता है। इसका मुख्य द्वार और आकाश को स्पर्श करती हुई दो भिन्न आकृतियों की मीनार पेरिस के प्रसिद्ध 'नौत्र दाम' से भी अधिक कलात्मक, विशाल और सुन्दर है। द्वार के ऊपर विभिन्न सन्तों (Saints) की रहस्यमयी मूर्त्तियाँ हैं जिन्हें देखकर १३वीं शताब्दी की उन्नत यूरोपियन मूर्त्ति-कला का आभास मिलता है। चारों ओर से गिर्जे को देखने के पश्चात् प्राचीन समय के शिल्पकारों के ज्ञान पर आश्चर्य होने लगता है जिनके नाम तक आज हमें याद नहीं हैं परन्तु उनकी कृतियाँ आज भी उनके युग को अमर बनाए हुए हैं। गिर्जे के अन्दर चारों ओर रंगीन खिड़कियों के शीशों पर बने चित्र भी अत्यन्त शक्तिशाली और समन्वयता से भरे हैं। एक मीनार के ऊपर चढ़कर नीचे शहर का दृश्य भी अजीब-सा मालूम पड़ा। आकाश स्वच्छ था और धूप में हमारी दृष्टि बिना किसी रुकावट के दूर-दूर तक जा सकती थी। छोटी-छोटी पक्की सड़कों, दुकानों और बाजारों के पश्चात् खेत, पेड़ों के झुण्ड और बाग-बगीचे थे और उनसे भी दूर धुँधली पहाड़ियाँ आकाश में मिलती हुई जान पड़ती थीं। यहीं मीनार के ऊपर धूप में बैठकर हमने अपने साथ लाया हुआ भोजन खाया और थोड़ी देर तक वहीं धूप में लेट कर सिगरेट के कश खैंचे।

और इस बार बिना कहीं रुके हमारी मोटर सीधी पेरिस की ओर भागने लगी। बीच में प्रसिद्ध 'फाऊँटेन बलो' के मनोरम जंगल देखे जहाँ बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में कितने ही 'पोस्ट एम्प्रेशनिस्ट' चित्रकार यहाँ बैठकर प्रकृति के रंगों का वैज्ञानिक अनुसंधान किया करते थे। अन्त में पेरिस की ऊँची 'आयफल टावर' दिखाई देने लगी, और हम शहर के दक्षिण के समीप पहुँच गए। एक बार फिर दस दिन के पश्चात् पेरिस का वही वातावरण और वही जिन्दगी हमारा स्वागत कर रही थी और हमने बिना किसी संकोच के उस स्वागत का उत्तर दिया।

१५. कोपेनहेगन का एक परिवार

डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन से लगभग ८ मील की दूरी पर लिंगबी नाम की एक छोटी-सी एकान्त और शान्तिमय बस्ती है जहाँ प्राय. वे लोग रहते हैं जिन्हें शहर का कोलाहल और धूमधाम पसन्द नहीं है। इससे सटी हुई तीन विशाल झीलें हैं जहाँ लोग दिन भर नावों पर सैर करते हुए दिखाई देते हैं। इसी लिंगबी में बसे हुए एक रिटायर्ड कप्तान के घर में मुझे महमान बनकर १५ दिन रहना पड़ा। परन्तु ये १५ दिन अपनी कितनी गहरी और सजीव स्मृतियों की छाया मुझ पर छोड़ गये जिन्हें मैं शायद जिंदगी में कभी भूल नहीं सकूँगा।

पहली भेंट मेरी इस परिवार से लिंगबी के छोटे-से स्टेशन पर हुई जहाँ दम्पति मेरा स्वागत करने आये हुए थे। पहली ही बातचीत में दोनों ने इतनी आत्मीयता और मैत्री का भाव दिखलाया कि मुझे महमान का जामा छोड़ कर उनके परिवार ही का एक सदस्य बन जाने पर विवश होना पड़ा। दूर-दूर तक जहाँ हरे-भरे खेत और ऊबड़-खाबड़ झाड़ियाँ और छोटे-छोटे लाल छतों वाले मकान ही दिखाई देते थे वहाँ इनका छोटा-सा दो मंजिला बंगला था जिसके चारों ओर फूलों की क्यारियाँ और विभिन्न प्रकार के फलों के पेड़ भरे पड़े थे। नीचे की मंजिल में एक खाने का बड़ा-सा कमरा था जहाँ आलमारियों में विभिन्न प्रकार के चीनी के बर्त्तन रक्खे थे जिन पर सुन्दर डिजाइन बने हुए थे, उसी से सटी बड़ी बैठक थी जिसकी दीवारों पर १८ और १९वीं शताब्दी की चित्रकला के सुन्दर नमूने थे और मेजों, कुर्सियों आदि पर विश्व के देशों की सुन्दर कला-कृतियाँ सजी हुई थीं जिन्हें देखकर अजायबघर के एक कमरे का आभास होने लगता था। कप्तान रोथलू की माता और दादा डेनमार्क के प्रसिद्ध चित्रकार थे और रोथलू को भी प्राचीन कला-सामग्री एकत्रित करने का बहुत शौक था और फ़ौज में काम करने के कारण उन्हें विश्व के कितने ही देशों का भ्रमण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जहाँ से वे इस प्रकार का सामान प्रायः खरीदा करते थे। उसी के बगल में दो और बैठने के छोटे-छोटे कमरे थे जहाँ आरामकुर्सियों पर बैठ कर प्रातःकाल के समय मैंने कितनी ही बार धूप का आनन्द उठाया। ऊपर सोने

के चार कमरे थे और जो कमरा मुझे दिया गया वहाँ कि खिड़की से झील का दृश्य अति आकर्षक दिखाई देता था।

कप्तान रोथलू की आयु ६८ वर्ष की थी परन्तु स्वास्थ्य इतना अच्छा था कि पचास से अधिक नहीं लगते थे। कुछ बाप दादों की जायदाद थी और कुछ पेंशन मिलती थी जिससे पति-पत्नी का खर्च बड़ी आसानी से निकल आता था। प्रातःकाल ६ बजे नाश्ता करके वे भोजन के समय तक अपने बाग में काम किया करते थे। फूलों-फलों आदि का बहुत शौक था और कहीं किसी नये फूल को देखकर उसे अपने बाग में लगाने का लालच वे नहीं छोड़ सकते थे। उनके घर में जो कोई भी अतिथि आता तो कम से कम एक घंटा तक उसे रोथलू के साथ बाग की सैर करनी पड़ती थी जहाँ कप्तान उसे विभिन्न फूलों और फलों का इतिहास और विशेषतायें बतलाते थे कि कहाँ से और कैसे उन्होंने उनके बीज मंगवाये और पहले-पहल उन्होंने कब, कहाँ और कैसे उन पौधों को देखा था। फिर मैं तो १५ दिन का उनका अतिथि था और मुझे प्रतिदिन ये कहानियाँ सुननी पड़तीं थीं जिससे मुझे कितने ही फूलों और पौधों के नाम याद हो गये। उनकी पत्नी मतिया की अवस्था ६० के लगभग थी और उनके मुँह में सिगरेट न होने से उनसे घर का कोई काम नहीं हो सकता था। रसोई में खाना पकाते समय तक उनके होठों में सिगरेट दबी होती थी। वे अंग्रेजी का एक शब्द भी नहीं जानती थीं और मुझसे बातें करते समय डेनिश, फ्रेंच, जर्मन की खिचड़ी पका कर मुझे समझाने का प्रयास करती थीं और एक भी अक्षर न समझने पर भी मैं सदा गर्दन हिला कर अपनी स्वीकृति सूचित किया करता था। परन्तु कोई प्रश्न पूछने पर मैं एक अजीब-सी विकट स्थिति में पड़ जाता था और तब मुझे रोथलू का आश्रय लेना पड़ता था। कभी मां बनने का सौभाग्य प्राप्त न होने पर उनका मातृत्व सदा अपूर्ण रहा और १५ दिन तक उनके साथ रहने पर वे मुझ पर पुत्र की भाँति स्नेह करने लगी थीं।

तीन मास पूर्व फ्रांस की सैर करते समय ल्योन शहर से यह दम्पति अपने साथ एक फ्रेंच ग़रीब परिवार के १२ वर्ष के बालक जार्ज को ले आये थे और वह अपनी गर्मियों की छुट्टियाँ आराम से लिंगबी में बिता रहा था। मतिया जार्ज को अपने पुत्र से भी अधिक स्नेह करती थीं जिसके परिणाम-स्वरूप वह कभी-कभी ढीठ और जिद्दी बन जाता था और इसी विषय को लेकर कभी-कभी पति-पत्नी में झगड़ा तक हो जाता था। जार्ज इस घर में बहुत अकेला अनुभव करता था और मेरी उस घर में कुछ दिन तक रहने
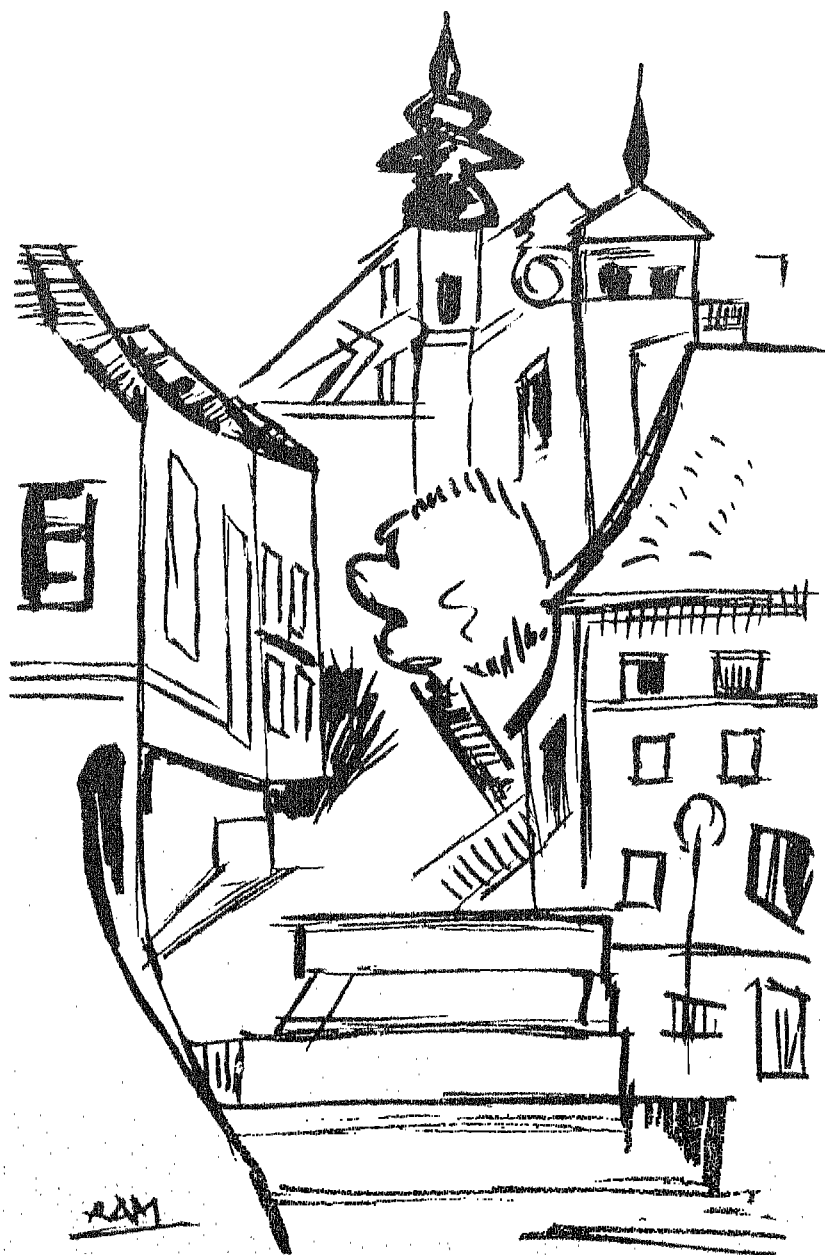
कोपेनहागेन का एक दृश्य

को बात जान कर उसकी प्रसन्नता की सीमा न रही। अन्त में परिवार के एक अन्य प्राणी का भी जिक्र करूँगा जिस से मैं विशेष रूप से प्रभावित हुआ। ७८ वर्ष का याकब पिछले १५ वर्षों से इस परिवार के साथ है और प्रातःकाल मुर्गियों और कबूतरों का दाना डालना, घर की सफाई करना, रसोई में बर्त्तन धोना आदि सब काम वही करता था। उसके पिचके हुए गाल, झुर्रियां भरा चेहरा, थिगलियां लगी हुई पेंट, पुराने जमाने की ऐनक और छोटी-छोटी आँखें, हल्की सी दाढ़ी और होठों में लगा हुआ सिगार आदि उसके व्यक्तित्व की विशेषतायें थीं। ईमानदार इतना था कि सारा घर महीनों उसकी जिम्मेदारी पर छोड़ कर भी कभी कप्तान रोथलू एवं मतिआ को चिन्ता नहीं होती थी। उसके विषय में कितनी ही कहानियाँ प्रचलित थीं जिन्हें सुना कर दम्पत्ति अपने अतिथियों का मनोरंजन किया करते थे परन्तु उन सबमें याकब का व्यक्तित्व जिन्दगी के विषाद की गहरी छाया में डूबा दिखाई देता था। एक बार उसके जन्म-दिन पर किसी ने बढ़िया कॉफी का एक पैकेट उसे भेंट दिया परन्तु याकब ने पहला ही प्याला पीकर शिकायत की कि उसे अपनी पुरानी कॉफी ही अधिक पसन्द है जो डेन्मार्क की सबसे सस्ती कॉफी है। परिवार से किसी बात पर झगड़ा हो जाने के कारण याकब घर छोड़कर कहीं और चला गया, परन्तु एक सप्ताह पश्चात् ही रोथलू को अपने एक मित्र का पत्र मिला जिसमें उनसे याकब को फिर से वापिस बुला लेने का आग्रह किया हुआ था क्योंकि याकब ने उस मित्र को एक बड़ा हृदयद्रावी पत्र लिखा था और अपने वापिस लौटने की इच्छा प्रकट की थी। इसी प्रकार की कितनी ही दिलचस्प बातें याकब के विषय में प्रचलित थीं। ऊपर उसके कमरे में बैठकर उससे बातें करने में उसे जो प्रसन्नता मिलती थी उसका वर्णन उसकी आँखों की चमक देखकर हो जाता था। घर का कुत्ता 'फ़ाक' भी उसी के कमरे में रहता था और फ़ाक के साथ कितनी ही देर तक बातें करके याकब अपनी जिन्दगी के सूनेपन और एकाकीपन को दूर करने का प्रयास किया करता था। याकब और फ़ाक दोनों ही एक दूसरे में अपने प्रति सहानुभूति और मैत्री का भाव अनुभव करते थे। रोथलू प्रतिदिन रात को सोने से पूर्व याकब के कमरे में जाकर १५ मिनट तक उससे बातें किया करते थे जिसकी प्रतीक्षा याकब अत्यन्त उत्सुकता से किया करता था।

कप्तान रोथलू का परिवार डेनमार्क के सबसे प्राचीन परिवारों में से एक है और जिसकी चर्चा करना, डेनिश एनसाईक्लोपीडिया खोल कर अपने परिवार का इतिहास दिखलाना उनके लिए बड़े गर्व की बात थी। बड़े चाव

से अपनी आलमारियाँ और मेजों की दराजें खोलकर वे परिवार की मोहरें और कितनी ही दूसरी चीजें लोगों को दिखलाया करते थे। अपने कला-संग्रह पर उन्हें गर्व था और उनकी बातें सुनकर मुझे ज्विग की 'अदृश्य संग्रह' नामक कहानी की याद आ जाती थी। उनकी बैठक का सोफ़ा सेट पुराने डेनमार्क के राजा के घर से खरीदा गया था। दो कमरों के बीच की दीवार में लगी शीशों वाली खिड़की पिछले युद्ध में बेलजियम के गिर्जाघर से लाई हुई थी, तीन चार चित्रों के विषय में रोथलू को सन्देह था कि क्या वास्तव में वे पुराने प्रसिद्ध चित्रकारों की कृतियां हैं क्योंकि इस विषय पर प्रायः लोगों में मतभेद होता था। सिगरेट की पाइपों पर जर्मनी की पुरानी ऐतिहासिक घटनाएँ अंकित थीं। बड़े चीना के फूलदानों पर तिब्बत की कला के नमूने थे जिन्हें रोथलू ने कितने ही वर्ष पूर्व तिब्बत में खरीदा था। न्यूगिनी के कुछ पत्थर थे जो 'स्टोन एज' के समय में हथियारों का काम देते थे, इंग्लैण्ड की एलिजाबेथ के समय की विशाल मेज थी, फ़ारस के कालीन थे और जापान की तांबे की मूर्त्तियाँ थीं, और फिर डेनमार्क की कला के छोटे-छोटे नमूने पाना तो स्वभाविक था ही, यहाँ तक कि कॉफी पीने के प्याले, चम्मच तक दरबारी कम्पनी में बने हुए थे जिन्हें खरीदने का अधिकार केवल इने-गिने लोगों को ही था। उनके इस कलामय वातावरण में तो मुझे यहाँ तक सन्देह होने लगता था कि स्वयं रोथलू, मतिया और याकब तक में पुरानी कलाकृतियों की छाप थी। उनके इस संग्रह की चर्चा दूर-दूर तक कोपेनहेगन में थी और मेरे सामने ही दो खरीदार उनकी कुछ कृतियों को खरीदने की इच्छा से आये थे परन्तु दम्पति ने एक भी चीज बेचने से साफ़ इन्कार कर दिया।

रोथलू बार-बार कहते थे कि यह भी भाग्य की बात है कि इस घर में एक भारतीय कलाकार अतिथि बनकर आया। रोथलू को किसी समय में शिकार का भी बहुत शौक था और उन दिनों की स्मृतियाँ अभी तक उनकी आलमारियों में बन्दूकों के रूप में और दीवारों पर नाना प्रकार के सींगों में दिखाई देती हैं, उनके शिकार के किस्से भी बहुत मनोरंजक हैं जिन्हें कितनी ही बार सुनने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ।

लिंगबी के प्राकृतिक दृश्यों की कमी नहीं थी। यद्यपि डेनमार्क में न नार्वे विशाल काली चट्टाने हैं जिन पर सदा समुद्र की लहरें प्रहार किया करती हैं और न ही एल्प्स जैसे ऊँचे-ऊँचे हिम-आच्छादित पहाड़ हैं परन्तु दूर-दूर तक फैले हुए हरे-भरे मैदान, विशाल झीलें और उनकी कितनी ही छोटी-छोटी धाराएँ हैं जिनके ऊपर पेड़ों को काट-काट कर लकड़ी के छोटे-छोटे पुल

बने हुए हैं, झीलों में तैरती हुई छोटी-छोटी किशतियाँ हैं जिनमें कोई कम्बलों में लिपटा हुआ धूप की किरणों में कोई पुस्तक पढ़ता दिखाई देता है या कोई मछली पकड़ने के लिए दूर-दूर तक अपना जाल फेंकता है और छोटी-छोटी ऊँची-नीची सड़कें हैं जिनका अपना एक अलग अस्तित्व है। कोई भी प्रकृति प्रेमी इन दृश्यों को देखकर आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकता। हमारे घर से लगी हुई ही 'लिंगबी' नाम की एक झील थी जिसके चारों ओर बड़े-बड़े वृक्ष, ऊबड़-खाबड़ झाड़ियाँ और पहाड़ियाँ थीं, कितनी ही बार बीच में कोई घास का मैदान आ जाने से झील छोटी-छोटी धाराओं में विभाजित हो जाती थी। इन दृश्यों को देखकर श्रीनगर की डल झील की याद आये बिना नहीं रहती। चाँदनी रातों में या अस्त होते समय सूर्य की किरणों की छाया में यहाँ नाव चलाने का जो आनन्द आता था वह अपना ही एक आकर्षण रखता है। एक और विशाल झील है जो बहुत खुले में स्थित है और यहाँ प्रातःकाल ही कोपेनहेगन और आस-पास के स्थानों से बच्चों, स्त्रियों और पुरुषों के झुंड के झुंड साइकिलों और मोटरों में अपना-अपना भोजन लिये आ जाते थे और झील के किनारे किसी पहाड़ी पर अपना अड्डा जमा लेते थे। चारों ओर पहाड़ियाँ थीं और उनके ऊपर डेनमार्क का नीला आकाश, जहाँ कहीं-कहीं सफेद बादलों की छोटी-छोटी टुकड़ियाँ गश्त लगाती दिखाई देती थीं। सारे वातावरण को देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानों यहाँ रहने वालों की जिन्दगी पर दैनिक समस्याओं की छाया नहीं पड़ती। मैं और जार्ज भी घंटों इस झील के तट पर हरी-हरी घास पर लेटकर धूप में अपना शरीर गर्म किया करते थे। जब गर्मी अधिक हो जाती थी तो उस दिन को डेनिश लोग 'भारतीय गर्मियां' कहकर पुकारते थे। इन्हीं झीलों के तट पर बसे हुए कितने ही छोटे-छोटे रेस्तराँ थे जिनकी कुर्सियाँ और मेज़ बाहर धूप में रक्खी रहती थीं और वहाँ बैठकर एक प्याला गर्म कॉफी पीकर और डेन-मार्क की प्रसिद्ध पेस्तरियाँ खा कर मैं अपने आस-पास की जिन्दगी को भूल जाता था। और फिर लिंगबी में बने छोटे-छोटे दो मंजिले बंगले थे जिनमें रहने वाले एक दूसरे से भली भांति परिचित थे। उनकी जिन्दगी को देखकर एक छोटे-से परिवार का आभास होने लगता था। सड़कों पर एक दूसरे से भेंट होने पर वे एक दूसरे का अभिवादन अत्यन्त सहृदयता के साथ करते थे और एक दूसरे के दुःख-दर्दों में सदा हाथ बंटाया करते थे।

रोथलू की अपनी जिन्दगी भी एक उपन्यास से कम रोमांचकारी नहीं थी। पहली पत्नी एक अन्य व्यक्ति के साथ भाग गई थी और उनकी एक

लड़की ने एक २२ वर्ष की आयु में आत्महत्या कर ली, दूसरी लड़की का पति एक लफंगा निकला और अब उन के तलाक़ की बातचीत चल रही थी। मतिया के साथ रोथलू अब यद्यपि बड़े सुख से रिटायर्ड ज़िन्दगी बिता रहे थे परन्तु किसी भी बच्चे के न होने से दोनों को सदा किसी का अभाव खटकता रहता था। वे गर्मियों में कभी नार्वे, कभी फ्रांस या जर्मनी की सैर कर आते थे।

उनके घर में एक सुन्दर जिल्द की कापी थी जिस पर उनके घर पर आये अतिथि अपने हस्ताक्षर कर जाते थे और दोनों प्राणियों के प्रति अपनी शुभाकांक्षाएँ प्रकट कर देते थे। मेरे आने के अन्तिम दिन मुझे भी इस पर हस्ताक्षर करने के लिये कहा गया परन्तु अपनी भावनाएँ प्रकट करने के लिये मेरे पास उपयुक्त शब्द ही नहीं थे क्योंकि उस परिवार में मैंने जो कुछ पाया उन्हें शब्दबद्ध करना असम्भव था।

मतिया भारत के विषय में मुझसे अनेक प्रश्न पूछा करती थीं और 'हिमालय पर्वत' का नाम सुनते ही वे अपने हृदय पर हाथ रख कर कहतीं कि हिमालय उनके हृदय में बसा हुआ है जिसके स्वप्न वे सोते जागते देखा करती हैं। मैंने इस दम्पति को भारत आने का निमंत्रण दिया, और यदि अवसर मिला तो वे किसी दिन अवश्य आयेंगे।

रोथलू, मतिया, याकब सब अत्यन्त साधारण व्यक्ति हैं परन्तु इनकी सादगी के पीछे ज़िन्दगी का कितना बड़ा रहस्य, कितना महत्त्व छिपा पड़ा है उसका आभास शायद इस लेख से नहीं लग सकेगा। अन्त में मेरे बिदा लेने का दिन आ पहुँचा। शाम को गाड़ी जाती थी परन्तु प्रातःकाल से ही मतिया कितनी ही बार मेरी ओर घूर-घूर कर देखती थी और जब मेरी दृष्टि उन पर जाती थी तो उन भरी-भरी आँखों में मैं सदा एक ममत्व की छाया देखता था। खाने के पश्चात् हम बाग़ में धूप में बैठे रहे जहाँ मतिया ने हमारी फ़ोटो खींची। शाम की चाय के लिये उसने बड़े स्वादिष्ट केक बनाये थे और फिर स्टेशन जाते समय एक बंडल पकड़वा दिया जिसमें तीन बार का भोजन तैयार करके रक्खा हुआ था। उस क्षण मैंने क्या अनुभव किया यह नहीं जानता परन्तु उसी प्रकार का आभास हुआ जब भारत में घर से बाहर जाते समय माँ एक पोटली में पूरी और आलू बाँध कर यात्रा के लिये दिया करती थी। इस अनजाने परिवार में भी उसी प्रकार घर का-सा व्यवहार पाकर विचलित हो गया। स्टेशन पर गाड़ी के सीटी देने से पूर्व बड़े प्यार से मतिया और रोथलू ने मेरा सिर चूमा,

जार्ज ने एक सिगरेट का पैकेट भेंट किया और जब तक खिड़की में वे दिखाई देते रहे तब तक उनके श्वेत रूमाल और मतिया की आँसू भरी आँखे दिखाई देती रहीं । आज भी जब पेरिस में अपने कमरे में कभी अकेला बैठ कर सोचता हूँ तो अनायास ही रोथलू परिवार और विशेषकर मतिया की स्मृतियाँ घिरी आती हैं और कितनी ही देर तक उन सुखद घड़ियों की कल्पना में ही सुख अनुभव करता हूँ या दुख, यह कभी जान नहीं सका ।

१६. पेरिस से वारसा

पिछले विश्व-युद्ध के पश्चात् १९४५ में पोलैंड की राजधानी वारसा के खण्डहरों पर चलते समय एक दिन लोगों ने कहा था कि किसी दिन यहाँ भी एक शहर था—कोई छोटा-मोटा मामूली शहर नहीं वरन् एक बड़े देश की राजधानी जिसकी सड़कों और बाजारों में पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के झुण्ड घूमा करते थे, जिसकी यूनिवर्सिटियों और प्रयोगशालाओं में पोलिश छात्र अध्ययन किया करते थे, जिसके संग्रहालयों में एक देश की पुरानी और नई कला के नमूने इसकी संस्कृति का आभास दिया करते थे और जहाँ जिन्दगी थी—परन्तु सब कुछ समाप्त हो गया—जब जनवादी सरकार ने अपनी जिंदगी का पहला प्रातःकाल देखा तब सबसे प्रथम प्रश्न पोलैंड की राजधानी के विषय में उठा। जिस शहर के ८६ की सदी मकान धरती से जा लगे हों और शेष की कुछ दीवारें, कुछ टूटे फूटे कमरे और कुछ छतें बची हों, ऐसे खण्डहर को किस प्रकार राजधानी बनाये रक्खा जा सकता है, यही प्रश्न पोलैंड की जनता से भी पूछा गया परन्तु सबने एकमत होकर वारसा को ही राजधानी बनाये रखने की आवाज बुलंद की और गाँव-गाँव, शहर-शहर से लोगों और परिवारों की टोलियाँ इन खण्डहरों को महलों में परिवर्तित करने के लिए वारसा आने लगीं, टूटी-फूटी ईंटों और पत्थरों, बम और गोलियों की बौछारों से आधे चप्पे गिरे हुए वारसा के वीरानों में एक बार फिर प्राणों का स्पन्दन हुआ। लोगों में जोश था, अपना जमीन से लगा शहर उठा कर आकाश से स्पर्श करवाने की लगन थी। छात्रों, मजदूरों, किसानों, दूकानदारों, कलाकारों, लेखकों, स्त्रियों और बच्चों तक की टोलियों ने काम करना आरम्भ कर दिया। रूस से मशीनें आईं, शिल्पकार आये, सामान आया और सब के देखते देखते शहर खड़ा होने लगा, जो रात को खण्डहर दिखाई देता था, वह प्रातःकाल एक साफ-सुथरे मकान की आकृति बन जाता था। दिन रात, सर्दी-गर्मी चौबीसों घण्टे और बारहों महीनें काम होता रहा, एक एक करके संग्रहालय बने, यूनिवर्सिटी बनी, बड़े-बड़े बाजार खड़े हुए, मजदूरों के रहने के साफ-सुथरे, फ्लेट तैयार हुए, विस्चा नदी के ऊपर पुल दिखाई दिया, पूर्व और पश्चिम को मिलाने के
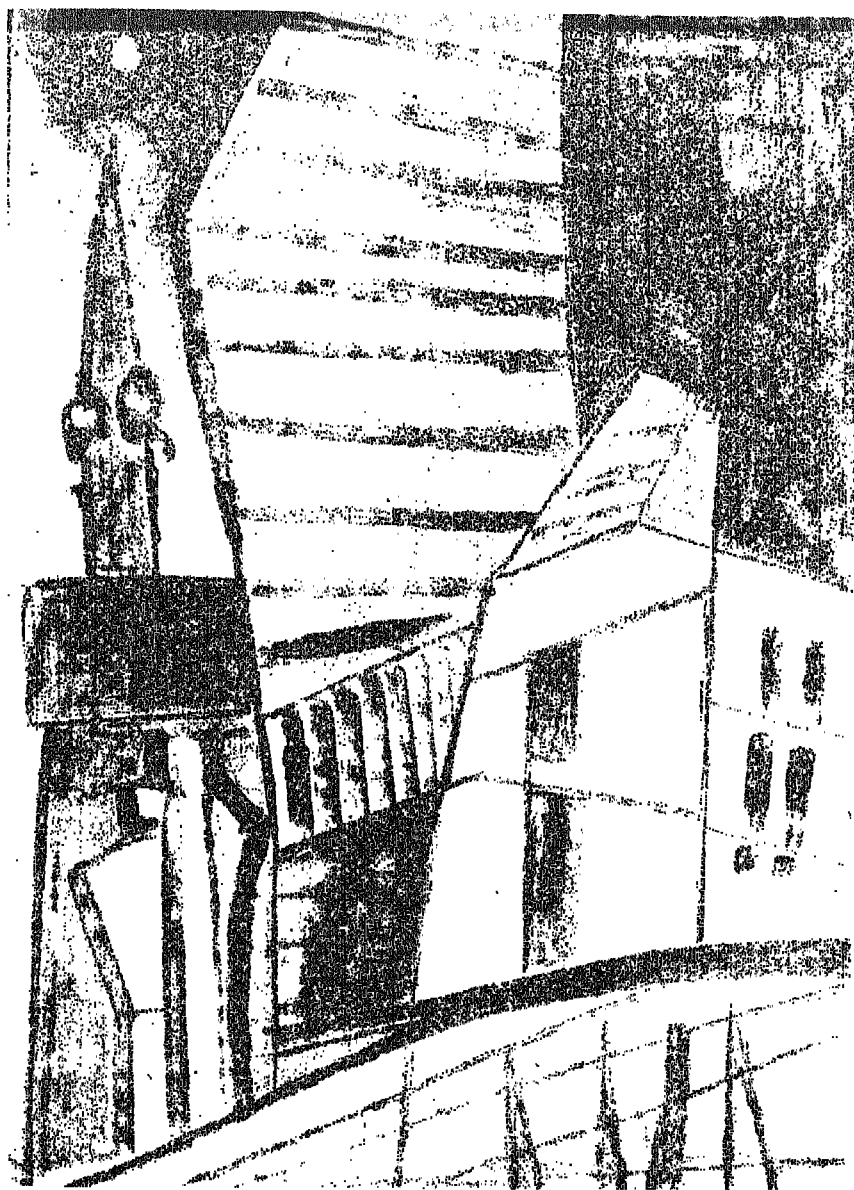
वारसा के मकान

लिये एक लम्बी सुरंग बनी, और १९५० में जब दूसरे शान्ति सम्मेलन के अवसर पर विश्व के विभिन्न देशों से प्रतिनिधि आये तो उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। जिन लोगों ने १९४५ और ४७ में वारसा को देखा था, उसी शहर में आकर आज वे सड़कें, मकान और प्रसिद्ध ईमारतें देख कर पुराने वारसा को भूल गये। सब कुछ बदल गया था, जिंदगी ही बदल गई थी, जिसको पहचानना कठिन था। पोलिश लोगों ने विश्व को दिखा दिया कि जनवादी शासन के अन्दर किस प्रकार काम होता है, किस प्रकार शहर खड़े किये जाते हैं, किस प्रकार मुट्ठी भर लोगों के बदले आम जनता की आवश्यकताओं की पूर्त्ति को महत्त्व दिया जाता है। आज यदि पोलैंड के सबसे बड़े शत्रु से भी इस विषय में उसकी राय पूछी जाय तो वह इस बदले हुए नक्शे को देख कर सराहे बिना नहीं रहेगा।

वारसा के किसी कोने में भी दृष्टि डालने पर पता चलता है कि लोग किस प्रकार काम कर रहे हैं। विश्व शांति सम्मेलन के अवसर पर ढाई हजार प्रतिनिधियों को होटलों में ठहराये न जाने के कारण कुछ लोगों को मजदूरों के लिये बनाये गये नये फ्लेटों में ठहराया गया। खुली ताजी हवा में तीन मंजिले फ्लेटों में प्रत्येक में तीन कमरे, रसोई घर, स्नानागार (जो पेरिस में धनी लोगों को ही प्राप्त होता है) हीटर, गरम पानी के नल और गेस का प्रबन्ध था। तीन ओर ये ईमारतें थीं और बीच में एक बड़ा-सा बाग था। इन मकानों को देख कर एक बार पेरिस के मजदूरों के मकान याद आये जिनकी छतें धरती को छूने को लालायित रहती हैं। इस प्रकार के १०० फ्लेट १७ दिन में खड़े कर दिये गये थे। निश्चित मात्रा से अधिक उत्पादन करने का प्रत्येक स्थान पर मुकाबिला-सा होता रहता है। यह सब देख कर मुझे पेरिस में रहने वाले अपने एक अमरीकन मित्र की याद आई जो एक दिन शिकागो की एक फैक्टरी में काम करता था और हमारी मंडली में बहस करते समय कहा करता था कि मिल में काम करनेवाले मजदूर की जिंदगी कभी सुखद नहीं हो सकती चाहे उसे मोटर, बँगला और रेडियो तक नसीब हो। यहाँ मजदूर का दर्जा देश के सबसे सम्मानित दर्जों में है।

इतनी शीघ्र जमीन से लगे शहरों और पिछले युद्ध में सबसे अधिक युद्ध का शिकार बनने के बावजूद भी हम इस देश को आज इतना उन्नत देखते हैं इसका कारण यह है कि यहाँ की औद्योगिक नीति युद्ध के लिए न होकर शान्ति काल के लिये है, दूसरा स्पष्ट कारण यहाँ का जनवादी शासन

है । पिछले युद्ध की स्मृतियाँ अभी तक लोगों के चेहरों, उनके हाथों में खुदे कैम्पों (Concentration Camps) के नम्बरों और गोलियों के चिह्न वाले मकानों में बाकी हैं । पोलैंड के लोगों में विश्व-शान्ति की भावना किस हद तक मौजूद है इस के कितने ही उदाहरण शान्ति सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने देखे होंगे । सड़कों पर अपने माता-पिता या भाई-बहन का हाथ पकड़े, सर्दी से बचने के लिए सिर से पैर तक गरम कपड़े पहने, स्वस्थ और सुन्दर पोलिश बच्चों को शान्ति प्रतिनिधियों को बसों जाते देख कर उनके मुस्कराकर हाथ हिलाने पर एक बार फिर बमों और गोलियों से इन मासूमों की जिंदगी को पंगु बना देने की बात सोचना भी सम्भव नहीं है ।

नाजियों के अमानुषिक अत्याचारों और पाशविक बर्बरता के दो चिह्न पोलैंड में अभी तक बचे हैं जिन्हें देखकर किसी की भी साँस एक बार रुक जाती है । वारसा से ५ मील के अन्तर पर 'घेटो' (Ghetto) का दो मील का विध्वंस इलाका देखकर आज फिर उन्हीं नाजियों की सशस्त्र सेना की योजना शायद कोई ही सहन कर सकता है, 'घेटो' पर चलते समय आज भी पोलिश लोगों के कथनानुसार हम जमीन पर नहीं, यहूदी शहीदों की हड्डियों पर चलते हैं । इस स्थान पर यूरोप के विभिन्न देशों से लाये गये लगभग एक करोड़ क़ैदियों के अतिरिक्त पचास लाख पोलिश लोग भी यहीं शहीद हुए थे, यह दो मील की बस्ती यहूदियों का निवास स्थान थी जहाँ घर के घर और बाजार, मुहल्ले तक नाजियों ने जला दिये थे, यहूदियों का सशस्त्र मुकाबिला भी पिछले युद्ध के इतिहास में अमर रहेगा । जब हम यहाँ पहुँचे तो शाम का सन्नाटा सर्दीली हवा के झोंकों के साथ साँय २ कर रहा था । दूर दूर तक अँधेरे में ईंटों के ढेर और आधे चपे मकानों की जली दिवारें और खिड़कियाँ वातावरण में भय और पुरानी स्मृतियाँ पैदा कर रही थीं । बीचोबीच मोटर की रोशनी पड़ने से फूलों के ढेर ऊपर इन शहीद यहूदियों का एक पत्थर का स्मारक बना था जिस में चार पाँच मूर्तियाँ अंकित थीं । गाइड ने जब कुछ शब्दों में 'घेटो' की कहानी सुनाई तो रोंगटे खड़े हो गये । इसी स्मारक के सामने एक बड़ी सी ईंटों की इमारत-जिसमें से बिना शीशों की कुछ खिड़कियों में से पीछे आकाश झाँक रहा था—के विषय में पूछने पर पता चला कि यह यहूदियों का संस्कृति केन्द्र था जिसका सब कलात्मक सामान तो जर्मनों ने अपने घर भिजवा दिया था या फिर इसी के अन्दर जलकर खाक हो गया था । इस तहस-नहस

दो मील के इलाके को इसी प्रकार अभी तक छोड़ दिया गया है यद्यपि शहर के पास वाले किनारों पर कुछ नए मकानों की पंक्तियाँ दिखाई देती हैं ।

दूसरा उदाहरण वारसा के दक्षिण में पिछले युद्ध का विश्व प्रसिद्ध आसविच कैम्प है जहाँ हिटलर ने लाखों बच्चों, स्त्रियों और पुरुषों को गैस, गोलियों और अन्य पाशविक साधनों द्वारा मौत के घाट उतारा था। बीसवीं शताब्दी की उन्नत यूरोपियन सभ्यता में इतने अमानुषिक और जंगली तरीकों का भी उपयोग किया जा सकता है, इसकी कल्पना करना भी आज सम्भव नहीं है परन्तु अपनी आँख से प्रत्यक्ष रूप में देख कर विश्वास करना ही पड़ा । जिस आसविच कैम्प के समाचार पिछले युद्ध के समय समाचार पत्रों में ही पढ़ कर सिहर जाया करते थे, आज उन्हें देख कर हमारे रोंगटे खड़े हो गये। बहुत लम्बे चौड़े वीरान और सुनसान इलाके के चारों ओर बिजली की तारें लगी थीं जिससे क़ैदियों के भागने का कोई भय नहीं रहता था, जब कभी नाजियों के भीषण अत्याचार अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाते थे तब कोई अभागा जान बूझ कर सिपाहियों से छिप कर इस एक तार का स्पर्श कर लेता था और तत्काल उसकी जीवन लीला समाप्त हो जाती थी । इसके मुख्य द्वार पर घुसते ही सर्वप्रथम इन शहीदों की स्मृति में बनी पत्थर की एक विशाल मूर्ति थी जहाँ प्रतिदिन वर्तमान समय में यहाँ के निवासी उस पर फूल चढ़ाते हैं ।

सर्दी कड़ाके की थी और आकाश से धीरे-धीरे बर्फ रुई के फूंदों की भाँति गिर रही थी । हमारे आने का समाचार सुन कर बूढ़ी स्त्रियाँ, बच्चे और पुरुष दूर दूर से हमारी ओर घूर रहे थे मानो अतीत, वर्तमान और भविष्य के विचारों में गोते खाते हुए उनकी नजरें हमसे कह रही हों कि भविष्य में ऐसा ही इतिहास कभी फिर बनने से रोकना होगा, दुनियाँ में एक से अधिक 'आसविच' बनने से मानवता का भविष्य सदा के लिये अंधकार में विलीन हो जायेगा और क्या कोई भी किसी भी देश से आया हुआ प्रतिनिधि उन बूढ़ों की झुर्रियों की कहानियाँ और बच्चों के खिलते हुए भविष्य की बात को भूल सकेगा। आज 'आसविच' समाप्त हो जाने के पश्चात यहाँ पर उन इमारतों में उस भयानक नाटक के विभिन्न दृश्यों की एक छाया देखने को मिलती है जो किसी समय प्रत्यक्ष रूप में यहाँ खेले गये थे । 'एक क़ैदी की जिन्दगी' नाम का बड़ा सा अजायबघर कितनी ही इमारतों में स्थित है जहाँ जर्मनों के अधीन एक क़ैदी की जिन्दगी की विस्तृत व्याख्या विस्तार के साथ की गई है । किसी भी क़ैदी को यहाँ दो महीने से अधिक

रहने की आज्ञा नहीं थी क्योंकि दूसरे क़ैदियों के लिए उन्हें यह स्थान खाली करना पड़ता था। इन दो महीनों की नाटकीय जिन्दगी में या तो वह स्वयं समाप्त हो जाता था या फिर 'गेस चेम्बर' में दस मिनट तक तड़प तड़प कर उसके प्राण उसका शरीर छोड़ देते थे या फिर गोलियाँ उसके अर्द्ध जीवित जर्जर शरीर को अपना शिकार बना लेती थीं। एक कमरे में जिन क़ैदियों की फोटो पोलैंड के स्वतंत्र होने पर बची रह गई थीं वे टाँगी हुई हैं जिनमें बच्चे, युवा और बूढ़े सब हैं। क़ैदियों को नीली धारियों वाली जेब की पोशाकें भी यहाँ है। राजनैतिक क़ैदी होने के नाते उसे दूसरे क़ैदियों की बनिस्बत अधिक अत्याचार सहने पड़ते थे। इसी प्रकार स्त्रियों का एक अलग कैम्प था जहाँ उनके रहने, काम करने, खाने पीने और मौत की व्यवस्था अलग थी। पोलैंड की प्रसिद्ध सर्दी में, नंगे पैरों के नीचे बर्फ की चादर होने पर भी उनके हड्डियों के शरीरों का दो दो घण्टों तक प्रतिदिन प्रातःकाल और शाम को कवायद करनी पड़ती थी और काम करना पड़ता था। किसी के भी सुस्ती दिखाने पर या कमजोरी के कारण गिर पड़ने पर क्या मरम्मत होती थी इसकी आज केवल कल्पना ही की जा सकती है। बच्चों के कैम्प में आते ही उन्हें उनकी माताओं और भाई बहनों से अलग कर दिया जाता था और कुछ ही दिनों में केवल उनकी चीत्कारें ही आकाश में गूँजा करती थीं, उनको जीवित रखने के लिए खाना आदि देने की बात नाजियों को पसन्द नहीं थी क्योंकि वे अधिक काम नहीं कर सकते थे। इस प्रकार की कितनी ही करुण-गाथायें इन अजायब-घरों में देखने को मिलीं जिन्हें केवल सुन सुन कर ही एक दिन विश्व काँप उठा था इसी प्रकार का एक विशाल 'मृत्यु कैम्प' (Concentration Camp) था जहाँ गेस चेम्बरों से ६०,००० व्यक्ति रोज मारे जा सकते थे, ऐसी ही विस्तृत और आयोजित यहाँ की व्यवस्था थी। इन गेस चेम्बरों में सिर के बाल बाधा डालते थे अतः वहाँ भेजने से पूर्व उनके सारे सिर मूंड दिये जाते थे और एक प्रकार की मशीन से इन बालों का कपड़ा बन जाता था। इन बालों का ढेर अब भी शीशे की एक विशाल आलमारी में देखा जा सकता है और कपड़ा बनाने की मशीन रक्खी हुई है। यदि किसी व्यक्ति के मुँह में सोने का दाँत होता था तो वह भी जबरदस्ती उखाड़ लिया जाता था क्योंकि कोई भी मूल्यवान वस्तु नष्ट करना जर्मनों के लिये उनकी मूर्खता और भावुकता का सबूत था। इन गेस चेम्बरों में क़ैदियों को नंगे शरीर बन्द करके गेस के नल खोल दिये जाते थे और वे

पन्द्रह मिनट में तड़प-तड़प कर मर जाते थे । इन सब भयानक चैम्बरों को देखने के पश्चात् शान्ति का अजायबघर देखा जिसमें जर्मनी और इटली द्वारा रौंदे गये देशों के स्वतंत्र होने के पश्चात जनवादी शासन होने के परिणाम स्वरूप इनकी उन्नति किस हद तक हुई और प्रति दिन वे कितनी तेजी से अपने रास्तों पर भाग रहे हैं। रूस, चीन, पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया और अन्य जनवादी देशों के कितने ही चार्ट और नक्शे दीवारों पर टँगे थे । अन्त में नाजियों की बर्बरता के कुछ फोटो देखे जिनके ऊपर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था 'यह इतिहास विश्व में फिर नहीं दोहराया जायेगा' जिसे पढ़ कर एक बार वर्तमान कोरिया का नग्न चित्र आँखों के सामने खिंच जाता है, जो आज एक विशाल आसविच कैम्प बना हुआ है जहाँ स्त्रियों, बच्चों और बूढ़ों पर बमों की वर्षा होती है, गाँव और शहर जलाये जा रहे हैं ।

शान्ति सम्मेलन के लगभग ७० प्रतिनिधियों के लिये तीन दिन की पोलैंड की यात्रा का प्रबन्ध वहाँ की सरकार ने किया था और फूलों और झंडियों से सजी एक स्पेशल रेलगाड़ी हमारे लिए थी। जहाँ-जहाँ हम जाते थे वहाँ के स्टेशनों पर युवकों और बच्चों की टोलियाँ, मजदूरों के प्रतिनिधि और कितने ही दूसरे स्त्री, पुरुष फूलों से हमारा स्वागत करते थे । इस प्रकार दूसरे दिन हम वारसा के पश्चात् पोलैंड के दूसरे सबसे बड़े शहर क्राकोविच पहुँचे । वही वारसा जैसा वातावरण था। यह शहर वारसा की भाँति नाजियों का शिकार नहीं बना था अतः प्राचीन 'बारुक' कला के मकान और सुन्दर इमारतें दिखायी देती थीं । एक सांस्कृतिक केन्द्र देख कर पोलैंड की सांस्कृतिक उन्नति का आभास मिलता है । विश्व प्रसिद्ध पुस्तकों के पोलिश भाषा में अनुवादों से भरी लायब्रेरी, समाचार पत्रों और पत्रिकाओं का कमरा, सब बड़े कलात्मक ढंग से सजे थे जिनकी दीवारों पर पोलिश चित्रकारों की कृतियाँ टँगी थीं। पोलैंड की छः वर्षीय योजना के विभिन्न फोटो और चार्ट भी देखे । कितने ही लोग दिन भर अपना काम करने के पश्चात् इन कमरों में बैठे हुए थे । साहित्यिक और सांस्कृतिक विषयों पर यहाँ प्रायः सभायें हुआ करती थीं और लगभग प्रति सप्ताह किसी विशेषज्ञ को आमंत्रित करके उसके भाषण का प्रबन्ध किया जाता था । संस्कृति के विकास और आम लोगों में उसके प्रचार का प्रबन्ध पोलैंड के इन छोटे-छोटे शहरों और गाँवों में देखा ।

अगले दिन क्राकोविच से लगभग तीस मील की दूरी पर एक नया

शहर "नूवो होटा" देखा जो पोलैंड की छः वर्षीय योजना में नये औद्योगिक शहरों का एक आभास देता था। इस शहर की नींव लगभग एक वर्ष पूर्व एक वीरान लम्बे-चौड़े मैदान में डाली गई थी जहाँ केवल वृक्ष और ऊबड़-खाबड़ धरती ही दिखाई देती थी, परन्तु आज यहाँ हमने बड़े-बड़े लोहे के कारखाने, उनमें काम करने वाले मजदूरों के आधुनिक ढंग के फ्लैट, बच्चों के दिन के स्कूल, मजदूरों की रात्रि पाठशालायें, संस्कृति के केन्द्र, सिनेमा हाल, लायब्रेरी, बच्चों की नर्सरी (जहाँ मातायें काम पर जाने से पूर्व अपने ५ वर्ष से कम आयु वाले बच्चों को यहाँ छोड़ जाती हैं) आदि सब कुछ देखा। इस एक वर्ष में यहाँ की बेकार जमीन सोना उगलने लगी और यह छोटा-सा शहर पोलैंड की उन्नति में अपना एक महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा करने लगा। यह कृषि कला का देश युद्ध के पश्चात भी कितनी तेजी से औद्योगिक उन्नति कर रहा है जिसका अध्ययन करके लोगों को जनवादी देशों की योजनाओं का महत्त्व पता चलता है कि किस प्रकार निश्चित समय में एक कठिन योजना को पूरी करने की प्रतिज्ञा करने के पश्चात, समय से पूर्व ही लोग उसे पूरी कर देते हैं।

अन्त में तीन दिन में पोलैंड के कुछ प्रसिद्ध भागों की यात्रा करके हम वापिस वारसा लौट आये। इस यात्रा ने वारसा के अतिरिक्त पोलैंड के दूसरे भागों को देखने का भी हमें अवसर दिया जिससे इस देश और यहाँ के लोगों को समझने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस देश में हमने एक नये मानव, उसकी नयी चेतना, नई शक्ति और नये उत्साह को देखा। सारा का सारा वातावरण ही बिलकुल भिन्न था—जहाँ न बेकारी थी, न भूख थी, न ही पूँजीवादी देशों की भाँति—कला और संस्कृति समाज के एक वर्ग की सम्पत्ति थी, न ही सर्दी से ठिठुरते हुए पेरिस के मेट्रो स्टेशनों की भाँति भिखारियों की दुर्दशा देखी और न ही प्रातःकाल ५ बजे चीथड़े पहने गन्द के ढेरों में से कोई काम की चीज खोजने वालों की भीड़ देखी। आखिर १२ दिनों के पश्चात जब इस शक्तिशाली देश से बिदा ली तो सचमुच ऐसा अनुभव हुआ मानो अपने किसी प्रिय मित्र या परिवार के किसी प्राणी से बिछुड़ रहे हों। आज भी जब पेरिस में कभी एकान्त में इस देश में बिताये उन सुखद क्षणों की याद आती है तो शरीर एक बार सिहरे बिना नहीं रहता।
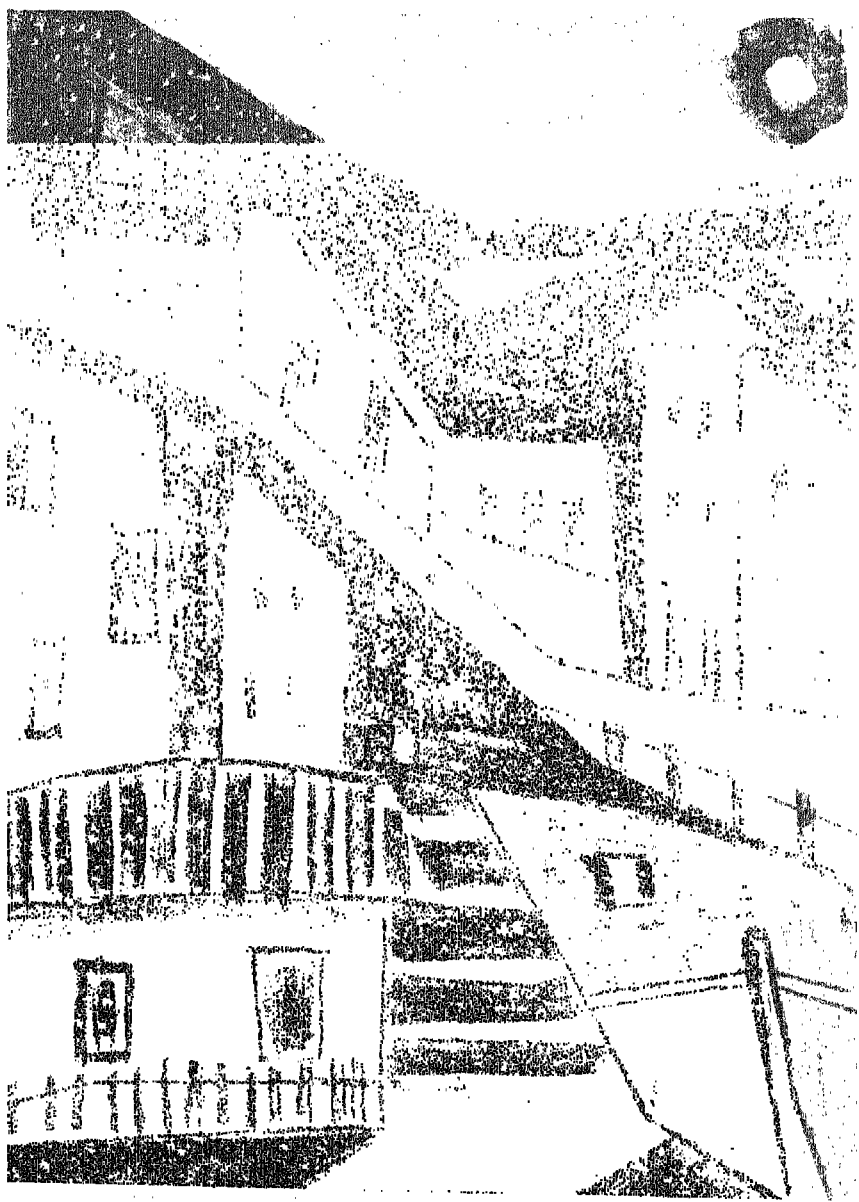
मास्को की एक सड़क

१७. इटली—दांते और मिकलांजलो का देश

अपनी यूरोप यात्रा में जितनी अधिक सैर करने का अवसर इटली में मिला, उतना मुझे कहीं और नहीं मिल सका। मेरे विचार से तो इटली देखे बिना किसी भी व्यक्ति की यूरोप यात्रा अधूरी ही रह जायगी, क्योंकि यहाँ के शहर और गाँव, यहाँ की प्रकृति, समुद्र के किनारे मीलों तक फैला हुआ इटेलियन रिवेरा, फ्लोरेंस के कला-संग्रह, रोम का वेटीकन, नेपल्स का पौंपेई और सुन्दर समुद्र-तट, विश्व-विख्यात झीलें और फिर इटेलियन लोग अन्य देशों की अपेक्षा सर्वथा भिन्न हैं और उनकी एक अपनी मौलिकता है। एक भारतीय के लिए इटली में एक विशेष आकर्षण है क्योंकि यहाँ के लोग अपने स्वभाव, महमाननिवाज़ी और शकल सूरत में भारतीयों से कुछ हद तक समानता रखते हैं।

सर्वप्रथम मैं पेरिस से फ्लोरेंस गया। जैनोवा से पीज़ा तक गाड़ी समुद्र के तट के साथ-साथ चार घंटों तक चलती है। बीच में कितनी ही सुरंगों में से गाड़ी को जाना पड़ता है। ये चार घंटे यात्रा के सबसे सुन्दर और मनोरम दृश्यों का परिचय देते हैं। यात्री को इटेलियन रिवेरा के सौन्दर्य की एक झलक दिखाई देती है। पीज़ा में गाड़ी बदल कर मैंने फ्लोरेंस जानेवाली छोटी गाड़ी पकड़ी, जिसमें केवल दो बड़े-बड़े डिब्बे थे और जो बिजली से चलती थी। स्टेशन से ही हमें विश्व का सातवाँ आश्चर्य 'पीज़ा की टेढ़ी टावर' भी पास ही से दिखाई दी, जो कितने ही वर्षों से इसी प्रकार टेढ़ी खड़ी है। पीज़ा से फ्लोरेंस तक हम तोस्काना घाटी—जो इटली के सुन्दर भागों में से एक है—में से गुज़रे, जहाँ के हरे-भरे मैदान, छोटी-छोटी पहाड़ियाँ और दूर-दूर तक फैली हुई घाटियाँ, छोटे-छोटे कुछ घरों के गाँव और खेत आदि देखने को मिले।

विज्ञान के आविष्कारों से यूरोप की आज की जिन्दगी में सब प्रकार की आधुनिक सुविधायें मिलने पर भी फ्लोरेंस शहर की पहली झाँकी देख कर एकदम आश्चर्य-सा होने लगता है। हिन्दुस्तान के किसी भी शहर से मिलते-जुलते दो या तीन मंज़िले पीले मकान, तंग सड़कें और गलियाँ, जिनके चौराहों पर दिन भर काम करने के पश्चात् लड़कों के झुण्ड परस्पर हँसी-

मजाक करते हुए दिखाई देते हैं। शहर के बीचोंबीच नदी को पार करने के लिए रस्सी और लकड़ी के तख्तों के पुल, छोटी-छोटी दुकानें, लोगों से भरी हुई ट्रामें आदि देख कर एक बार पूर्वी दुनियाँ की याद आ जाती है। बेकारी के कारण सड़कों की नुक्कड़ों पर खड़े हुए भिखारी, चीथड़ों में लिपटे हुए काम करनेवाले मजदूर और गरीबों की बस्तियाँ देखकर मुसोलिनी के फ़ासिज्म और युद्ध के बाद इटली पर पड़े उसके परिणामों का एक स्पष्ट चित्र आँखों के सामने खिंच जाता है।

परन्तु दूसरी ओर फ्लोरेंस की गलियों तक में चलते हुए एक समय इस शहर की उन्नत कला का आभास होना स्वाभाविक है, जहाँ प्रत्येक गिरजे की दीवारों पर किसी महान् चित्रकार या मूर्त्तिकार की कला दिखाई देती है, जहाँ मकानों के सामने दरवाजों पर 'मोजेक' में बना हुआ कोई चित्र दिखाई देता है, जहाँ चौराहों पर मिकलांजलो, दोनातेलो आदि की मूर्त्तियाँ, आगन्तुक को ऐसा आभास देती हैं, मानो वह किसी शहर में नहीं घूम रहा, बल्कि किसी कला-संग्रह के अन्दर है। इस कथन में शायद कोई अतिशयोक्ति नहीं है। 'यूफित्ज़ी' गैलरी में इटली की चित्रकला की सर्वश्रेष्ठ कृतियाँ हैं, जो दुनिया के किसी भी कला-संग्रह में देखने को नहीं मिल सकतीं। जातो, फिलिपो लिप्पी, बोतेचिलो के दो सर्वश्रेष्ठ चित्र 'वीनस का जन्म' और 'बसन्त' घिरलंडायो, तिजियानो, करवाजो आदि की कृतियों से भरी यह गैलरी इटली की उन्नत कला का प्रतिनिधित्व करनेवाली कृतियों से पूर्ण है, जिनमें एक भी चित्र साधारण कोटि का नहीं है। इसके अतिरिक्त गैलरी पित्ती में १२वीं शताब्दी के बाद की कृतियाँ हैं। पियाज्जा वेचियो में चारों ओर इटली के महान् बुद्धिजीवियों की मूर्त्तियाँ चौक में लगी हुई हैं। आजकल इस विशाल खुले चौक में कितनी ही सार्वजनिक सभाएँ आदि हुआ करती हैं। एक रात को मुझे कितने ही युवक और युवतियों की टोलियाँ सड़कों पर नाचती और गाती हुई दिखाई दीं। अपने साथी से पूछने पर पता चला कि हर साल वार्षिक परीक्षाओं से पूर्व छात्र अपनी पढ़ाई छोड़ देते हैं और सात दिन तक आधी-आधी रात तक इसी प्रकार सड़कों पर नाचते और गाते रहते हैं और अजीब-अजीब से कपड़े पहनते हैं, टोपियाँ लगाते हैं और भेष बदलते हैं।

सात दिन तक मैं फ्लोरेंस के बाजारों और सड़कों के चक्कर लगाता रहा। कला-संग्रहों में भी बहुत-सा समय बिताया। वह पुल देखा, जहाँ इटली के महान् कवि दांते और महान् चित्रकार जातो परस्पर मिले थे। एक दिन शाम को बिजली से चलने वाली बस में बैठकर 'फियोज़ोले' गया, जो

शहर से लगभग दस मील की दूरी पर एक पहाड़ी पर बसा हुआ है, जहाँ से फ्लोरेंस का दृश्य देख कर सचमुच ही शरीर रोमांचित हो उठा। शहर के चारों ओर तोस्काना घाटी के सुन्दर दृश्य और बीच में शहर बसा हुआ दिखाई पड़ा। फ्लोरेंस के दक्षिण में भी ऊँचाई पर बसे हुए पियाजा मिकलांजलो से शहर बहुत सुन्दर दिखाई देता है।

फ्लोरेंस के पश्चात् मैं रोम पहुँचा। रोम सात पहाड़ियों पर बसा हुआ शहर है, जिसमें बहुत-सी सड़कें चढ़ाई-उतराई पर बनी हुई हैं। कुछ ऐतिहासिक स्थानों एवं कला-संग्रहों को छोड़ कर रोम का जीवन यूरोप के अन्य बड़े शहरों में मिलता है। रोम का स्टेशन यूरोप के सब स्टेशनों से अधिक सुन्दर है, जिसका श्रेय मुसोलिनी को दिया जा सकता है। यहाँ इटली पर 'मार्शल एड' का अमेरिकी प्रभाव अत्यन्त स्पष्ट रूप से देखने को मिला, जितना पेरिस और लन्दन आदि में भी नहीं देखा। स्थान-स्थान पर, स्टेशनों पर, बुक-स्टालों में अमेरिकी पत्र-पत्रिकाएँ और पुस्तकें रखी रहती हैं। अमेरिकन टूरिस्टों को शहर घुमाने आदि की खास कम्पनियाँ खुल गई हैं और उनके रहने के लिए विशाल शानदार होटल बने हुए हैं। एक आम इटेलियन अमेरिका के इस प्रभाव को पसन्द नहीं करता और कितनी ही बार सड़कों और दीवारों पर "AMI GO HOME" "अमेरिकनो अपने घर जाओ" आदि वाक्य लिखे दिखाई दिये। हालीवुड की फिल्मों और कोका कोला के विज्ञापन तो प्रत्येक नुक्कड़ पर लगे हुए हैं।

रोम में सबसे आश्चर्यजनक स्थान पुराना प्रसिद्ध 'वेटीकन' है, जो किसी समय पोप की राजधानी बना हुआ था, परन्तु आज यह टूरिस्टों के लिए विशेष आकर्षण का केवल एक अजायबघर मात्र ही रह गया है। 'सिस्टीन चेपल' में दीवारों पर मिकलांजलो की महान कृतियाँ बनी हुई हैं। चेपल की लम्बी-चौड़ी छत पर मिकलांजलो ने अपनी जिन्दगी के अन्तिम चार वर्षों में विश्व-विख्यात चित्र बनाये, जिन्हें आज भी दर्शक फर्श पर लेट कर घन्टों तक देखते रहकर रसास्वादन करते हैं। इन चित्रों में इटली के इस महान चित्रकार की कला अपनी चरम सीमा पर जा पहुँची थी। एक ओर पूरी दीवार पर उनका 'अन्तिम फैसला' नामक चित्र बना हुआ है, जिसके विषय में आलोचकों में मतभेद है। वेटीकन में ही एक आर्ट गैलरी भी है, जहाँ 'रेनेसांस' के चित्रकारों की कृतियाँ टँगी हैं। शहर के इस भाग में प्रति दिन हजारों लोग आते हैं।

रोम में अन्य 'कला-संग्रह' भी हैं, परन्तु उनके चित्र उतनी उच्च

कोटि के नहीं, जितने फ्लोरेंस की 'यूफिज्ज़ी गैलरी' के हैं। रोम फ्लोरेंस या रवैना की भाँति कभी कला का उतना बड़ा केन्द्र नहीं बन पाया। रोम अपने फव्वारों के लिए भी प्रसिद्ध है, क्योंकि यहाँ अनेकों चौराहों पर बीचों-बीच अत्यन्त सुन्दर और कलात्मक पत्थर के फव्वारे बने हुए हैं, जिनसे शहर का सौन्दर्य दूना हो जाता है। ये फव्वारे इटली के महान् मूर्तिकारों द्वारा डिज़ाइन किये गए थे। आज भी वे उनकी उच्च मूर्तिकला के नमूने हैं। इटली की ज़िन्दगी के दो चेहरों में भी स्पष्ट रूप से रोम में अन्तर देखा जा सकता है। एक ओर चौड़ी सड़कें, विशाल व्यापारिक कम्पनियाँ, शानदार होटल, रेस्तराँ, नाटकघर, संगीत गृह, अमरीकन कारें और टूरिस्ट बसें हैं और दूसरी ओर तंग गलियों में निम्न मध्य वर्ग के रहने वालों के मकान, मज़दूरों की बस्तियाँ, सड़कों पर भीख माँगने वालों की टोलियाँ, आधी-आधी रात तक फूलों के गुलदस्ते बनाकर उन्हें बेचकर अपना पेट भरने वाली कोई बुढ़िया और पैसों के लिए अपना शरीर बेचने वाली इटेलियन वेश्यायें— शायद सारे यूरोप भर में ये सब इतनी अधिक मात्रा में इस खुले रूप में दिखाई नहीं देते, जितना कि उन्हें इटली में देखा जा सकता है। रोम में ही मुझे इटली के एक महान् चित्रकार रेनातो गुतुसो से भी मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिन्होंने अपनी कला में आज के इटेलियन लोगों की समस्याओं और उनके संघर्षों को एक नये यथार्थवादी टेकनीक में प्रस्तुत किया है।

इटली के दक्षिण में मैं नेपल्स तक गया। नेपल्स देखकर इस प्रसिद्ध कहावत—'नेपल्स देखो और मर जाओ' की सत्यता अनुभव की। वास्तव में नेपल्स यूरोप के सबसे सुन्दर शहरों में से एक है और विशेषकर समुद्र तट जो शायद दुनियां में कहीं और दिखाई नहीं देता। एक ओर दूर-दूर फैला नीले रंग का अथाह समुद्र और दूसरी ओर उसके किनारे-किनारे जाती हुई पक्की सड़क पर कितने ही छोटे-छोटे रेस्तराँ, दुकान और मकान बने हुए हैं, जिनके बाहर कुर्सियों पर बैठकर एक प्याला 'कापूचीनो' (कॉफी) पीने का आनन्द शायद ही कहीं और इतना अधिक मिलता हो। और इटली की कॉफी भी दुनिया भर में प्रसिद्ध है।

नेपल्स के कला-संग्रहालयों में भी कुछ कला-कृतियाँ बहुत उच्च कोटि की हैं। पौम्पेई के खंडहर नेपल्स से लगभग दस मील की दूरी पर स्थित हैं। पौम्पेई के पास वह पर्वत आज तक खड़ा है, जिसमें से निकल कर बहती ज्वालाओं ने इस नगर को वर्षों के लिए दुनिया से विलीन कर दिया था। आज वहाँ गलियाँ, दोनों ओर पत्थरों के मकान, दुकानें, ऑपेरा आदि

देखकर उस प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का आभास लगाया जा सकता है। इन खंडहरों में घूमते समय अनायास ही मैं उस समय की कल्पना करने लगा, जब यहाँ मनुष्य बसते थे और आज केवल उनके इतिहास के कुछ धुँधले फटे हुए पन्ने दुनिया के सामने खुले पड़े हैं। पौम्पेई के कला-संग्रह में उस काल की चित्रकला और मूर्त्तिकला के कुछ नमूने आज भी दिखाई देते हैं, जिनसे उनके प्रिमिटिव आर्ट का पता चलता है।

नेपल्स से फिर मैं इटली के उत्तर में वेनिस की ओर बढ़ा। वेनिस से एक स्टेशन पहले पादुवा नाम के स्टेशन पर मैं उतरा। क्योंकि यहाँ का एक गिरजा विश्व-कला-संग्रहों में प्रसिद्ध है, जहाँ इटली के प्रसिद्ध चित्रकार जातो ने १२वीं शताब्दी के अन्त में अपने अन्तिम भित्तिचित्र बनाये थे। इस गिरजे को देखना किसी भी कला-प्रेमी के लिए नितान्त आवश्यक है। जातो के ४० भित्तिचित्र उनकी उन्नत कला की चरम सीमा के प्रतीक हैं। इटेलियन चित्रकला के इतिहास में जातो का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है, जो साहित्य में दांते का है। उन्होंने बाईजेंटाइन कला को आगे बढ़ाया और रेनेसांस को जन्म दिया और तभी इटेलियन कला का स्वर्ण-युग आरम्भ होता है। इन चित्रों को देखकर मैंने ऐसा अनुभव किया, मानो मैंने कला का एक अमूल्य खजाना देख लिया हो। उनके चित्रों की आकृतियों और टेकनीक का अध्ययन करके पता चलता है कि उनके चित्रों से आधुनिक फ्रेंच चित्रकारों ने कितना सीखा है और एबस्ट्रेक्ट और क्यूबिस्ट-टेकनीक के जन्म और उन्नति में कितनी सहायता पहुँचाई है।

वेनिस जैसा निराला और अजीबोगरीब शहर दुनिया में शायद ही कोई दूसरा हो। समुद्र के तट पर बसा हुआ वेनिस, जिसके अन्दर सड़कों के बदले अनगिनत समुद्र की नहरें और मोटरों, साईकलों के बदले गोंडोले (नावें) और अनेकों पुल बने हुए हैं। मकानों की कतारें प्रायः नहर के तट पर बनी हुई हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए या तो गोंडोले पर या फिर पुल पार करके जाने के अलावा दूसरा कोई चारा नहीं है। इटली के कला-संग्रहालयों से थककर वेनिस में बिना किसी उद्देश्य के समुद्र तट पर घूमना और शहर के चक्कर लगाना मुझे कुछ समय के लिए अति रुचिकर प्रतीत हुआ। यद्यपि यहाँ भी अन्य शहरों की भाँति कुछ कला-संग्रह हैं और कुछ गिरजे भी, परन्तु यह कला १४वीं शताब्दी के बाद की है, जब उसका पतन आरम्भ होता है। शहर के सबसे प्रसिद्ध विशाल चौक 'पियाजा सा मार्को' पर आधी-आधी रात तक स्त्रियों और पुरुषों की भीड़ कैफे के बाहर लगी

कुर्सियों पर या समुद्र तट की बैंचों पर बैठी रहती है और कहीं दूर अंधेरे में से किसी गोंडोले से संगीत की ध्वनि विशाल गिरजे की मीनारों में गूंजती हुई फैल जाती है। वेनिस के इस वातावरण में व्यक्ति-दुनिया के कोलाहलों और जिन्दगी की जिम्मेदारियों से दूर अपनी एक नई दुनिया में रम जाता है।

'सानमार्को' का गिरजा 'मोज़ेक' कला की दृष्टि से विश्व भर में अपना एक विशेष महत्त्व रखता है। इसकी छत और दीवारों पर बने मोज़ेक इटली की कला के 'स्वर्ण युग' के वे नमूने हैं, जो हमें उस काल की चित्रकला में भी देखने को मिलते हैं। वही 'आकृति' की सादगी, रंगों का वही उच्च सामंजस्य, विषय और रूप का वही संतुलन यहाँ भी देखा जा सकता है। गिरजे के पास ही बनी हुई मीनार के ऊपर चढ़कर वेनिस शहर का दृश्य भी अत्यन्त सुन्दर दिखाई देता है।

वेनिस में ही मेरा एक फ्रेंच स्त्री से परिचय हुआ, जो वेनिस यूनिवर्सिटी में फ्रेंच साहित्य और फ्रेंच भाषा की प्रोफेसर थी। उसके ज्ञान का अथाह भंडार और पिछले युद्ध से पूर्व पेरिस में उसकी जिन्दगी की कुछ झलकियाँ सुन कर मैंने ऐसा अनुभव किया मानो आज मैं किसी ऐतिहासिक महत्त्व वाले व्यक्ति से मिला होऊँ। १६३६ तक वह फ्रांस के प्रसिद्ध दैनिक 'सस्वार' में उसके सम्पादक अरागों की सैक्रेटरी थी और १६४२ में फ्रांस के प्रगतिशील बुद्धिजीवियों की पहली संस्था बनाने में उसने बहुत ठोस काम किया था। पिकासो, पाल एलुआर आदि उसके अभिन्न मित्र थे जिनके साथ खिंची हुई कितनी ही फ़ोटो उसने मुझे दिखलाईं। स्पेन के गृहयुद्ध के समय वह सप्ताह में दो बार हवाई जहाज द्वारा स्पेन आया-जाया करती थी। नाज़ियों के फ्रांस पर शासन के दिनों में जाक दिकूर, गेबरील पेरी, पोलीनेर आदि बुद्धिजीवियों की हत्या की गई थी, जिनकी मर्मस्पर्शी स्मृतियाँ उसने मुझे एक रात को बतलाईं। तब उसके मन में उन सबकी पुरानी याद और उन अपरिचितों के लिए मेरे मन में एक गहरी पीड़ा उठी और हम दोनों की ही आँखें भर आईं।

एक दिन स्टीमर पर बैठ कर हम वेनिस से लगभग सात मील की दूरी पर एक छोटे से द्वीप (त्रोचेलो) में गये, जहाँ की आबादी सौ लोगों से अधिक नहीं है। यहीं एक गिरजे में 'प्राचीन' मोज़ेक देखे, जिन के विषय में कुछ लोगों का यह मत है कि ये 'सान मार्को' के मोज़ेक से भी उच्च कोटि के हैं। चारों ओर लहलहाते हरे-भरे खेत, कुछ प्राचीन मकान और

इटली के किसान

कैफ़े आदि देख कर यहाँ के शांतमय वातावरण में आगन्तुक सहज में ही डूब जाता है । एक छोटा-सा होटल भी समुद्र के किनारे बना हुआ है, जिसमें दो वर्ष पूर्व प्रसिद्ध उपन्यासकार अरनेस्ट हेमिंगवे छः महीनों तक रहे थे और अपना एक उपन्यास समाप्त किया था । वास्तव में ऐसे वातावरण में किसी की भी बुद्धि रचनात्मक और कलात्मक दृष्टिकोण अपना सकती है ।

वेनिस के पश्चात मिलान जैसा नीरस व्यापारिक शहर देख कर दोनों में तुलना कर सका । इटली के १७वीं शताब्दी के प्रसिद्ध चित्रकार करवाज्जो के ५० चित्रों की प्रदर्शिनी देखने का लालच ही मुझे यहाँ घसीट लाया था । सारे यूरोप में इस प्रदर्शिनी की बहुत धूम थी और फ्रांस लन्दन आदि से लोग केवल इस प्रदर्शिनी को देखने ही यहाँ आते थे । करवाज्जो के दुनियां भर के कला-संग्रहों में बिखरे चित्रों को एकत्रित कर इस प्रदर्शिनी का आयोजन किया गया था और उसके साथ ही अन्य दस हालों में लातूर, रेमब्रां, फ्रेंसहालस आदि विश्व-विख्यात् उन चित्रकारों के कुछ चित्र भी थे, जिन पर करवाज्जो का विशेष प्रभाव पड़ा था । प्रदर्शनियों का इस प्रकार आयोजन करना इस बात का प्रमाण था कि इन देशों में कला को कितना अधिक महत्त्व दिया जाता है । करवाज्जो इटेलियन चित्रकला के स्वर्ण-युग के अन्तिम चित्रकार थे, जिनके पश्चात् उन का पतन आरम्भ होता है । जातो, मजाचो, बोतेचिली, फ्रा एँजेलिको आदि के चित्र देखने के पश्चात करवाज्जो की कला में पतन की छाया दिखाई दी । यद्यपि उनमें कुछ ऐसे विशेष गुण भी थे, जिनसे उनको भी उसी स्वर्ण-युग में शामिल किया जाता है ।

मिलान का प्रसिद्ध गिरजा (दयोमो) शिल्प-कला का एक अद्वितीय नमूना है, जो इटली भर में कहीं देखने को नहीं मिला । मैंने अनुभव किया कि इस विशाल गिरजे में यदि छोटी-छोटी ढेर-सी मीनारें और मूर्तियाँ इतनी अधिक संख्या में न होतीं, पत्थरों पर इतना बारीकी का काम न भरा होता, तो उसका प्रभाव अधिक पड़ सकता था । छोटी-छोटी अनेक चीज़ें एक साथ ही देख कर दृष्टि बिखर-सी जाती है और दर्शक एक बार न तो उन सबको ही देख सकता है और न ही किसी एक पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकता है । मिलान में गुक्की और ग्रेकानी दो प्रसिद्ध इटैलियन चित्रकारों से मिला और उनके चित्रों को देखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ । गुप्त रूप से एक प्रदर्शिनी भी देखी, जिसे इटैलियन सरकार ने गैर कानूनी

घोषित कर दिया था, क्योंकि इन चित्रों में मिलान के आधुनिक चित्रकारों ने मिल कर मिलान की अमीर और ग़रीब ज़िन्दगी के दो पहलू चित्रित किये थे। इससे आभास लगाया कि चित्रकला का जनता की ज़िन्दगी में कितना अधिक महत्त्व है।

इटली की यात्रा में अन्तिम शहर जैनोवा था, शहर में दो दिन रहने के पश्चात् मैं जैनोवा से २५ मील की दूरी पर कौगलेतो नामक छोटे से गाँव में अन्तर्राष्ट्रीय कैम्प में अपनी यात्रा के अन्तिम दिन बिताने चला गया। समुद्र के तट पर एक पहाड़ी के ऊपर यह कैम्प स्थित है, जिसका संचालन इटेलियन छात्रों के हाथ में है। प्रति वर्ष इस कैम्प में फ्रांस, इंग्लैण्ड, पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया आदि से युवक और युवतियाँ अपनी गर्मियों की छुट्टियाँ बिताने यहाँ आते हैं और सब तम्बुओं में रहते हैं। उन्हीं दिनों ६८ आस्ट्रेलियन लड़के और लड़कियाँ बर्लिन में होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय युवक समारोह में जाने से पूर्व कुछ समय के लिये इस कैम्प में ठहरे हुए थे। प्रातःकाल ही हम अपना दिन का खाना अपने साथ लेकर नीचे समुद्र के तट पर चले जाते थे, कभी तैरते और कभी रेत पर धूप का स्नान किया करते। शाम को सूर्य छिपने के साथ-साथ ऊपर चढ़ाई पर चढ़ कर कैम्प पहुँच जाते और खाना खाकर आधी-आधी रात विश्व भर के गाने गाते और नाचते। दूर पहाड़ियाँ चाँद और तारों की छाया में सो जातीं और नीचे समुद्र की लहरें रेतीले तट को गीला किया करतीं। हम लोग एक दूसरे के देश की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक समस्याओं पर बातें करते और अपने देश की स्थिति बताते। हम सब के बीच मैत्री की ऐसी गाँठ बंध गई थी, जिससे मुझे वहाँ से एक दिन विदा लेते समय बहुत अधिक दुख हुआ और आज भी वे स्मृतियाँ, वे चेहरे धुँधले नहीं हो सकते हैं। इस प्रकार मेरी इटली यात्रा समाप्त हो गई।

मैंने महसूस किया कि यूरोप भर में इटेलियन लोग जितने अधिक ज़िन्दादिल, आशावादी, ज़िन्दगी को आसानी से लेने वाले होते हैं, उतने शायद अन्य लोग नहीं। किसी भी रविवार को शहर की सड़कों पर, कैफ़ों में, शहर के बाहर किसी नदी या समुद्र के तट पर सूर्य-स्नान लेते हुए हज़ारों की संख्या में ये ज़िन्दगी की ज़िम्मेदारियों से दूर अपनी ही दुनिया में मस्त रहते हैं। उनकी यह प्रकृति देख कर मुझे आश्चर्य हुआ कि किस प्रकार इस स्वच्छन्द जाति ने मुसोलिनी की फ़ासिस्ट नीति का साथ दिया था। परन्तु वर्तमान समय में इटली के कोने-कोने में मैंने जितनी राजनीतिक
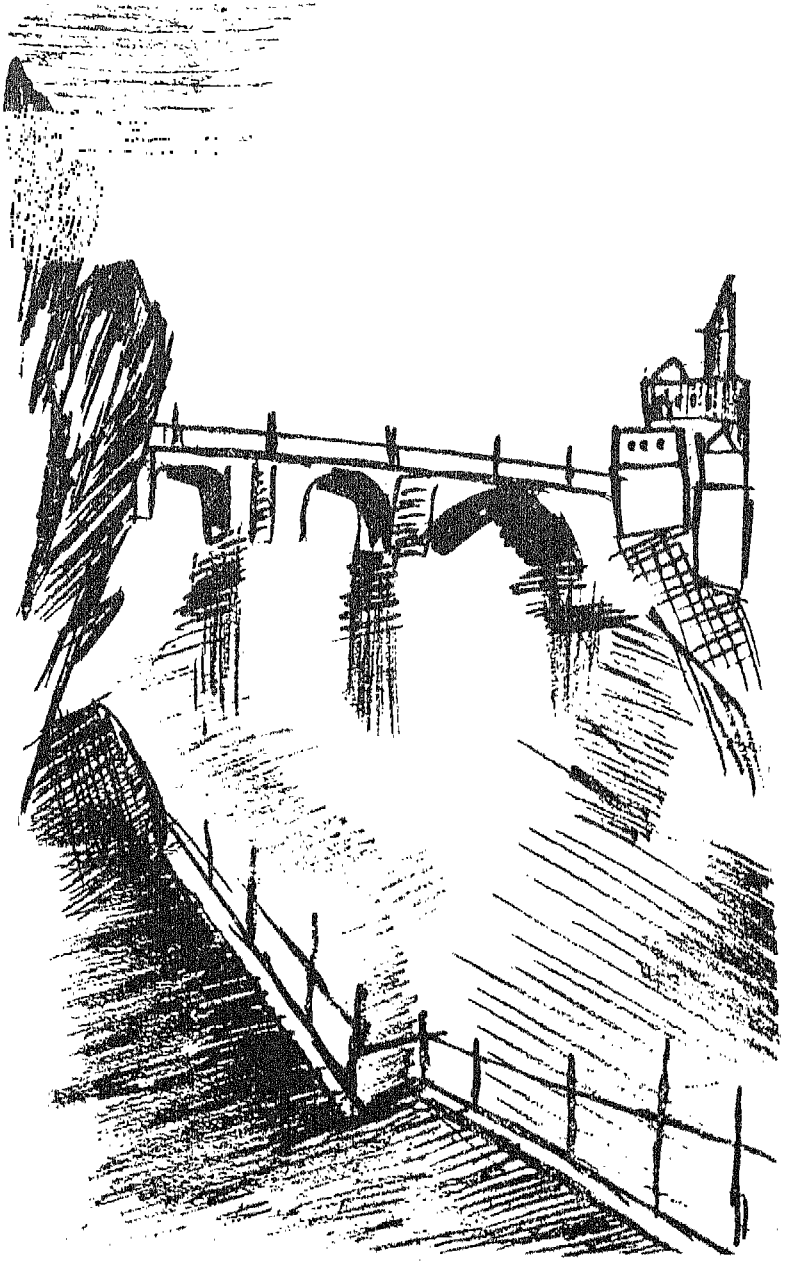
फ्लोरेंस का एक दृश्य

चेतना देखी, उतनी फ्रांस में भी अनुभव नहीं की थी। सौभाग्य से मैं इटली में उस समय था, जब म्यूनिसिपल चुनाव हो रहे थे। दीवारों, विशेष बोर्डों आदि के अलावा सड़कों पर मैंने कहीं भी इतने पोस्टर चिपके हुए नहीं देखे थे जो मुझे इटली में देखने को मिले, शाम को वोटिंग के पश्चात् लोगों के झुंड दुकानों और कैफ़ों में लगे रेडियो से चुनावों के परिणाम अत्यन्त उत्सुकता से सुन रहे थे।

दूसरी बात जो मैंने अपनी यात्रा के समय अनुभव की, वह इटली भर में अमेरिका का चढ़ता हुआ राजनीतिक प्रभाव था, जिसकी सफलता के लिये सारे साधनों का उपयोग किया जा रहा था। इसी के साथ-साथ इटली भर में लोगों की आर्थिक स्थिति दिन प्रति दिन गिरती जा रही है, क्योंकि हथियार अधिक बनाने के कारण मुद्रा का प्रसार बहुत तेजी से हो रहा है। फलस्वरूप आम लोगों में असन्तोष बढ़ता जा रहा है, जिसकी जिम्मेदारी वे अमेरिकनों पर डालते हैं। चाहे कोई कैथोलिक हो या सोशलिस्ट, कम्यूनिस्ट हो या दक्षिणपंथी डेमोक्रेट—सब में अमेरिकनों के प्रति सन्देह भावना पैदा हो गई है जिसका सबूत जनरल आइसनहावर के इटली का दौरा करने पर मिला था। इस महान् देश और महान् जाति की वर्तमान दशा देख कर कोई भी दुखी हो सकता है।

१८. फूचिक के देश में

चेकोस्लोवाकिया की सीमा में पाँव रखते ही यदि सबसे पहले किसी की याद आती है तो वो जूलियस फूचिक है जिसने इस देश को नाजियों से स्वतन्त्र करने में अपने अमूल्य प्राणों की बलि दी परन्तु उसके बदले में इस देश ने क्या पाया है—वो आज प्राहा (प्राग) की सड़कों और दुकानों, गोत्वालदों की मिलों और युवक होस्टलों, चेकोस्लोवाकिया के किसानों के प्रसन्न चेहरों और तातरा पहाड़ों की गोद में मजदूरों के लिए बने विशाल सेनिटोरियमों और विश्राम गृहों को देख कर पता चलता है।

चेकोस्लोवाकिया आने से पूर्व पेरिस के कितने ही परिचितों से यहाँ के विषय में कितनी ही मन गढ़न्त और समाचार-पत्रों में पढ़ी हुई अफवाहें सुनी थीं कि इन जनतन्त्र देशों में खुफिया पुलिस आगन्तुक का पीछा करती है, किसी भी व्यक्ति से बात की मनाही है, अपनी इच्छा से किसी स्थान पर नहीं जाया जा सकता आदि-आदि और आज उन सब की याद करके हँसी आती है और उन लोगों की अज्ञानता पर तरस आता है। आज परदा (Iron curtain) इन जनतन्त्र देशों में नहीं वरन् पेरिस में है जहाँ प्राग से लौट कर मेरे सामान की तलाशी पुलिस ने ली, कितने ही प्रश्न पूछे, दूसरे विश्व शान्ति सम्मेलन में भाग लेने की बात पूछी और आधा घंटे तक परेशान किया; यह स्वतन्त्रता ब्रिटेन में नहीं जहाँ दूसरे शान्ति सम्मेलन के प्रतिनिधियों को आने से रोक दिया गया और हवाई अड्डे पर घंटों यात्रियों को परेशान किया।

प्राहा सचमुच यूरोप के सब से सुन्दर शहरों में से एक है जिस की लम्बी-चौड़ी साफ-सुथरी सड़कें, दुकानें, मकान, गिरजे, मोलोदाया नदी, उस पर बने हुए पुल, नदी के पार पहाड़ी पर बसा हुआ प्राहा का दूसरा भाग आदि देख कर परियों के देश की याद आती है। सड़क के प्रत्येक मोड़ पर ऐसा नया दृश्य नजर आता है कि बड़े-बड़े शहरों का सौन्दर्य फीका जान पड़ने लगता है। शिल्प-कला के इतने उन्नत उदाहरण और किसी एक शहर में देखने को नहीं मिल सकते। प्राचीन 'बारुक' टेकनीक का कोप प्राहा की प्रत्येक ईमारत में उभरता हुआ दिखाई देता है। सन्ध्या के समय जब अस्त

होते सूर्य की पीली किरणें प्राहा से बिदा लेती हैं तो चार्ल्स चतुर्थ के पुल पर खड़े होकर या मोलदावा के पार ऊँची पहाड़ी पर चढ़ कर इस शहर का सौन्दर्य दुगना हो जाता है।

पहले दिन ही होटल में अपना सामान रख कर जब प्राहा की सैर करने के लिए निकला तो अन्य शहरों के मुकाबले में यहाँ की जिन्दगी का दूसरा ही रूप देखने को मिला। विश्व भर की प्रसिद्ध किताबों के अनुवाद चेक भाषा में देखने को मिले और टैगोर, मुल्कराज आनंद, और पुरानी संस्कृत की पुस्तकों के अनुवाद देख कर तो दंग ही रह गया। संस्कृति की इतनी उन्नति इस छोटे से देश में देख कर आश्चर्यचकित रह गया। अन्य दुकानों की सजावट भी अपने ही ढंग की थी। चेक कला के सुन्दर नमूने प्रत्येक दुकान की खिड़कियों में दिखाई देते थे और सड़क पर चलने वाले के लिए कुछ समय तक इसके सामने खड़े हुए बिना आगे बढ़ना असम्भव-सा था। शीशे, चमड़े, लकड़ी आदि का सुन्दर सामान प्रत्येक खिड़की पर बड़े कलात्मक ढंग से सजा था। सिनेमा घरों के सामने नंगी स्त्रियों की तस्वीरों के बदले युद्ध-काल में जर्मनी के विरुद्ध चेक पार्टीजनों के संघर्ष की फिल्में, और नये चीन की फिल्मों के विज्ञापन देखे। यदि इस वातावरण में प्रत्येक व्यक्ति का नवीन संस्कृति के विषय में दृष्टिकोण बदल गया तो इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है। आर्थिक व्यवस्था के बदल जाने पर संस्कृति मुट्ठी भर धनी लोगों के लिए ही नहीं वरन् आम जनता का अधिकार बन जाती है इसका प्रमाण प्राहा में स्पष्ट रूप से मिल गया। यहाँ कलाकार अपनी ही सीमित दुनिया में बन्द न रह कर लोगों की जिन्दगी की प्रतिछाया अपनी कला में प्रदर्शन करते हैं जिससे उनकी कला की प्रशंसा सारा देश करता है और जिसके परिणाम स्वरूप चेकोस्लोवाकिया इतना छोटा होने पर भी एक-एक पुस्तक की हजारों प्रतियाँ छापता है।

जहाँ भी कोई बड़ी-सी इमारत दिखाई देती थी तो उसके विषय में अपने चेक गाइड से पूछने पर पता चलता था कि यहाँ या तो मजदूरों का संस्कृति केन्द्र है या मजदूर युवकों का होस्टल है या कलाकारों का कोई घर है। इस देश में सबसे अधिक सुविधायें और आराम या तो मजदूरों को दिया जाता है या फिर कलाकारों को क्योंकि यही तो समाजवादी शासन के दो सबसे शक्तिशाली हथियार हैं। चेकोस्लोवाकिया में आम जनता का शासन आरम्भ हुए अभी तीन वर्ष ही बीते हैं, परन्तु इन तीन वर्षों में ही लोगों के रहन-सहन का दर्जा कितना ऊपर उठ गया है इसका प्रमाण इस देश के शहरों,

गाँवों और पहाड़ों में घूम कर, फैक्टिरियों और खेतों की बढ़ती उपज देखकर और आम लोगों के मकानों के अन्दर जाकर पता चलता है। रास्ते में चलते हुए अनायास हम किसी मिल में काम करने वाले मजदूर के घर में अचानक जा कर द्वार खटखटाते थे और उसके चार कमरों, फरनीचर, रसोई, सर्दी में चौबीस घंटे मकान गरम रखने की व्यवस्था, गैस का प्रबन्ध, उसकी लायब्रेरी में साहित्य, कला और राजनैतिक विषयों की पुस्तकें देख कर, उसके बच्चों से बातें करके उनकी प्रसन्नता देखने योग्य ही होती थी। जिन्दगी को इतने पास और इतने स्पष्ट रूप से झाँक कर मेरी समझ में तो नहीं आता कि इनके पीछे भी कोई परदा था जिसके पार मैं नहीं झाँक सका।

एक दिन प्राहा के लगभग २५ मील की दूरी पर 'लिडीस' नामक एक गाँव देखने गए जिसका प्रत्येक मकान नाज़ियों ने धरती से लगा दिया था, जिसके कुछ चिन्ह अभी तक उनकी अमानुषिक बर्बरता का प्रतीक बने आगन्तुकों को पिछले युद्ध की याद दिलाते हैं। दस, पन्द्रह लोगों को छोड़कर हजारों बच्चे, स्त्रियाँ और पुरुष यहाँ शहीद हुए थे जिनमें से कुछ की फोटो अभी तक अजायबघर में रक्खी हैं। आज यहाँ पर नये मकानों की कतारें देखकर फूचिक के देश की नई जिन्दगी का एक पहलू दिखाई देता है। अजायबघर में सामान दिखाते समय ५५ वर्ष की स्त्री (जो उसी गाँव में रहती थी परन्तु जिसके प्राण बच गए थे) की आँखों में टपाटप आँसू गिरने लगे। उसके सामने एक नये युद्ध की चर्चा करना भी उन लाखों शहीदों के साथ घोर अन्याय करना है।

फिर वहाँ से लगभग ५ मील की दूरी पर कलाद्नो नामक ३५,००० निवासियों का शहर देखने गए। शहर में घुसते ही एक किनारे पर पाँच बड़े-बड़े व्यक्तियों के चित्र टँगे हुए देखकर चेक कामरेड से पूछने पर पता चला कि ये मजदूर हैं जिन्होंने उपज उचित मात्रा से अधिक पैदा की है या कोई नया आविष्कार किया है। मजदूरों को यह प्रतिष्ठा और सम्मान मिलते देख कर मजदूरों की जिन्दगी की एक नई झाँकी मिलती है। लेनिन का लिखा यह वाक्य भी कितने ही स्थानों पर देखने को मिला कि सच्चा कम्यूनिस्ट बनने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को फैक्टरी में काम करना चाहिए। स्थान-स्थान पर इसी प्रकार के अन्य मोटे-मोटे अक्षरों में लिखे वाक्य दिखाई देते थे। यहीं मजदूरों के एक सांस्कृतिक केन्द्र की इमारत में हमने मजदूरों के साथ भोजन किया और उनसे विभिन्न विषयों पर बातें कीं जिनका सारांश यह था—'लन्दन से कल ही रेडियो पर एक समाचार सुना था कि हमारे

शहर में पुलिस मजदूरों पर गोली चला रही है। ये समाचार सुनकर हमें उनकी अज्ञानता पर तरस आता है। यहाँ मजदूरों का विश्वास है कि बिना बुद्धिजीवियों की सहायता के वे कदापि उन्नति नहीं कर सकते। केवल हाथ ही पर्याप्त नहीं हैं। परन्तु हमें वे बुद्धिजीवी नहीं चाहिए जो हमारा साथ न दें काम के पश्चात् रात्रि को ९ से ११ बजे तक वे रात्रि स्कूल में राजनैतिक और सांस्कृतिक विषयों पर शिक्षा पाते हैं। हम विश्व भर की सब प्रगतिशील पुस्तकें पढ़ते हैं···विश्व के साहित्य और लेखकों की विचार-धाराओं पर उनकी टिप्पणियाँ सुनकर मुझे उनके साहित्य के छात्र होने का भ्रम हुआ। इस छोटे से शहर में ७ सिनेमा और एक स्थायी थियेटर है। जो लोग शहर से बाहर दूसरे गाँवों आदि से आते हैं उनको लाने और वापिस ले जाने का प्रबन्ध सरकार की बसों द्वारा किया जाता है। एक समय के उनके खाने का प्रबन्ध भी एक रेस्तरां में है जहाँ बहुत कम दामों पर उन्हें अति पौष्टिक खाना मिलता है। राजनैतिक विषयों की चर्चा करते हुए मजदूरों ने कहा कि हमारा देश जितना आज स्वतन्त्र है, उतना पहले कभी नहीं था, प्रत्येक देश के साथ व्यापार करने की हमें स्वतन्त्रता है ···चेकोस्लोवाकिया के मजदूर शान्ति के लिए संघर्ष करने वालों का सदा दोनों हाथ खोल कर स्वागत करेंगे क्योंकि यहाँ की जनता युद्ध नहीं चाहती। धार्मिक विषयों पर हमें कोई रोक-टोक नहीं है परन्तु गिरजेघरों को सरकार और समाजवाद के विरुद्ध प्रचार करने का गढ़ नहीं बनाया जा सकता।···यहाँ के मजदूर महीने में एक दिन अधिक कार्य करते हैं जिससे इस दिन की उपज से कोरिया के बच्चों के लिये कुछ सामान भेजा जा सके·· इस प्रकार दो घंटों तक बातचीत होती रही।

इसके पश्चात् हमने मजदूरों का एक सांस्कृतिक केन्द्र देखा जहाँ प्रति शाम को अपने काम के पश्चात् मजदूर आते हैं और अपनी इच्छानुसार लायब्रेरी, संगीत गृह आदि में अपना समय व्यतीत करते हैं, कभी-कभी किसी का लैक्चर या कोई नाटक, ऑपेरा आदि भी यहाँ दिखाए जाते हैं। राजनैतिक ज्ञान बढ़ाने के लिए यहाँ तीन-तीन सप्ताह के कोर्स होते हैं जिससे मजदूरों का ज्ञान बढ़े और वे राजनैतिक घटनाओं को उनकी सतह तक जाकर उन्हें समझ सकें। हमने इसी प्रकार की एक कक्षा देखी जहाँ ३० वर्ष से लेकर ५० वर्ष तक के २५ मजदूर अपनी क्लास में बैठे थे। उन्होंने बड़ी नम्रता से हमारा स्वागत किया और बातें कीं। उनके डेस्कों पर मार्क्स, एंजल्स, लेनिन और स्तालिन की पुस्तकें रक्खी थीं, अपनी कापियों पर वे

लैक्चर के नोट लिखते जा रहे थे। यह स्कूल इस शहर की कम्यूनिस्ट पार्टी द्वारा खोला गया था। किसी भी व्यक्ति को जबरदस्ती स्कूलों में दाखिल नहीं किया जाता परन्तु ज़िन्दगी में इतना महान् परिवर्तन आ जाने के कारण प्रत्येक व्यक्ति अपना राजनैतिक और सांस्कृतिक ज्ञान बढ़ाने की तीव्र लालसा रखता है जिससे इस प्रकार के कितने ही विभिन्न स्कूल खोले गये हैं। इस प्रकार प्राहा के आस-पास की ज़िन्दगी देख कर हमारा दो दिन का प्रोग्राम समाप्त हुआ।

जब छोटे-छोटे शहरों और गाँवों की उन्नत ज़िन्दगी को इतनी तीव्र गति से आगे बढ़ते देखा तो प्राहा के विषय में अनुमान लगाना कठिन न होगा। एक रात को प्राहा के चित्रकारों की प्रदर्शिनी का उद्घाटन देखने के लिये गया जो ११ बजे रात को आरम्भ हुई। मालदोवा नदी के तट पर स्थित इस विशाल आर्ट गैलरी में लोग खचाखच भरे थे। प्रत्येक चित्र में चेकोस्लवाकिया की ज़िन्दगी चित्रित थी, कहीं किसान खेतों में सामूहिक रूप से काम कर रहे थे तो कहीं मिलों में दैनिक ज़िन्दगी की आवश्यक वस्तुओं का माल पैदा किया जा रहा था। किसान, मज़दूर, कलाकार और सिपाही की एक विशाल मूर्ति बहुत ही शक्तिशाली और कलात्मक थी। उद्घाटन से पूर्व कविताएँ पढ़ी गईं, प्यानो पर संगीत हुआ, चेकोस्लोवाकिया की कला पर एक लैक्चर हुआ। पत्रों के प्रतिनिधि और फोटोग्राफर इधर-उधर घूम रहे थे और आधे चित्र सरकार पहले ही खरीद चुकी थी। अन्त में प्रातः के चार बजे के लगभग यह समारोह समाप्त हुआ। इस नये देश और इसकी नई ज़िन्दगी में कलाकार का कितना महत्त्व है, इसकी एक झाँकी मिली। इसी प्रकार एक दिन प्राग के चित्रकारों की एक संस्था ने मुझे निमन्त्रित किया जहाँ उनसे चित्रकला में समाजवादी यथार्थवाद पर कितनी बातें हुईं। इस बात को चेकोस्लोवाकिया के चित्रकार तक स्वीकार करते हैं कि वे अपनी इस नवीन धारा में पूर्ण रूप सफल नहीं हुए हैं जिसके लिये तीन-चार साल की अवधि पर्याप्त नहीं है क्योंकि देश का ढाँचा ही बदल जाने के साथ-साथ कला में नये विषय के लिए नये रूप (Form) की आवश्यकता है जो सुगम कार्य नहीं है और विशेषकर जब कि पूँजीवादी देशों—प्रधान रूप में फ्रांस में—एबस्ट्रैक्ट कला का बोलबाला है तब चेकोस्लोवाकिया के चित्रकारों का इनसे प्रभावित होना स्वाभाविक है परन्तु उनके अनुसंधान जारी हैं और वे अँधेरे से निकल कर प्रकाश में अपना रास्ता खोज रहे हैं और एक दिन वे अपने उद्देश्य में अवश्य सफल होंगे। वे आम जनता से घनिष्ठ सम्बन्ध

रखते हैं और प्राय: अपने चित्रों की प्रदर्शनियों में मजदूरों और किसानों को निमन्त्रित करके उनकी सम्मति पूछते हैं। प्रति वर्ष चित्रकार एक-आध महीने किसी फैक्टरी या किसी सामूहिक खेती-बाड़ी में काम करते हैं जिससे उनकी कला और जनता के बीच एक घनिष्ठ सम्बन्ध सदा बना रहे। किसी भी कलाकार को कोई आर्थिक चिन्ता नहीं रहती क्योंकि प्रतिमास उनको सरकार की ओर से अच्छा वेतन मिल जाता है जिससे वे निश्चिन्त हो कर अपना काम कर सकते हैं, और चित्र बिकने पर उनके दाम अलग से उन्हें मिलते रहते हैं। सरकार को चित्रों की आवश्यकता सदा रहती है क्योंकि शहर-शहर और गाँव-गाँव की लायब्रेरियों, टाऊनहालों और सार्वजनिक इमारतों में चित्र टाँगने की योजना है और कितने ही शहरों में अजायबघर खोलने की व्यवस्था की जा रही है। इन प्रदर्शनियों में मैंने कितनी ही बार छात्रों और छात्राओं को उनके कला अध्यापकों के साथ, मजदूरों को किसी कलाकार के साथ यहाँ देखा है जिससे इनका सांस्कृतिक ज्ञान बढ़े और जनता कलाकार के दर्जे तक पहुँच सके।

यही बात चेकोस्लोवाकिया के साहित्यिक क्षेत्र की भी है। लेखकों को अपने निर्वाह की चिन्ता नहीं करनी पड़ती, उन्हें सब प्रकार की सुविधाएँ दी जाती हैं जिससे उनका मानसिक दृष्टिकोण विकसित हो। प्राहा के किसी भी पुस्तक भण्डार में घुस कर विश्व का साहित्य चेक भाषा में अनुवादित पाया जा सकता है।

एक अन्य घटना जिसने मुझे विशेष रूप से प्रभावित किया, वह है चेकोस्लोवाकिया सरकार का सूचना विभाग जिसमें विश्व के प्रत्येक देश और उसकी भाषा का एक विभाग है। 'ओरियन्टल विभाग' की अध्यक्षा श्रीमती हलास्का स्वयं एक लेखिका हैं और कुछ वर्ष जापान में रह चुकी हैं जिसकी भाषा का ज्ञान भी उन्हें है। ये विभाग अपने-अपने देश की साहित्यिक और सांस्कृतिक हलचलों की सूचनायें रखते हैं और उस देश के किसी व्यक्ति के चेकोस्लोवाकिया आने पर उसकी मेहमानदारी करते हैं क्योंकि उसकी भाषा से भी वे परिचित रहते हैं। भारतीय विभाग के अध्यक्ष मीता क्रासा से हिन्दुस्तानी में बातें करके किसी को भी आश्चर्य हो सकता था, फिर केवल भाषा की ही बात नहीं भारत के सब प्रगतिशील सांस्कृतिक आंदोलनों के समाचार उनके पास रक्खे रहते हैं। 'हंस' और 'नया साहित्य' से दो वर्षों से परिचित हैं और उनमें प्रकाशित रचनाओं के अनुवाद करके प्रायः चेक पत्रिकाओं में एवं पुस्तक के रूप में ये छपते रहते हैं जिससे चेक लोगों को

भारत के प्रगतिशील साहित्य का आभास मिलता रहता है। वे स्वयं भारत में दो वर्ष तक रह चुके हैं और भ्रमण करके भारत के विषय में अच्छा ज्ञान प्राप्त किया हुआ है। 'नया ओरियंट' नाम की एक पत्रिका प्रतिमास प्रकाशित होती है जिसमें संगीत, चित्रकला और साहित्य सब को स्थान दिया जाता है। कुछ छोटी-छोटी फिल्में भी हिन्दी भाषा में तैयार की गई हैं जिनसे भारतीय आम लोगों को चेकोस्लोवाकिया के विषय में पता चले। वे भारत के प्रगतिशील बुद्धिजीवियों के साथ घनिष्ट सम्बन्ध बनाना चाहते हैं और चित्रकला की प्रदर्शनियाँ आदि अपने देश में और चेक कला की प्रदर्शनी भारत में आयोजित करना चाहते हैं।

अन्त में एक अन्य घटना की चर्चा करूंगा जो मेरी चेकोस्लोवाकिया यात्रा में सब से अधिक महत्त्वपूर्ण थी। श्रीमती फूचिक को वारसा सम्मेलन में अति व्यस्त और संलग्न देखा करता था। अब प्राहा में एक बार उनसे मिलने और उसके शहीद पति फूचिक के प्रति श्रद्धांजली अर्पित करे बिना मुझे अपनी यात्रा अधूरी-सी जान पड़ी। मीता के साथ श्रीमती फूचिक के दफ्तर में गया जो प्राहा की सबसे बड़ी संस्था में काम करती हैं और चेकोस्लोवाकिया की शांति कमेटी का बहुत-सा महत्त्वपूर्ण काम भी उन्हीं के जिम्मे होता है। अवस्था चालीस और पैंतालीस के बीच में थी, अस्त-व्यस्त बिखरे बाल और साधारण वेष-भूषा, बड़ी-बड़ी आँखें, ठिगना क़द था, परन्तु चेहरे पर फूचिक जैसी ही उत्साह की एक झलक थी। उनके कमरे में फूचिक का बड़ा-सा चित्र देखकर एक बार अनुमान लगाने की कोशिश की कि किस प्रकार इस वीरांगना ने जिन्दगी का इतना बड़ा आघात सहा होगा। सबसे पहला प्रश्न उन्होंने मुझसे भारत में शाँति आंदोलन के विषय में पूछा कि भारत बुद्धिजीवी किस प्रकार अपनी कला द्वारा इस आंदोलन को शक्तिशाली बना रहे हैं। अन्त में फूचिक के विषय में बातें करते हुए उन्होंने कहा कि वे भारतीय लोगों के विचार फूचिक की पुस्तक 'फांसी के तख्ते से...' के विषय में जानना चाहेंगी। विदा लेते समय उन्होंने फूचिक का एक चित्र मुझे भेंट-स्वरूप दिया। कमरे से बाहर आने पर मीता की आँखों में आँसू भरे थे। इस प्रकार यह अन्तिम तीर्थ-यात्रा समाप्त हुई।

आज फिर प्राहा की सड़कों पर चलते समय हजारों चेक शहीदों की स्मृति आती है जो पिछले युद्ध का शिकार बने थे। शहर से थोड़ी दूर Bridge of Barricade नाम का पुल है जिस पर पिछले युद्ध की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना अंकित है। इस पुल के एक ओर जर्मन थे और दूसरी
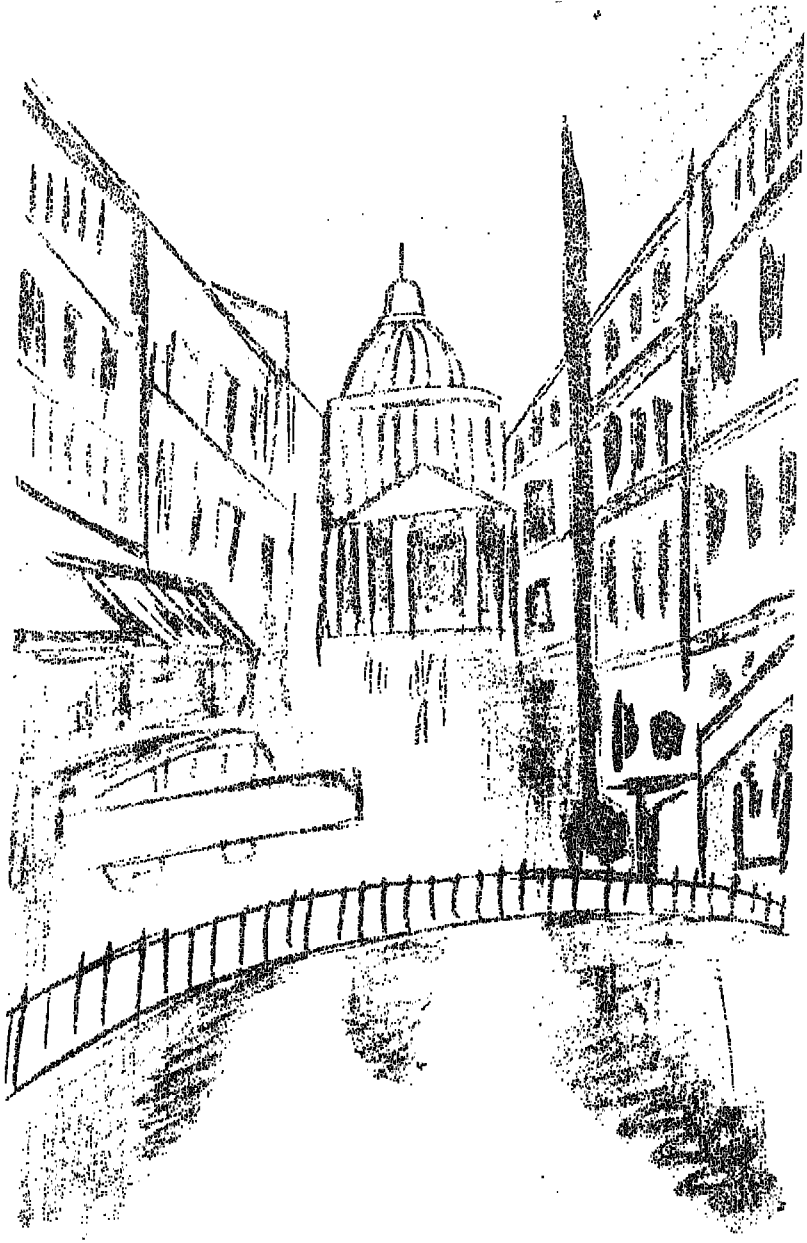
प्राग के मकान

ओर चेक पार्टीजन। जर्मनों के टैंकों, गोलियों और बमों के बावजूद भी चेक वीरों ने उन्हें इस पुल को पार नहीं करने दिया। यहाँ कितने ही दिनों तक घोर युद्ध होता रहा था। बाद में इसी पुल में उन्होंने रूसी टैंकों का स्वागत किया था। आज भी इस पुल पर खड़े होकर मोलदावा की तेज धारा बहते देख कर इन घटनाओं की मैं केवल कल्पना ही कर सका।

१९. चेकोस्लोवाकिया में बुद्धिजीवियों का घर

एक दिन सूचना विभाग के भारतीय सांस्कृतिक विभाग के अध्यक्ष मीता कासा ने हमारे सामने दोबरीश जाने का सुझाव रखा, जो प्राग से २८ मील की दूरी पर है और जहाँ एक विशाल महल 'बुद्धिजीवियों का घर' नाम से प्रसिद्ध है। दो दिन वहाँ रहने का हमारा प्रोग्राम बना। हम स्वाभाविकत: इस नये भवन को देखने के लिए उत्सुक थे, क्योंकि पश्चिमी यूरोप में इस प्रकार का कोई स्थान देखने का हमें अवसर नहीं मिला था।

नवम्बर का महीना था और पतझड़ अपने पूरे यौवन पर था। हरी पत्तियों पर पीलापन आ गया था और सर्दी का प्रकोप प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। हम दिन का खाना खा कर मोटर में दोबरीश की ओर रवाना हो गए, मीता हमें छोड़ने के लिए हमारे साथ चले। रास्ता बहुत देर तक मोलदावा नदी के किनारे-किनारे था और दूर 'बोहिमया' की छोटी-छोटी पहाड़ियाँ वृक्षों के झुण्डों में खोई दिखाई देती थीं। प्राग से बाहर जाकर चेकोस्लोवाकिया की प्रकृति और गाँवों को देखने का पहला अवसर था। अत: हम हीटर से गर्म हुई कार में बैठे रेडियो का संगीत सुनते हुए दूर-दूर तक फैली प्रकृति का रसास्वादन ले रहे थे। मीता आस-पास के गाँवों के विषय में कुछ आवश्यक और दिलचस्प बातें बतलाते जा रहे थे। लगभग दस मील के पश्चात् हमारी कार सीधी सड़क छोड़ कर एक पहाड़ी की ओर घूम गई और अब दोबरीश तक निरन्तर चढ़ाई का रास्ता था।

दोबरीश एक बहुत ही छोटा-सा गाँव है, जहाँ अधिकतर किसान रहते हैं। 'बुद्धिजीवियों का घर' एक विशाल महल में स्थित है, जो १९४८ के पूर्व एक अत्यन्त धनी पूँजीपति का निवास-स्थान था और अब यह सरकार की जायदाद है, जहाँ चेकोस्लोवाकिया के लेखक, चित्रकार, संगीतकार और नृत्यकार आदि या शहरों की व्यस्त ज़िन्दगी से कुछ दिनों तक छुटकारा पाने के लिए एकान्त और शान्त वातावरण में रहते हैं या कुछ कलाकार अपनी किसी नवकलाकृति पर यहाँ शान्ति से काम करते हैं।

महल से सटी एक विशाल झील है और उसके पार मीलों तक फैला हुआ घना जंगल है, जहाँ बुद्धिजीवी सुबह और शाम की सैर के लिए अपनी-

अपनी टोलियाँ बना कर या अकेले घंटों घूमते रहते हैं। जब हम इस भवन में पहुँचे, तो कुछ लोग अपने कमरों में खाने के बाद आराम कर रहे थे और कुछ सैर को निकल गए थे। हम भी अपने कमरों में अपना सामान रख कर बाहर झील के किनारे निकल गए। आसमान बादलों से ढका था और नवम्बर की सर्दी वहाँ प्राग की अपेक्षा अधिक थी।

भवन के पीछे नये-नये फूलों की एक नर्सरी है, जहाँ पिंजड़ों में रंग-बिरंगे परिन्दों की आवाज गूँज रही थी। उसी से सटा एक बाग है, जहाँ कुछ प्राचीन मूर्त्तियों के नमूने रखे हैं। झील के किनारे की सारी पृथ्वी पेड़ों से गिरे पत्तों से ढकी थी। मीला ने बतलाया कि बसन्त में यहाँ का दृश्य अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक बन जाता है, क्योंकि पेड़ों पर हरी पत्तियाँ और श्वेत फूल आ जाते हैं और दूर-दूर तक हरियाली दिखाई देती है। परन्तु अब तो पतझड़ था, पीले सूखे पत्तों और ठूँठों का पतझड़। काफी देर तक ओवरकोट की जेबों में हाथ डाले हम छोटी-छोटी पहाड़ियों पर चढ़े और उतरे, पगडंडियों पर चले और झील की परिक्रमा कर डाली।

शाम की चाय हमने डायनिंग रूम में पी। तब हमें भवन में रहने वाले व्यक्तियों का परिचय प्राप्त हुआ। चेकोस्लोवाकिया के प्रसिद्ध कार्टूनिस्ट फेलिस उस समय भवन में ही थे। ब्राजील के प्रसिद्ध उपन्यासकार जार्ज अमादो अपनी पत्नी और ५ वर्ष के लड़के सहित पिछले दो सालों से वहीं ठहरे हुए थे। हरीन्द्र चट्टोपाध्याय और उनके बीच में दुभाषिये का काम मैंने ही किया, क्योंकि अमादो को अंग्रेजी नहीं आती थी, फ्रेंच ये अच्छी बोल लेते थे। उनके उपन्यासों में ब्राजील के शोषित किसानों और मजदूरों का अत्यन्त सजीव चित्रण है और उनका अनुवाद यूरोप की बहुत-सी भाषाओं में हो चुका है। उन्होंने हमारे साहित्य के विषय में हमसे प्रश्न पूछे। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और मुल्कराज आनन्द की कुछ रचनायें उन्होंने पढ़ रखी थीं।

सर्दी काफी बढ़ गई थी अतः घूमने का विचार छोड़ कर हम लायब्रेरी वाले कमरे में आकर आराम-कुर्सियों पर बैठ गये और एक कोने से धीमे स्वर में रेडियो से आते हुए ऑरकेस्ट्रा का संगीत सुनने लगे। कुछ अन्य व्यक्ति भी कुछ अपनी टोलियाँ बनाए या अकेले बैठे हुए अपना समय व्यतीत कर रहे थे। थोड़ी दूरी पर एक बड़ी-सी चिमनी में ढेर-सी लकड़ियाँ सुलग रही थीं। तभी हमारा परिचय एक चेक लड़की से हुआ, जो अमादो और उसकी पत्नी को चेक भाषा सिखाती थी। यह बात नहीं कि उसने अपनी जिन्दगी

में पहले-पहल हिन्दुस्तानियों को देखा हो, परन्तु फिर भी वह अत्यन्त उत्सुक होकर हमसे बातें करने लगी। उसे भारतीय संगीत में बहुत दिलचस्पी थी और अगले दिन हरीन्द्र चट्टोपाध्याय ने अपना शास्त्रीय संगीत सुना कर उसकी इच्छा पूर्ण की।

इस भवन का सारा वातावरण और बाहर की प्रकृति इतनी कलात्मक और विचारों को पंख लगा देने वाली थी कि यहाँ आकर कलाकार की सृजनात्मक शक्ति को प्रेरणा मिलती थी। आराम करने वाले व्यक्ति कभी अकेले चुपचाप और कभी अपने साथियों की मंडली में बैठ कर बातें करके अपने शरीर और मस्तिष्क को सुस्ताने का अवसर देते थे, कभी झील के किनारे-किनारे दूर तक अपने विचारों में खोये हुए सैर कर आते थे और कभी आँखें बंद करके धीमी धूप में आराम-कुर्सी पर लेटे हुए विचारों को पूर्ण स्वछन्दता से उड़ने देते थे। दो-दो कमरों के फ्लैट भी हैं, जहाँ व्यक्ति अपने परिवार सहित आकर रह सकता है। खाने-पीने का इन्तजाम आम रसोई में ही होता है, जिससे उन्हें कोई परेशानी नहीं उठानी पड़ती।

कभी-कभी सैर करते समय या रात को खाने के पश्चात् हरीन्द्र अपनी कविताएँ सुनाते या डाक्टर अटल स्पेनिश गृह युद्ध और पुराने चीन के अपने दिलचस्प अनुभव सुनाते। दोनों ही अपने अनुभवों में बहुत धनी थे। कभी-कभी मैं छोटे से गाँव में जाकर वहाँ सड़कों, मकानों और लोगों के स्कैच बनाता। कभी-कभी गाँव के छोटे-छोटे बच्चों का झुण्ड मुझे स्कैच करते हुए देख कर आ घेरता और हम हँसने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकते थे, भाषा के कारण हमारे बातचीत करने के दरवाजे बन्द थे। पतझड़ का उस वातावरण और प्रकृति में अपना एक विशेष आकर्षण था। लाल और पीली पत्तियों से भरे पेड़ों को दूर से देखने पर ऐसा प्रतीत होता था, मानो चारों ओर आग लगी हुई हो।

जिस दिन हमें प्राग वापस लौटना था, उससे पहले रात को हल्की-सी सर्दियों की पहली बर्फ गिरी थी। सुबह नाश्ते के बाद हम कुछ देर के लिए बाहर बर्फ पर सैर करने लगे। झील के ऊपर पहाड़ियों पर बर्फ चमक रही थी और नंगे ठूँठों के शरीर भी सफेद चादर में ढक गए थे। जार्ज अमादो ने विदा देने से पूर्व अपना एक उपन्यास हमें भेंट-स्वरूप दिया। मीला प्राग से मोटर लेकर हमें लेने आ गए थे। दोबरीश में केवल दो दिन रहने के पश्चात ही ऐसा अनुभव होने लगा था कि हम बरसों से यहाँ रहते आए हों। रास्ते में मीला ने बतलाया कि जब कभी किसी दूसरे देश से कोई भी कलाकार चेकोस्लोवाकिया आता है, तो वह दोबरीश में एक-आध दिन रहे बिना वापिस नहीं जाता।

२०. डेक पर....

जहाज का डेक, एक कोने में दीवार के सहारे आराम-कुर्सी पर मैं अधलेटा हुआ हूँ, रात का अन्धकार धीरे-धीरे गाढ़ा होता जा रहा है, हवा के तेज फरफराते झोंके मेरे बालों को तिनकों की भाँति उड़ा रहे हैं। मैं अपनी आँखें मूँदे हुए हूँ। डाइनिंग-रूम में डांस होने के साथ जो संगीत बज रहा है, वह धीरे-धीरे मेरे कानों के भीतर भी पहुँच रहा है।

पेरिस पीछे छूट गया, बहुत पीछे, परन्तु मुझे ऐसा लगता है जैसे वह मेरी आँखों के बहुत करीब है और इसी से मैं हमेशा अपनी आँखें बन्द करे रहना चाहता हूँ। ये दो वर्ष किस प्रकार बीत गए इसका आभास आज हो रहा है। दो वर्ष पहले का वह दिन याद आ रहा है जब मैं इसी प्रकार डेक में बैठा-बैठा यूरोप पहुँच गया था परन्तु वह बात पुरानी हो गई है।

वापिस लौटने का जो उत्साह और आनन्द पेरिस में आता था, वह अब धीरे-धीरे समाप्त हो चुका है, केवल अतीत को बाँहें खोल कर उसमें अपने आपको मिला देने की चाह बाकी है, वह सब एक स्वप्न नहीं तो और क्या था ? अब केवल उसकी स्मृति ही बाकी रह जायेगी। इन दो वर्षों में क्या कुछ किया, क्या कुछ भुला दिया और क्या कुछ पा लिया, पुराने रास्ते छूट गये और नयों को अपनाया, पुराने तारों को तोड़कर नये तारों में अपने आप को बांधा, कुछ स्वयं बदला और कुछ इस युग को बदलने की भावना जागी, मित्र बने और बिछुड़ गए, किसी की स्नेह में भरी आँखों में गहरी अनुभूति पाई और वे आँखें फिर सदा के लिए ओझल हो गई; बाजार, सड़कें, मकान, नदी-नाले, पर्वत और हिम, झरनें और झीलें, संग्रहालय और प्रदर्शनियाँ—और भी न जाने क्या-क्या देखा, लेकिन अब मेरी आँखों के सामने केवल सागर का नीला अथाह जल है जिसकी सीमा आकाश को छू रही है, जिसका फेन मुझे आईस क्रीम की याद दिलाता है, जिस की ऊँची-लहरों को देखकर मुझे पेरिस के जलूसों की याद आती है।

जहाज के रेस्तराँ का एक बैरा मेरे सामने बिछी अन्य कुर्सियों को समेट कर दीवार के सहारे खड़ा कर रहा है। मेरे पास आने पर वह मेरी ओर देखकर मुस्कराता है जिससे उसके पीले दाँत अँधेरे में चमक उठते हैं।

मैं जरा संभल कर बैठ जाता हूँ। इस इटेलियन की आँखें सदा बुझी-बुझी क्यों रहती हैं? उसके चेहरे को देख कर मुझे ऐसा लगता है जैसे उसका सारा शरीर और मन थक चुका है और अन्तिम क्षण का इन्तजार कर रहा है।

मुझे एकाएक पेरिस की वह प्रातःकाल याद आती है जब 'गार द नोर' के स्टेशन पर मेरे साथी मुझे छोड़ने आये थे। डेबरा की आँखें डबडबाई हुई थीं परन्तु फिर भी वह मेरी ओर मुस्करा कर देख रही थी, कितनी बार मैंने उसके घर पर डिनर खाया था और रात को १२ बजे अपने घर के लिए आखिरी बस पकड़ी थी; दुबुआ अपनी कविताओं की प्रकाशित पुस्तक मुझे देने आया था और रुवो, माइकल, एलेन, विलियम, हेलेन, दोबजिस्की—मैं सब को अपने डिब्बे की खिड़की से देख रहा था—फिर गार्ड ने सीटी बजाई और मैं आखिरी बार सबसे हाथ मिलाने लगा और फिर प्लेटफार्म पर हवा में उड़ते हुए सफेद रूमाल, अनगिनत रेलवे लाइनें, मकानों की कतारें और कुछ समय तक पेरिस की सड़कें और मकान—फिर सब कुछ खत्म हो गया।

डांस खत्म हो गया। लोग हँसते हुए दो-दो तीन-तीन की टोलियों में बाहर निकल रहे हैं। और अपने केबिनों की तरफ जा रहे हैं। कुछ दूरी पर एक पुरुष और स्त्री रेलिंग के सहारे झुक कर नीचे झांकने लगे हैं।

नदी समुद्र की अपेक्षा क्यों अधिक सुन्दर लगती है? समुद्र का ओर छोर दिखाई नहीं देता, उसका कोई किनारा नहीं होता और नदी की लम्बाई मापी जा सकती है। मैं सेन नदी के विषय में सोचता हूँ, वीनस की नहरों में आधी-आधी रात तक चलते गंडोलों का संगीत मेरे कानों में गूँजता है, प्राग के चार्लस चतुर्थ पुल पर बनी मूर्तियों के नीचे वलतावा के बहते हुए जल की बूँदें अपनी आँखों में पाता हूँ। मेरे चारों ओर जल-राशि है बूँद-बूँद की बनी जल-राशि बूँद-बूँद जैसी स्मृतियाँ दिमाग में उलझी हैं, उनका क्या करूँ?

वे अनगिनत रातें याद आती हैं जब बुलीवार सां मिशेल के कैफे दूपों में बैठे हम दुनिया के सब विषयों पर बातें किया करते थे, नोत्रेदाम से औकेदरो तक पेड़ों की छाँव के नीचे सेन के किनारे-किनारे घूमा करते थे, 'वालदीव' के विशाल हाल में राजनैतिक भाषण सुना करते थे—वे अनुभूतियाँ ठीक मेरे अन्तःस्थल की गहराई में पहुँच गई थीं। रात-दिन प्रेरणा के कितने ही झरने मेरे मरुस्थल में फूटा करते थे, आत्मविश्वास की गहराई कितनी थी,

यह तो पता नहीं परन्तु उसका आभास जीवन में पहली बार होने लगा था।

हवा तेज होती जा रही है, जहाज में झकोले आने लगे हैं, चाँदनी में सागर की छाती पर उभरती सफेद लहरें, अँधेरी रात में बिजली की भाँति जान पड़ रही हैं। देश समीप आ रहा है ·· प्रतिक्षण मैं उसके पास आता जा रहा हूँ और २६ घंटों में हम दोनों एक दूसरे में मिल कर एक हो जायेंगे।

Je vis dans les images innombrables des saisons
Et des annees
Je vis dans les images innombrables de la vie

(मैं अनगिनत वर्षों और ऋतुओं की 'इमेज' में जीवित रहता हूँ मैं जीवन की अनगिनत 'इमेज' में जीवित रहता हूँ)

एलुआर की ये पंक्तियाँ सहसा याद आती हैं। उनका लम्बा चेहरा, स्वप्नों से भरी उनकी आँखें, उनका गठा हुआ लम्बा-चौड़ा बदन और उनके हृदय में उपजते कोमल और बारीक तार···दादाइस्ट से कम्यूनिस्ट ·कितनी लम्बी यात्रा उन्होंने पार की, आज वे नहीं हैं। लेकिन उनका चेहरा मैं देखता हूँ।

मेरी आँखों में नींद नहीं है, डेक पर अब कोई नहीं है। जहाज ऊपर-नीचे उठ रहा है जैसे किसी के हृदय पर रक्खा हाथ उसकी धड़कन के साथ साथ ऊपर नीचे उठता हो। मैंने जिन्दगी में प्यार करना सीखा है, मैं जिंदा रहना चाहता हूँ। मैं कवि नहीं बन सकता लेकिन कविता पढ़ना चाहता हूँ, मुझे स्वप्न दिखाई दे रहे हैं—जिन्दगी के सपने, प्यार के सपने।

'ल्यूमानिते' दफ़्तर की सातवीं मंजिल में रेस्तराँ है। मैं, दुबुआ, दोबजिस्की, गेराँ खाना खा रहे हैं। दोबजिस्की की नई कविता 'ले लेत्र' में छपी है, उसकी चर्चा हो रही है, फिर टेरेस में धूप में बैठकर हम कॉफ़ी पी रहे हैं। सारा पेरिस दिखाई देता है···चिमनियाँ···बसें, मकानों की छतें··· आईफ़ल टावर, साकरीकर की सफेद उजली ईमारत, नोत्रेदाम का गिरजा, सेन के ऊपर के पुल··· सब दिखाई दे रहा है।

'पेले द शैयो' के पास मैं बीच में खड़ा हूँ···आज पेरिस सफेद है, सामने के बाग़ बर्फ़ से ढके हुए हैं, पीछे नेपोलियन की क़ब्र है। मैं लिफ़्ट में बैठ कर आईफ़ल टावर की दूसरी मंजिल पर पहुँच जाता हूँ, मेरे साथ निन्दी है, इस रेस्तराँ में चाय पीते हैं, पेरिस की विशाल नगरी हमारे पैरों पर बिखरी जान पड़ती है, ऊँची ईमारतों को इतनी ऊँचाई से देख कर उन पर हँसी आती है। कौन नीचा है कौन ऊँचा है ?

पहली मई को मजदूरों का जुलूस···असंख्य झंडे और प्लेकार्ड, आकाश में गूँजते हुए नारे, केवल सिर ही सिर दिखाई देते हैं। मजदूरों, छात्रों, बूढ़ी औरतों, लेखकों, युवतियों के सिर छोटे-छोटे बच्चों के पाँव। गलियों के नुक्कड़ों पर पुलिस की चौकियाँ···'प्लास द ला रिपब्लिक' का विशाल चौक ···जाक दूकलो का भाषण···सपने···तारों में बँधे हुए सपने। उनका शायद कोई अन्त नहीं है। आकाश में तारे दिखाई दे रहे हैं. मेरा कुर्सी से उठकर अपने केबिन में जाने को मन नहीं करता। लेकिन जाना ही पड़ेगा, डेक पर कब तक बैठा जा सकता है।
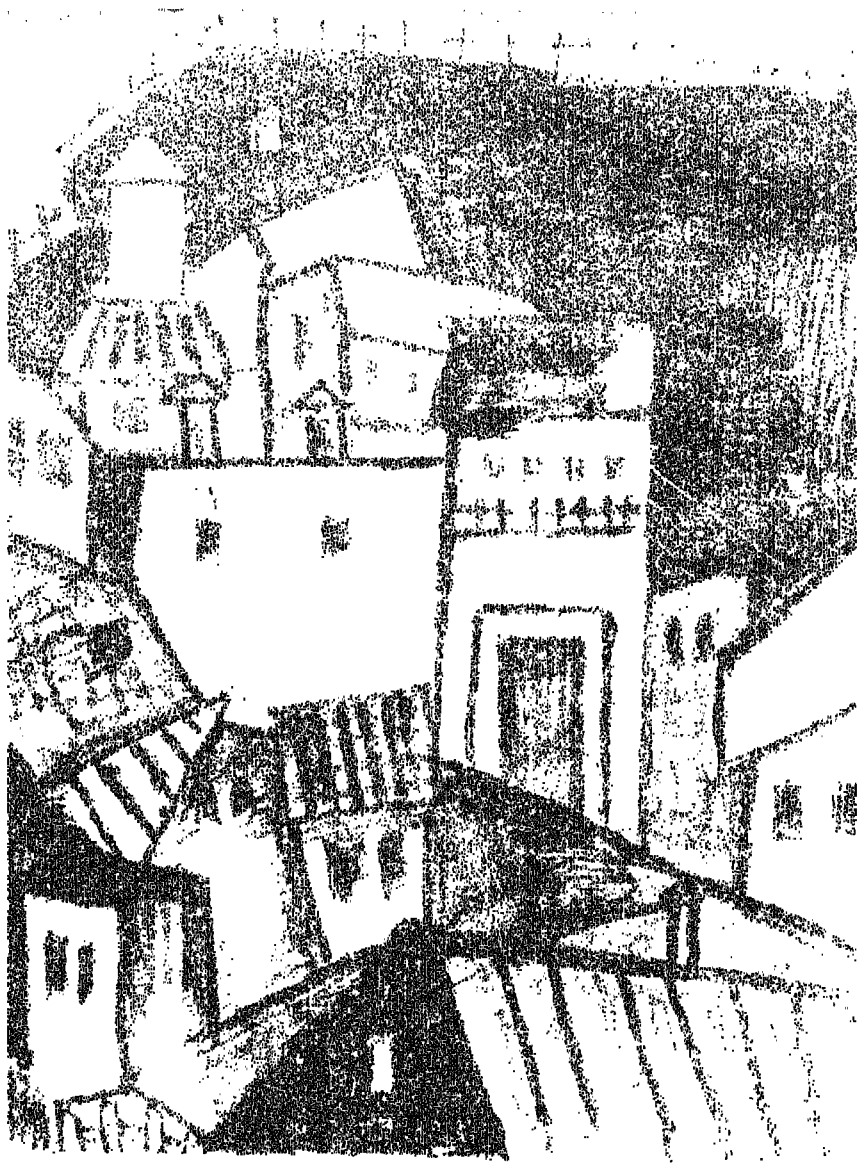
मास्को के करीब

२१. टाल्सटाय के घर में

आकाश गहरे नीले रंग का था और बिखरी धूप में मास्को की चमचमाती सड़कों पर उजले हरे रंग के पेड़ों और सड़कों पर टहलते लोगों की परछाइयाँ अजीब अजीब-सी आकृतियाँ बना रही थीं। लोगों में एक प्रकार का उल्लास था क्योंकि मास्को में धूप के दिन अधिक देर तक नहीं टिकते।

सुबह नाश्ता करके मैं अपने एक रूसी मित्र यूरा के साथ एक बड़ी-सी कार में यासनाया पोलयाना के लिए रवाना हो गया। यासनाया पोलयाना के विषय में कब पहली बार पढ़ा था सो अब याद नहीं, लेकिन जब-जब 'आना करीनिना' और 'युद्ध और शान्ति' पढ़ा तब-तब इस अजीब से अनजाने स्थान की ओर आकर्षण बढ़ा। टाल्सटाय की जीवनी में भी इस स्थान का विचित्र-सा वर्णन पढ़कर कभी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी कि एक दिन मैं इस स्थान को देखूँगा। कार में बैठकर भी मुझे विश्वास नहीं हो सका कि मैं उस महत्त्वपूर्ण स्थान में जा रहा हूँ, जहाँ विश्व साहित्य की अमर कृतियाँ लिखी गई थीं, जहाँ आना का चरित्र कागज पर उतरा था, जहाँ 'युद्ध और शान्ति' के कितने ही सजीव चित्र रचे गए थे। प्रसन्नता के साथ-साथ एक प्रकार का भय भी मेरे मन में समा रहा था कि कैसे वह सब मैं अपनी आँखों से देख सकूँगा, कैसे उस वातावरण के साथ अपने आप का समन्वय कर पाऊँगा।

कार ७० मील की रफ्तार से भागी जा रही थी, सड़क के दोनों ओर हरे और गहरे पीले रंग के लहलहाते खेत सूरज की रोशनी में चमक रहे थे। कार में लगे रेडियो में न जाने किस संगीतकार के स्वर धीमे-धीमे गूँज रहे थे। रात में कम सोने के कारण यूरा सीट पर सिर टिकाए सो रहा था और मैं खुली खिड़की में से बाहर के दृश्य देख रहा था परन्तु मन में यासनाया पोलयाना की बात सोच रहा था। आज न जाने हृदय के कौन से कोने में से बार-बार नताशा, आना, लेविन, आन्द्रे, डाली के धुँधले-धुँधले चित्र मेरी आँखों के सामने घूमे जा रहे थे और मैं कोशिश करने पर भी उन्हें अपने से दूर नहीं कर पा रहा था।

छोटे-छोटे गाँव, छोटे-छोटे शहर पीछे छूटे जा रहे थे और रेडियो से

प्यानो, वायलिन, मैंडोलिन के स्वर हृदय के सब सोए भागों को एक-एक करके जगा रहे थे। १५० मील की यात्रा हमने तीन घंटों में पूरी की और हम यासनाया पोल्याना के बड़े से फाटक पर जा पहुँचे।

लगभग सौ डेढ़ सौ घरों के एक छोटे से गाँव के सिरे पर टाल्सटाय का घर है जिसके चारों ओर दूर-दूर तक फैले हुए बाग़-बगीचे हैं। पास ही एक तालाब है जिसके किनारे टालसटाय घण्टों जाकर बैठे रहते थे। आजकल इस मकान को सरकार ने म्यूज़ियम बना दिया है जिसमें टाल्सटाय का सब सामान तरतीबवार सजा हुआ है। छुट्टी न होने पर भी उस दिन वहाँ लगभग १,००० पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे म्यूज़ियम देखने आए हुए थे।

म्यूज़ियम के डायरेक्टर ने हमारे साथ एक ऐसे व्यक्ति को कर दिया जो टाल्सटाय के सैक्रेटरी रह चुके थे और अब उनकी अवस्था ७० वर्ष के लगभग थी, परन्तु उनकी मुद्रा को देख कर ऐसा जान पड़ा मानो टाल्सटाय की चर्चा करते समय अब भी वह स्वर्गीय सुख अनुभव करते हों।

"यह वह पेड़ है जिसकी छाया में बैठ कर टाल्सटाय किसानों को पढ़ाया करते थे, इस झोंपड़ी में रेपिन रहा करते थे, जब कभी टाल्सटाय के चित्र बनाने वह यहाँ आते थे'''यहाँ टाल्सटाय के घोड़े रहते थे। टाल्सटाय ने अपनी माँ द्वारा लगाए गए बाग़ और पेड़ों की बड़ी सावधानी के साथ रक्षा की क्योंकि जब वह २३ वर्ष के थे तभी उनकी माँ मर गई थी परन्तु टाल्सटाय कभी आजीवन उन्हें भूल नहीं सके थे'' " हमारे गाइड धीरे-धीरे रूसी भाषा में कहते जा रहे थे और यूरा मेरे लिए अनुवाद करता जा रहा था।

छोटी-छोटी पगडण्डियाँ बरसाती नालों की भाँति मकान के इर्द-गिर्द फैले बाग़ में दूर-दूर तक सिकुड़ी हुई थीं। क़दम-क़दम पर टाल्सटाय के जीवन की अनगिनत स्मृतियाँ बिखरी हुई थीं। कहीं कोई लकड़ी का बैंच था जिस पर वह सुबह बैठा करते थे, कहीं कोई पेड़ था जो उन्हें बहुत पसन्द था, एक शाखा पर एक घण्टा लगा था जिसे खाने के समय बजा कर परिवार के सब सदस्यों को डाइनिंग-रूम में आने की सूचना दी जाती थी। धीरे-धीरे हम उस रहस्यमय वातावरण में खोते जा रहे थे।

बाहर की परिक्रमा समाप्त करके हम उनके घर में घुसे। दरवाज़े के भीतर क़दम रखते ही सारे शरीर में एक प्रकार की सनसनी-सी दौड़ गई। उनकी जीवनी में पढ़ी कितनी ही घटनाएँ एक साथ मस्तिष्क में घुड़दौड़ लगाने लगीं।

एक कमरे में शीशे की आल्मारियों में उनके कपड़े टँगे हुए थे, मानो उन्होंने अभी उतारे हों। उनका कोट, पतलून, ओवरकोट, ड्रेसिंग गाऊन, मोजे, लम्बे-लम्बे रूसी जूते, कमीजें सब थे। एक कोट के विषय में उनके सैक्रेटरी ने बतलाया कि 'आना करीनिना' के रुपयों में से उन्होंने उस कोट को खरीदा था। दीवारों पर उनके और उनके परिवार के चित्र टँगे हुए थे। उनकी पत्नी और पुत्री को चित्रकारी का शौक़ था, उनके बनाए चित्र भी थे।

यह उनके पढ़ने-लिखने का कमरा था। एक कोने में छोटी-सी मेज और बिना सिरहाने की एक तिपाई रखी हुई थी। मेज पर एक कलम और दवात रखी थी। इस तिपाई पर उन्होंने अपने जीवन का कितना बड़ा भाग बिताया होगा, यहीं बैठकर उन्होंने 'आना करीनिना' और 'युद्ध और शान्ति' की रचना की होगी, यही कोना उनके मकान का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग था। उनकी सादगी देखकर हृदय विचलित हुए बिना नहीं रहा। शेल्फों पर अनगिनत किताबें सजी हुई थीं। वह जर्मन, फ्रांसीसी और अंग्रेजी भी पढ़ लेते थे। उनके पुस्तकालय में २३,००० पुस्तकें थीं। उनके पास दुनिया के कोने-कोने से पत्र आते थे जिनकी संख्या २०,००० के लगभग है और वह अधिकतर उन पत्रों के उत्तर दिया करते थे।

यह उनका सोने का कमरा था। खिड़की के पास उनकी चारपाई बिछी हुई थी। दूसरी मंजिल से दूर तक फैले हुए खेत, गाँव के मकानों की छतें और छोटी-छोटी हरी पहाड़ियाँ दिखाई दे रही थीं। उनकी पत्नी के सोने का कमरा अलग था क्योंकि अन्तिम वर्षों में आपस में खटपट रहने के कारण उनके सोने के कमरे अलग-अलग थे। सुबह उठ कर कुछ घंटे वह अपनी चारपाई पर बैठ कर ही लिखा करते थे। एक अन्य कमरे में एक और मेज भी थी जिस पर टाल्सटाय की पत्नी पहले उनकी पाण्डु-लिपियों की नक़ल किया करती थीं और शायद 'युद्ध और शान्ति' जैसी बड़ी पुस्तक की उन्होंने तीन बार नक़ल की थी, परन्तु बाद में उन्होंने यह सब छोड़ दिया था।

खाने का कमरा दूसरी मंजिल के एक सिरे पर था। यह बहुत बड़ा था। बीच में एक मेज थी जिसके इर्द-गिर्द १२ कुर्सियाँ रखी हुई थीं। दो बड़े-बड़े प्यानो थे। टाल्सटाय को संगीत का बहुत शौक था और प्रायः खाने के बाद उनकी लड़की प्यानो पर किसी क्लासीकल संगीतकार का संगीत बजाया करती थी। चारों ओर आराम-कुर्सियाँ थीं जिन पर खाने के बाद लोग आराम किया करते थे। दीवार पर रेपिन के बनाए हुए चित्र थे। यह टाल्सटाय के अभिन्न मित्रों में से एक थे और कितने-कितने दिन आकर

उनके पास रहते थे और उनके चित्र बनाते थे। रेपिन के चित्रों को देख कर ऐसा जान पड़ा मानो उन्होंने टालसटाय की आत्मा और उनके हृदय की गहराई को छू लिया होगा जिसका आभास टालसटाय के चित्र की आँखों से हुआ। इस कमरे का वातावरण अत्यन्त सजीव जान पड़ा। आँखों के सामने कल्पना के वे चित्र घूमने लगे जब टालसटाय का परिवार खाने के बाद उस कमरे में जीवन भर देता होगा।

नीचे की मंज़िल में कुछ अतिथियों के लिए कमरे थे। एक उनके डाक्टर का था जो उनके साथ ही रहता था और अन्तिम बार जब सदा के लिए टालसटाय ने अपना घर छोड़ा तो केवल डाक्टर ही उनके साथ गया था। एक और उनका निजी कमरा भी था। उनके सेक्रेटरी ने बतलाया कि यह कमरा उन्हें बेहद पसन्द था क्योंकि यह घर के शोरगुल से दूर था और यहाँ उन्हें सदा एकान्त मिलता था। इस कमरे का बहुत-सा वर्णन उन्होंने 'आना करीनिना' में लेविन के कमरे की चर्चा करते समय किया था क्योंकि लेविन के चरित्र में उन्होंने बहुत कुछ अपनी बातें कही थीं। कमरे की सादगी, बाहर खुलती हुई एक खिड़की, एक चारपाई···बहुत कुछ वही था। एक कोने में पानी भरने का एक बर्तन रखा हुआ था जिसमें टालसटाय अपने अन्तिम दिनों में बाहर जाकर कुएँ से स्वयं ही पानी भर कर लाते थे।

म्यूज़ियम को देख कर ऐसा जान पड़ा कि जिस व्यक्ति को जीवन में कभी नहीं देखा, जिसकी मृत्यु हुए भी पचास साल के लगभग बीत चुके हैं, उसके जीवन की एक झाँकी, एक धुँधली-सी छाया आज दिखाई दी जिसकी स्मृति शायद कभी धुँधली नहीं पड़ सकेगी। सूने मकान के कमरों में आज भी मुझे आना और लेविन की हल्की-हल्की पदचाप सुनाई दी, वे सब व्यक्ति शायद इस स्थान को कभी नहीं छोड़ सकेंगे। इस मकान में केवल टालसटाय के जीवन का इतिहास ही नहीं पता चलता बल्कि कितनी ही आत्माओं के स्वर सुनाई देते हैं जिन्हें टालसटाय ने जन्म दिया था।

जब मकान से बाहर निकले तो हम तीनों ही चुप थे मानो दो घंटों तक कोई स्वप्न देख रहे थे। बाहर तेज़ धूप निकली हुई थी और कुछ क्षणों के लिए मेरी आँखें उस रोशनी में चौंधिया-सी गईं। लोगों के झुण्ड इधर-उधर घूम रहे थे। कुछ देर बाद हम टालसटाय की समाधि की ओर बढ़ गए जो उस घर से दो फर्लांग की दूरी पर थी। पतली-सी सड़क के दोनों ओर विशालकाय हरे-हरे पेड़ों की कतारें आकाश को ढके हुए थीं। छोटे-छोटे बाग़, कहीं फूलों की क्यारियाँ और कहीं ऊबड़ खाबड़ झाड़ियाँ थीं। सेक्रेटरी

धीमे स्वर में धीरे-धीरे टाल्सटाय के विषय में कुछ कह रहे थे परन्तु मेरे कानों तक उनका स्वर पहुँच नहीं पा रहा था। चारों ओर उदासी भरा एक सन्नाटा छाया हुआ था।

समाधि से थोड़ी दूर पहले सड़क पर एक बोर्ड लगा हुआ था जिस पर लिखा था कि इससे आगे लोगों को चुप रहना चाहिए। समाधि क्या थी, एक छोटा-सा मामूली पत्थर प्रकृति के बीच में पड़ा था जिस पर रंग-बिरंगे फूल सजे हुए थे। अपनी मृत्यु से पूर्व टाल्सटाय ने अपनी समाधि के विषय में विस्तार से आदेश दे दिया था कि जैसी निर्धन से निर्धन व्यक्ति की समाधि होती है वैसी ही उनकी भी बने, उनकी मृत्यु पर किसी भी व्यक्ति का भाषण न हो। उसका स्थान भी वह स्वयं ही चुन गए थे। उनकी समाधि के निकट हम झुके और बिना एक भी शब्द कहे हमने उस महान् आत्मा के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। कहने को कुछ भी बाकी नहीं बचा था। हम दबे पाँव लौट आये।

बाहर निकल कर अपने डायरेक्टर के साथ एक रेस्तराँ में खाना खाया। म्यूजियम के डायरेक्टर ने बतलाया कि वह वर्षों से टाल्सटाय के जीवन और उनके कृतित्व का विशेष अध्ययन कर रहे हैं, सामाजिक और वैज्ञानिक रूप से टाल्सटाय द्वारा रचित चरित्रों, कथानकों आदि का विश्लेषण कर रहे हैं। अपने जीवन के अन्तिम वर्ष वह इसी म्यूजियम में व्यतीत करना चाहते हैं।

हमारी कार फिर तेजी से मास्को की ओर रवाना हो गई। रेडियो से फिर संगीत की ध्वनि हमारे कानों तक पहुँचने लगी। शाम की धुँधली रोशनी में पेड़ों की परछाइयाँ लम्बी होने लगीं। अतीत की दुनियां से बाहर आकर वर्तमान की ओर हम बहुत तेजी से बढ़े जा रहे थे। सुबह आते वक्त खिड़की से बाहर जिन गाँवों, शहरों और मकानों को देखने में जो मेरी दिलचस्पी थी, वह अब समाप्त हो गई थी। मैंने आँखें बन्द कर लीं परन्तु यासनाया पोलयाना की दुनिया से अपने आप को अलग नहीं कर सका।

मेरी तीर्थयात्रा समाप्त हो गई। पाँच वर्ष पूर्व फ्रांस में रोमाँ रोलाँ का घर देखने के बाद जो भावनाएँ उठी थीं, वही मैं इस समय भी अनुभव कर रहा था। अनुभव करता हूँ कि इस प्रकार की तीर्थयात्रा से कितना उत्साह मिलता है, कितनी प्रेरणा मिलती है।

२२. नीला डेन्यूब और वियना

मैं काहलेनबर्ग की चोटी पर एक खुले समतल स्थान में धूप में पेट के बल लेटा हुआ हूँ। सामने वियना नगरी दूर-दूर तक फैली दिखाई दे रही है। एक ओर डेन्यूब की नीली धारा शहर को बाँटती हुई पहाड़ों की ओट में खो गई है। मैं कभी अपनी आँख खोल लेता हूँ और कभी बन्द कर लेता हूँ। वर्षों पुरानी एक बात याद आती है। तब मैं कालेज में पढ़ता था। एक दिन एक साहित्यिक मित्र ने स्टिफ़ेन ज़्विग की पुस्तक 'वर्ल्ड ऑफ़ यस्टरडे' पढ़ने के लिए कहा। पुस्तक पढ़ कर वियना की जिन्दगी—विशेषकर बौद्धिक—का जो चित्र मेरे दिमाग में बना, वह कभी भूल नहीं सका। तब सोचा था कि एक बार वियना अवश्य जाऊँगा। आज काहलेनबर्ग में बैठा वियना के मकानों की चिमनियाँ, डेन्यूब पर बने हुए पुल सब देख रहा हूँ।

हल्की-हल्की सितम्बर की धूप। आज यहाँ ज्यादा लोग नहीं हैं, इतवार को सारे वियना निवासी परिवार समेत सारे दिन का प्रोग्राम बनाकर यहाँ आते हैं। घास के तिनके मेरी नाक का स्पर्श कर रहे हैं। चारों ओर ऊँची-नीची पहाड़ियाँ वियना को घेरे खड़ी हैं। वियनिज़ वुड्स का सौन्दर्य दुनिया भर में प्रसिद्ध है क्योंकि यहीं विश्व के कितने ही प्रसिद्ध संगीतकारों को प्रेरणा मिली थी। चारों ओर फैला सन्नाटा मेरे अन्दर घुसता जा रहा है और मुझे ऐसा महसूस हो रहा है मानो मेरे भीतर कोई धीमा-धीमा संगीत बजा रहा हो। ऐसे सुन्दर और नीरव स्थानों में मुझे प्रायः अपने देश की याद आने लगती है, प्रायः मेरा अकेलापन उभर कर मेरे चारों ओर घिर जाता है। इस नगरी में किसी को जानता नहीं, यहाँ की भाषा नहीं जानता, लोगों से पूछ-पूछ कर रास्तों पर चलता हूँ और डरते-डरते रेस्तराँ में जर्मन भाषा में लिखे हुए 'मिनू' में से बैरे को भोजन का आर्डर देता हूँ। तब अकेला महसूस करना स्वाभाविक ही है।

फिर शाम को धीरे-धीरे वियना के मकानों में बिजलियाँ जलती दिखाई देती हैं जो दूर से टिमटिमाते दिये-सी जान पड़ती हैं। शहर का रंग-रूप बदल जाता है। मैं नीचे उतरने लगता हूँ। काफ्का, आर्थर श्नीज़लर, ज़्विग, बीथोवाँ, मोजार्ट जिन्होंने वियना की संस्कृति को इतना उन्नत किया—मैं मन

ही मन उन सब को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

जहाँ काहलेनबर्ग जाने वाली चढ़ाई शुरू होती है वहाँ ग्रिंजिंग नाम की एक बस्ती है जो वियना की सबसे पुरानी बस्तियों में से एक है। पुराने एक या दो मंज़िले मकान, तंग सड़कें, सारा का सारा वातावरण अपनी एक विशेषता लिये हुए है। यहाँ की ताज़ी शराब दूसरे देशों में भी प्रसिद्ध है। शायद यहाँ हर एक घर शराबख़ाना भी है। इन शराबख़ानों के बाहर पत्तियों का बड़ा-सा गुच्छा लटका रहता है जिससे लोगों को पता चले कि यहाँ नई शराब मिलती है। जहाँ दुनिया में पुरानी से पुरानी शराब मूल्यवान समझी जाती है, उसके विपरीत यहाँ नई शराब का प्रचार है।

मैं एक छोटे-से बार में घुस जाता हूँ। लकड़ी के बेंच बिछे हुए हैं, कुछ लोग अपनी-अपनी टोलियाँ बनाए बैठे नई शराब पी रहे हैं। एक एकॉर्डियन बजा रहा है और दूसरा गिटार और वे हर मेज़ का चक्कर लगा रहे हैं। वातावरण में बहुत अपनापन है, बाहरी आडम्बर जैसी कोई चीज़ यहाँ नहीं मिलती। वियना के रेस्तराँ और कैफ़ों में पश्चिमी यूरोप की अपेक्षा संगीत बहुत ज़्यादा प्रचलित है। इससे पता चलता है कि आस्ट्रियन लोग कितने संगीत-प्रेमी हैं।

मैं प्राते के पास एक कमरे में रहता हूँ जिसका प्रबन्ध मेरे एक मित्र ने मेरे वियना आने से पहले ही कर दिया था। हमारे मकान के ठीक सामने कैफ़े पीटर है जिसकी ख्याति वियना में फैली हुई है। यहाँ रात्रि को क्या धमा-चौकड़ी होती है सो तो नहीं जानता, लेकिन रात को सोते-सोते अचानक किसी स्त्री के चिल्लाने का स्वर सुनाई देता है और मेरी आँख खुल जाती है। मेरे मित्र ने बतलाया कि जब कोई अधिक पी जाता है तो कैफ़े में काम करने वाली वेश्या को पीटने लगता है और वह चिल्लाती है। इस तरह के वियना में कितने ही कैफ़े और होटल हैं जहाँ कमरे घंटों के हिसाब से दिए जाते हैं।

अक्तूबर की एक सुबह—मैं कातनास्त्रासा के एक कैफ़े में बैठा गरम-गरम कॉफ़ी पी रहा हूँ। कुछ लोग बैठे अख़बार पढ़ रहे हैं, कुछ पुस्तकें और कुछ पत्र लिख रहे हैं या अपनी कापी पर झुके हुए हैं। चारों ओर एक प्रकार की शान्ति फैली है। यह भी वियनी कैफ़ों की अपनी विशेषता है कि यहाँ घंटों बैठ कर एक प्याला कॉफ़ी या एक बीयर के गिलास को अपने सामने रख कर लोग अपनी सारी पढ़ाई-लिखाई करते हैं। पता चला है कि दूसरे युद्ध से पूर्व वियना की संस्कृति का एक बहुत बड़ा भाग कैफ़ों में ही दिखाई देता था जहाँ किसी नई पुस्तक, किसी नये लेखक, किसी नई नाटक अभि-

नेत्री, किसी नये ऑपेरा के विषय में बड़े ज़ोर-शोर से बहस की जाती थी, लेखक अपनी ताज़ा कृतियों को कैफ़ों में बैठ कर अपने मित्रों को सुनाया करते थे। अब वह सब ख़त्म हो गया, केवल उसके कुछ चिन्ह बाक़ी रह गए हैं। मैं जब कभी किसी कैफ़े में बैठता हूँ तो उन पुराने दिनों की कल्पना किया करता हूँ जिन्हें मैंने कभी नहीं देखा।

कालनास्त्रासा पर लोग धूप में चहल-क़दमी कर रहे हैं, कभी-कभी किसी दुकान की शो-विंडो में कोई नई या आकर्षक वस्तु को देख कर क्षण भर के लिए ठिठक जाते हैं परन्तु ख़रीदने की क्षमता कम में ही होती है। ऑपेरा की इमारत के पास यहाँ मैंने वियनीज़ लोगों को खड़े देखा है जो युद्ध में नष्ट हुई इमारत को बनते हुए देखना चाहते हैं। उनकी आँखों में प्रसन्नता और गर्व की एक चमक-सी होती है और साथ-साथ पुरानी स्मृतियों की एक छाया भी होती है। कितनी शामें उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में इस ऑपेरा में बिताई थीं, और जब से युद्ध आरम्भ हुआ तब से कभी इसके बन्द दरवाज़े फिर नहीं खुले। बमों से छतें टूटीं, दीवारें गिरीं और देख-देख कर लोगों के आँसू सूख गए और अगले महीने इतने सालों के बाद फिर ऑपेरा के दरवाज़े खुलने वाले हैं। पहली रात को टिकट के कम से कम दाम १००) रु० के क़रीब हैं और लोग पेरिस, रोम, लन्दन आदि से जहाज़ों में उड़ कर उद्घाटन देखने के लिए आएँगे।

पास ही सेंट स्टीफ़ेन का गिरजा है जो बारहवीं शताब्दी में बना था, आज भी इसके चारों ओर लोग खड़े इस गिरजे की शिल्प-कला की प्रशंसा करते हैं। यह शहर का केन्द्र है।

दो दिनों की लगातार वर्षा और सर्दी के बाद फिर धूप निकली है जिसमें पानी में धुली इमारतें और काली कोलतार की सड़कें चमक रही हैं। वियना में थोड़ी-थोड़ी दूर जाकर कोई गिरजा, कोई पुराना महल, कोई सदियों पुरानी इमारत दिखाई देती है जिससे शहर की संस्कृति और घनी परम्परा का आभास होने लगता है।

मैं सारा दिन शहर, शहर के आस-पास की बस्तियों व संग्रहालयों के निरुद्देश्य चक्कर लगाता रहता हूँ और जब थक जाता हूँ तो किसी कैफ़े में बैठकर स्कैच करने लगता हूँ या अपने मित्रों को पिक्चर-पोस्टकार्ड लिखता हूँ। जीवन में शायद कभी इस तरह से सैर के लिए सैर नहीं की। किताबों की दुकानों में टामस मान शिलर, गेटे, ज़्विग, राबर्ट म्यूज़िल की दस-दस जिल्द बँधी पुस्तकों को देखकर मेरे मुँह में पानी भर आता है परन्तु सब
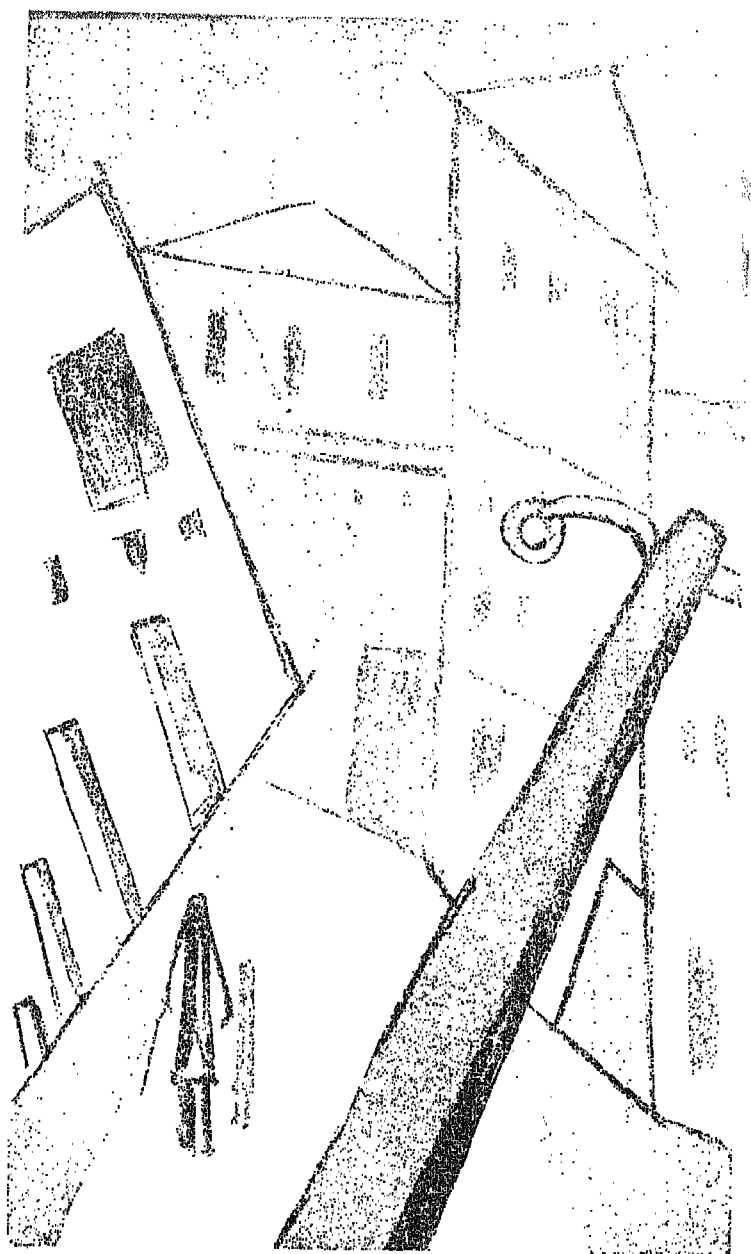
वियना की एक सड़क

जर्मन भाषा में हैं, मैं एक भी पुस्तक खरीद नहीं पाता। मुझे बहुत भारी कोफ्त होती है। जर्मन भाषा सीखने का मोह हो रहा है।

राष्ट्रीय संग्रहालय में पीटर ब्रगेल के १२ अनमोल चित्रों को देख कर मेरी आँखें खुली की खुली रह जाती हैं। दुनियाँ भर में यही एक संग्रहालय है जहाँ ब्रूगेल के १२ चित्र हैं नहीं तो कहीं एक है, कहीं दो। वियना आने का यही सबसे बड़ा आकर्षण था। अलबर्टीना में आठ आने का टिकट खरीद कर दुनिया के किसी भी भाग में छपी कला-पुस्तक या 'रिप्रोडक्शंस' देखी जा सकती है।

अक्तूबर के महीने में इतना खुला आसमान और इतनी उजली धूप कम ही दिखाई देती है, नहीं तो सर्दी आने के पूर्व वर्षा और ठंडी हवा वियनिज लोगों को सर्दी की चेतावनी देना आरम्भ कर देती है। इस मौसम का लाभ उठाने के लिए गाड़ी में बैठकर वियना से लगभग दस मील के अन्तर पर मैं शोनबर्ग आ जाता हूँ। शहर के मुकाबले में कभी-कभी शहर की बस्तियाँ, वहाँ बने छोटे-छोटे कैफ़े और दो मंजिले मकान अधिक आकर्षक जान पड़ते हैं।

शोनबर्ग का आस्ट्रिया में वही स्थान है जो फ्रांस में वर्साई का है। मारी थेरेस यहीं एक महल में रहती थी जब आस्ट्रो-हंगेरियन एम्पायर की दुनिया भर में धाक जमी हुई थी। महल के सामने एक बहुत बड़ा मैदान है, जिसके अन्त में एक बहुत बड़ा फव्वारा है जिसका पानी नीचे तालाब में गिरता है, उसके ऊपर हरी घास का ऊपर उठता हुआ फिर एक मैदान और उसके अन्त में एक छोटी-सी ऊँची इमारत। दोनों ओर सड़कें और दायें-बायें फैले हुए लम्बे-चौड़े जंगल जिनके बीच में लोगों की सैर के लिए पगडंडियाँ बनी हुई हैं। इतने सुन्दर दृश्य जीवन में मनुष्य कम ही देखता है। वर्साई की अपेक्षा शोनबर्ग छोटा होते हुए भी अधिक सुन्दर, अधिक कलात्मक जान पड़ता है। पेड़ों की कतारें इतनी सफाई से काटी हुई हैं जिन्हें देख आसमान से लटकते हरे परदे का आभास होने लगता है। शोनबर्ग इतना सुन्दर होगा, इसकी कभी कल्पना भी नहीं की थी। ऊपर एक खंडहर की चोटी पर चढ़कर वियना दिखाई दे रहा है, पास ही हल्के नीले और हरे रंग की पहाड़ियाँ, वियना के सौन्दर्य को दूना कर रहा हैं। छोटे-छोटे गिरजों की मीनारें, मकानों की चिमनियों से ऊपर उठकर अपना महत्त्व प्रकट करती जान पड़ती हैं।

पास ही बाग में बने एक कैफ़े में मैं भोजन करता हूँ। पेड़ों पर लगे लाउडस्पीकरों से कैफ़े में लगे रेडियो का संगीत धीमे स्वर में हमारे कानों

तक पहुँच रहा है और एक बार कुर्सी पर बैठ कर फिर उससे उठने को जी नहीं चाहता। इसी से जिन लोगों को कोई काम नहीं है, वे अपने पढ़ने-लिखने का सामान यहाँ ले आते हैं और घंटों बैठे रहते हैं। मैं भी बैठा रहता हूँ। मुझे आस्ट्रियन लोग काफी पसन्द हैं। कैफों में बैठने के बहुत शौकीन और बहुत ही मिलनसार। ट्रेन में कंडक्टर से किसी स्थान का पता पूछने पर पास खड़े सभी पूछने वाले को घेर लेते हैं और अपनी टूटी-फूटी अंग्रेजी भाषा में पता समझाने की कोशिश करते हैं। सड़क पर किसी से मार्ग पूछने पर वह अपना रास्ता छोड़कर आप को रास्ता दिखाने लगता है और आप लाख समझाने की कोशिश करें कि आप समझ गए परन्तु वह आप को अकेला नहीं छोड़ेगा।

मैं रेनासाँ बार में रात्रि के भोजन के पश्चात् बैठा 'रेड वाइन' पी रहा हूँ। वियना में अब तीन-चार दिन और रहना है। वियना मेरी यात्रा का अन्तिम पड़ाव है। कितने नये शहर देखे, कितनी नई भाषाओं को सुना, कितने नये परिचय हुए, मेरी डायरी नये-नये नामों और पतों से भर गई है जिन्हें कभी-कभी देख मुझे समझ में नहीं आता कि किस व्यक्ति का कौन-सा पता है। कभी-कभी यह सोच कर मन बहुत विचलित-सा हो जाता है कि अब इन चेहरों को कभी नहीं देख सकूँगा, जिन्दगी में अब इनसे फिर कभी मुलाकात नहीं होगी।

प्यानो, एकोर्डियन, चेलो और वायलिन से निकलता हुआ संगीत मुझ तक पहुँच रहा है। 'लाइम लाइट' की मन को झिंझोड़ देने वाली धुन रेनासाँ बार की दीवारों से टकरा कर गुम होती जा रही है। काउंटर पर अध-पके बालों वाला कोई धनी ग्राहक वेटरेस से हँस-हँस कर बातें कर रहा है और अपने लिए शराब खरीदते समय एक पेग उसके लिए भी खरीदता है और दोनों हँस कर पीते हैं। ज्यादा व्यक्ति नहीं हैं लेकिन जो हैं वे शायद यहाँ रोज़ आते हैं। काले रंग के सूट, कलफ लगी सफेद कमीजें, और काली नकटाई पहने वेटर इधर-उधर घूम रहे हैं और अच्छा पुरस्कार पाने की आशा में अपने ग्राहकों को पूर्ण रूप से सन्तुष्ट करने की कोशिश कर रहे हैं।

एक स्त्री 'टैप नृत्य' करने लगी है। उसके ऊँची एड़ी के जूते से जोर-जोर की ढोलक जैसी आवाज़ निकल रही है। वह युवा है, सुन्दर है और 'बार' में बैठे सब व्यक्तियों की आँखें उसकी ओर लगी हुई हैं। संगीत बजाने वाले भी झूमने लगे हैं। वह थक रही है, उसके माथे पर पसीने की बूँदें छलकने लगी हैं और कुछ देर बाद वह धप से कुर्सी पर आ गिरती है।

लोग तालियाँ बजा रहे हैं।

पेरिस, मास्को, बुदापेस्त, प्राग, काबुल—कितने ही शहरों के चित्र मेरी आँखों के सामने उभर रहे हैं। छोटे-से मन में इतनी बड़ी दुनिया किस प्रकार समा जाती है? किसी दिन एकाकी शामों के सूनेपन में ये सब स्मृतियाँ धुँधली-धुँधली परछाइयाँ बन कर मेरे मन पर मँडराया करेंगी यह मैं जानता हूँ और मैं समुद्र के किनारे सुन्दर-सुन्दर सीपियाँ इकट्ठी करने वाले एक बालक की भाँति इन सब सुन्दर क्षणों को अपनी झोली में डालता जा रहा हूँ।

रात को अपने घर लौटते वक्त मुझे अपना मन भारी-भारी सा जान पड़ता है। ट्राम से उतर कर मैं अपने घर जाने लगता हूँ। सर्दी बहुत बढ़ गई है, मैंने अपने ठिठुरते दोनों हाथ पेंट की जेबों में डाल लिए हैं, तभी सड़क के नुक्कड़ पर एक कैफे के बाहर शराब के नशे में चूर एक युवक को कैफे के बन्द दरवाज़े ज़ोर-ज़ोर से खटखटाते हुए देखता हूँ। क्षण भर के लिए पाँव रुक जाते हैं, अन्दर केवल एक बत्ती जल रही है। एक मोटासा वेटर दरवाज़ा खोलता है, क्रोध से उसका चेहरा लाल है, वह उस युवक को तीन-चार थप्पड़ लगाता है लेकिन फिर भी वह युवक अन्दर घुसने के लिए हठ कर रहा है, उसे धक्का देकर वेटर दरवाज़ा बन्द कर लेता है। युवक की दो-तीन उँगलियाँ दरवाज़े के अन्दर भिंच जाती हैं और उसके ओठों से एक हल्की-सी चीत्कार निकलती है। मैं आगे बढ़ जाता हूँ। रात को कैफों में युवक क्या करते हैं, कितना पीते हैं, उनका नैतिक पतन कहाँ तक हुआ है, वह सब मैं नहीं जानता लेकिन इस प्रकार के दृश्य देख कर थोड़ा-बहुत आभास अवश्य लग जाता है।

वियना में एक और महत्त्वपूर्ण बात यह दिखाई देती है कि स्थान-स्थान पर दुनिया भर के प्रसिद्ध लेखकों, कलाकारों, संगीतकारों आदि की मूर्त्तियाँ बनी हुई हैं। अगर कहीं मोजार्ट कैफे और बीथोवाँ रेस्तराँ दिखाई देते हैं तो कहीं हैंडल स्क्वैयर, गेटे स्ट्रीट के बोर्ड पढ़े जा सकते हैं। प्रसिद्ध कलाकारों के नाम दिन में कई बार लेने पर आम लोगों को इन कलाकारों की कृतियों में स्वाभाविकतः दिलचस्पी हो जाती है। मोजार्ट, बीथोवाँ, गेटे, शिलर आदि के संग्रहालय हैं और उनसे सम्बन्धित ऐसे कितने ही मकान और पार्क हैं जिससे उनकी स्मृति हमेशा ताज़ी बनी रहती है। प्रसिद्ध ऑपेरा, नाटक और म्यूज़िक कंसर्ट के बड़े-बड़े इश्तिहार शहर की दीवारों पर चिपके रहते हैं और राह चलते आम लोग भी अपने काम से लौटते समय इन इश्तिहारों

को पढ़ कर अपने प्रोग्राम निश्चित करते हैं। किसी नये नाटक या ऑपेरा का उद्‌घाटन शहर की जिन्दगी की एक महत्त्वपूर्ण घटना होती है। यह आज की बात नहीं, इसके पीछे शहर की कलात्मक परम्परा है। कितने ही बुद्धि-जीवियों ने अपनी कला के सृजन से इस जीवन को धनी बनाया है। और आज राजनीतिक दाँव-पेंचों का शिकार बनने के बावजूद भी, पुरानी जिन्दगी के इतने छिन्न-भिन्न हो जाने पर भी एक आस्ट्रियन कभी कला के प्रति उदासीन नहीं रह सकता।

मैं डेन्यूब की नहर के साथ-साथ चला जा रहा हूँ। सड़क पर अन-गिनत मोटरें, बसें, ट्रामें भागी जा रही हैं। सामने वियना की पहाड़ियाँ सूर्य की उजली धूप में चमक रही हैं। डेन्यूब के किनारे लगे ऊँचे-ऊँचे पेड़ों की पत्तियों पर पीलापन छाने लगा है। जब हवा तेज चलती है तो पेड़ों की शाखाएँ झूमने लगती हैं। मेरे विचार इधर-उधर दौड़ रहे हैं, कहीं ठिकाना नहीं पाते। कभी-कभी ऐसा जान पड़ता है कि हमारे जीवन का कितना मूल्य है। इतना सौन्दर्य, इतना सन्तोष मिल सकता है जिससे हमारी जिन्दगी की कीमत बहुत बढ़ जाती है। सोचता हूँ कि मैं इस क्षण मरना नहीं चाहूँगा, जिन्दगी की सब समस्याएँ, सब उलझनें मुझे केवल मन का धोखा जान पड़ती हैं। ऐसे कुछ क्षण जीवन के प्रति कितना प्यार, कितना उत्साह जगा देते हैं। मेरे कानों में बाक की एक धुन गूँजने लगती है। केवल यही नहीं सब शहरों के निवासी अपने शहर से अपार प्रेम और लगाव रखते हैं। उनके सामने उनके शहर की प्रशंसा करने से उनकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता। अपने संग्रहालय, अपने गिरजे, अपनी कला, अपनी सड़कों, अपनी नदी की बातें करते समय गर्व से उनका मस्तक ऊँचा हो जाता है। वास्तव में उनकी खुशी में वास्तविकता का पुट होता है। संगीत, साहित्य और कला का दर्जा उद्योगों से कहीं ऊँचा होता है। कभी-कभी सोचता हूँ कि हमें भी अपने अजन्ता और एलोरा, ताजमहल और जामा मस्जिद, तुलसीदास और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की बातें करते समय गर्व महसूस होता है लेकिन फिर भी हमारे दिल से उतने जोर से वह आवाज नहीं निकलती जितनी यहाँ सुनाई देती है। युद्ध के खतरे की बात करते समय लुब्र और नोत्रेदाम, सेंट पीटर और सेंट स्टीफ़ेन के नष्ट होने का भय लोगों को उनकी जड़ों तक सिहरा देता है।

मैं धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा हूँ। वियना भी काफ़ी विश्व-विख्यात है, धूप में बने एक कैफ़े में बैठ कर मैं एक प्याला गरम-गरम कॉफ़ी का पीता हूँ।

सामने वही ऊँची-नीची रेखा बनाती हुई पहाड़ियाँ हैं, डेन्यूब में एक नाव पर एक पुरुष और एक स्त्री धीरे-धीरे पानी के रुख के साथ बहे जा रहे हैं। मुझे बीथोवाँ का 'ब्लू डेन्यूब' याद आता है लेकिन इन सब भावनाओं के लिए अधिक समय नहीं है। मुझे स्टेशन जाना है, पेरिस के लिए गाड़ी पकड़नी है, लेकिन न जाने कौन-सी शक्ति मुझे क़ैफे की कुर्सी के साथ बाँधे हुए है।